॥ श्रीहरिः ॥ 2024

गणेशस्तोत्ररत्नाकर

गीताप्रेस, गोरखपुर

॥ श्रीहरिः ॥ 2024

गणेशस्तोत्ररत्नाकर

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

गीताप्रेस, गोरखपुर

सं० २०७९ बारहवाँ पुनर्मुद्रण ४,०००
कुल मुद्रण ५६,०००

❖ मूल्य—₹ 50
(पचास रुपये)

कूरियर/डाकसे मँगवानेके लिये
गीताप्रेस, गोरखपुर—273005
www.gitapress.org
gitapressbookshop.in

प्रकाशक एवं मुद्रक—
गीताप्रेस, गोरखपुर
(गोबिन्दभवन-कार्यालय, कोलकाता का संस्थान)
मो० नं० : +91-8188054403, 8188054408
web : gitapress.org e-mail : booksales@gitapress.org

निवेदन

ॐकारमाद्यं प्रवदन्ति सन्तो वाचः श्रुतीनामपि यं गृणन्ति।
गजाननं देवगणानताङ्घ्रिं भजेऽहमर्धेन्दुकृतावतंसम्॥

'सन्त-महात्मा जिन्हें आदि ओंकार बताते हैं, श्रुतियोंकी वाणियाँ भी जिनका स्तवन करती हैं, समस्त देवसमुदाय जिनके चरणारविन्दोंमें प्रणत होता है तथा अर्धचन्द्र जिनके भालदेशका आभूषण है, उन भगवान् गजाननका मैं भजन करता हूँ।'

सनातन वैदिक हिन्दू-धर्मके उपास्य देवताओंमें भगवान् श्रीगणेशका असाधारण महत्त्व है। किसी भी धार्मिक अथवा मांगलिक कार्यका आरम्भ बिना उनकी पूजाके नहीं होता। इतना ही नहीं किसी भी देवताके पूजन और उत्सव-महोत्सवका प्रारम्भ करते ही सर्वप्रथम महागणपतिका स्मरण और उनका पूजन करना अनिवार्य है। इतना महत्त्व अन्य किसी देवताको प्राप्त नहीं होता।

गणेश शब्दका अर्थ है—गणोंके स्वामी। हमारे शरीरमें पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ और अन्तःकरणचतुष्टय (मन, बुद्धि, चित्त एवं अहंकार)— इनके पीछे जो शक्तियाँ हैं, वे चौदह अधिष्ठात्री देवता कहे जाते हैं। इन देवताओंके मूल प्रेरक हैं भगवान् श्रीगणेश। वस्तुतः भगवान् गणपति शब्दब्रह्म—ॐकारस्वरूप हैं, वे सर्वशक्तिमान्, सर्वज्ञ और सर्वव्यापी हैं। श्रीगणपत्यथर्वशीर्षमें कहा गया है कि ओंकारका ही व्यक्त स्वरूप गणपति देवता हैं। मुद्‌गलपुराणमें भी गणेशजीको ओंकारस्वरूप ही बताया गया है—'ॐ इति शब्दोऽभूत्, स वै गजाकारः।' **आदिशंकराचार्यने भी भगवान् श्रीगणेशकी वेदगर्भ ओंकाररूपमें वन्दना की है—**

यमेकाक्षरं निर्मलं निर्विकल्पं गुणातीतमानन्दमाकारशून्यम्।
परं पारमोङ्कारमाम्नायगर्भं वदन्ति प्रगल्भं पुराणं तमीडे॥

(गणेशभुजंगम् ७)

'जिन्हें ज्ञानीजन एकाक्षर (प्रणवरूप), निर्मल, निर्विकल्प, गुणातीत,

आनन्दस्वरूप, निराकार, परमपार एवं वेदगर्भ ओंकार कहते हैं, उन प्रगल्भ पुराणस्वरूप गणेशका मैं स्तवन करता हूँ।'

जिस प्रकार प्रत्येक वेदमन्त्रके आरम्भमें ओंकारका उच्चारण आवश्यक है, उसी प्रकार प्रत्येक शुभ अवसरपर ओंकारके व्यक्त स्वरूप भगवान् श्रीगणपतिका स्मरण एवं पूजन अनिवार्य है। यह परम्परा शास्त्रीय है। ऋग्वेदमें श्रीगणपतिकी स्तुति करते हुए कहा गया है—'आपके बिना कोई भी कर्म नहीं किया जाता—न ऋते त्वत्क्रियते किञ्चन (१०।११२।९)।' वैदिक धर्मान्तर्गत समस्त उपासनासम्प्रदायोंने इस प्राचीन परम्पराको स्वीकारकर इसका अनुसरण किया है। श्रीरामचरितमानसमें गोस्वामी तुलसीदासजीने भी लिखा है—

महिमा जासु जान गनराऊ। प्रथम पूजिअत नाम प्रभाऊ॥

(बालकाण्ड १८।२)

कुछ लोग शंका करते हैं—गणेश तो शिवजीके पुत्र हैं, शिवविवाहके समय उनकी उपस्थिति सम्भव नहीं प्रतीत होती, फिर उनका पूजन वहाँ कैसे हुआ ? वस्तुतः इस प्रकारकी शंकाएँ गणेश-तत्त्वको न समझनेके कारण ही उत्पन्न होती हैं। वास्तवमें भगवान् गणेश किसीके पुत्र नहीं, वे अजन्मा, अनादि एवं अनन्त हैं। शिवजीके पुत्र गणेश परमात्मस्वरूप गणपतिके अवतार हैं। उसी प्रकार राम, कृष्ण, नरसिंह, वामन, हयग्रीव इत्यादि अनादि विष्णुके अवतार माने जाते हैं।

गौरीनन्दन, गिरिजानन्दन, शिवतनय इत्यादि नामोंको सार्थक करते हुए जो आदि तथा अन्तसे परे हैं, वे भगवान् गणेश भक्तजनोंके द्वारा सर्वप्रथम पूजित एवं वन्दित होकर विघ्न-बाधाओंका निराकरण करते हुए सदैव कल्याण ही करते हैं। गणेशतत्त्व, विष्णुतत्त्व, शिवतत्त्व इत्यादिमें भी तत्त्वतः परस्पर भेद नहीं है। स्वयं श्रीगणेशजीने कहा है—

अहं विष्णुश्च रुद्रश्च ब्रह्मा गौरी गणेश्वरः।
इन्द्राद्या लोकपालाश्च ममैवांशसमुद्भवाः॥

(गणेशगीता ९।३९)

'मैं ही विष्णु, रुद्र, ब्रह्मा, गौरी और गणपति हूँ, इन्द्रादि देवता तथा लोकपाल मेरे ही अंशसे उत्पन्न हुए हैं।'

गणेशतत्त्व अगाध है, अनिर्वचनीय है। वही नाना रूपोंमें भासित हो रहा है। उसका सम्पूर्ण निरूपण कोई कैसे कर सकता है! पर मनुष्य विनय-भक्तिसम्पन्न होनेपर बालबुद्धिद्वारा उनकी स्तुतिका प्रयास अवश्य कर सकता है। गणेशमहिम्नःस्तोत्रमें श्रीपुष्पदन्ताचार्यजीने अत्यन्त सुन्दरतासे कुछ इसी प्रकारके भावोंको व्यक्त किया है, जिसे उक्त स्तोत्रमें देखा जा सकता है।

इतिहास, पुराण एवं तन्त्रागमों तथा अन्यान्य काव्यग्रन्थोंमें गणेशवन्दनाका अत्यन्त विस्तृत स्तोत्रसाहित्य तो प्राप्त है ही, साथ ही प्रथम पूज्य होनेसे प्रायः सभी महाकवियोंने मंगलाचरणके रूपमें अत्यन्त भावपूर्ण एवं सुन्दर गणेश-वन्दनाकी रचना की है। भगवान् श्रीगणपतिके स्तोत्रसाहित्यका कोई बड़ा संकलन प्रायः देखनेमें नहीं आता, जबकि गणेशभक्तोंमें इसकी महती आवश्यकता अनुभव की जाती रही है। गणेशजीके भक्तिपूर्वक भजनकी महिमा स्वयं उनके श्रीमुखसे इस प्रकार वर्णित है—

भजन् भक्त्या विहीनो यः स चाण्डालोऽभिधीयते।
चाण्डालोऽपि भजन् भक्त्या ब्राह्मणेभ्योऽधिको मम॥

(गणेशगीता ९।८)

'जो भक्तिविहीन होकर भजन करता है, वह चाण्डाल है और जो जन्मसे चाण्डाल होकर भी मेरा भक्तिपूर्वक भजन करता है, वह उस ब्राह्मणसे श्रेष्ठ है।'

इन्हीं बातोंको ध्यानमें रखते हुए गीताप्रेसद्वारा प्रमुख गणेश-स्तोत्रोंको एकत्रकर उन्हें हिन्दी-अनुवादके साथ पुस्तकरूपमें प्रकाशित करनेका निर्णय लिया गया है। पूर्वमें प्रकाशित शिवस्तोत्र-रत्नाकर, देवीस्तोत्र-रत्नाकरके क्रममें अब गणेशस्तोत्र-रत्नाकरको प्रकाशित किया जा रहा है।

आशा है, भक्तहृदय स्तोत्ररसज्ञ पाठक इस संकलनके माध्यमसे मंगलमूर्ति गणेशजीका स्तवनकर कृतार्थ होंगे।

—राधेश्याम खेमका

॥ श्रीहरिः ॥

विषय-सूची

विषय		पृष्ठाङ्क

आरती एवं भजन

श्रीगणेशजीके विभिन्न स्वरूपोंका ध्यान

भगवान् गणेश

सिन्दूरवर्णं द्विभुजं गणेशं
लम्बोदरं पद्मदले निविष्टम्।
ब्रह्मादिदेवैः परिसेव्यमानं
सिद्धैर्युतं तं प्रणमामि देवम्॥

सच्चिदानन्दमय भगवान् गणेशकी अंगकान्ति सिन्दूरके समान है, उनकी दो भुजाएँ हैं, वे लम्बोदर हैं और कमलदलपर विराजमान हैं। ब्रह्मा आदि देवता उनकी सेवामें लगे हैं तथा वे सिद्धसमुदायसे युक्त हैं, ऐसे श्रीगणपतिदेवको मैं प्रणाम करता हूँ।

गजवक्त्र

अविरलमदधाराधौतकुम्भः शरण्यः
फणिवरवृतगात्रः सिद्धसाध्यादिवन्द्यः।
त्रिभुवनजनविघ्नध्वान्तविध्वंसदक्षो
वितरतु गजवक्त्रः संततं मङ्गलं वः॥

जिनका कुम्भस्थल निरन्तर बहनेवाली मदधारासे धुला हुआ है; जो सबके शरणदाता हैं; जिनके शरीरमें बड़े-बड़े सर्प लिपटे रहते हैं; जो सिद्ध और साध्य आदि देवताओंके वन्दनीय हैं तथा तीनों लोकोंके निवासी-जनोंके विघ्नान्धकारका विध्वंस करनेमें दक्ष (चतुर) हैं, वे गजानन गणेश आपलोगोंको सदा मंगल प्रदान करें।

महागणपति

ओङ्कारसंनिभमिभाननमिन्दुभालं
मुक्ताग्रबिन्दुममलद्युतिमेकदन्तम्।
लम्बोदरं कलचतुर्भुजमादिदेवं
ध्यायेन्महागणपतिं मतिसिद्धिकान्तम्॥

ओंकार-सदृश, हाथीके-से मुखवाले तथा जिनके ललाटपर चन्द्रमा

और बिन्दुतुल्य मुक्ता विराजमान है, जो बड़े तेजस्वी और एक दाँतवाले हैं, जिनका उदर लम्बायमान है, जिनकी चार सुन्दर भुजाएँ हैं, उन बुद्धि और सिद्धिके स्वामी आदिदेव गणेशजीका हम ध्यान करते हैं।

विघ्नेश्वर

विघ्नध्वान्तनिवारणैकतरणिर्विघ्नाटवीहव्यवाड्
विघ्नव्यालकुलाभिमानगरुडो विघ्नेभपञ्चाननः।
विघ्नोत्तुंगगिरिप्रभेदनपविर्विघ्नाम्बुधौ वाडवो
विघ्नाघौघघनप्रचण्डपवनो विघ्नेश्वरः पातु वः॥

वे विघ्नेश्वर आपलोगोंकी रक्षा करें, जो विघ्नान्धकारका निवारण करनेके लिये एकमात्र सूर्य हैं, विघ्नरूपी विपिनको जलाकर भस्म करनेके लिये दावानलरूप हैं, विघ्नरूपी सर्पकुलके अभिमानको कुचल डालनेके लिये गरुड़ हैं, विघ्नरूपी गजराजको पछाड़नेके लिये सिंह हैं, विघ्नोंके ऊँचे पर्वतका भेदन करनेके लिये वज्र हैं, विघ्न-समुद्रके लिये वड़वानल हैं तथा विघ्न एवं पाप समूहरूपी मेघोंकी घटाको छिन्न-भिन्न करनेके लिये प्रचण्ड पवन हैं।

गणपति

सिन्दूराभं त्रिनेत्रं पृथुतरजठरं हस्तपद्मैर्दधानं
दन्तं पाशाङ्कुशेष्टान्युरुकरविलसद् बीजपूराभिरामम्।
बालेन्दुद्योतमौलिं करिपतिवदनं दानपूरार्द्रगण्डं
भोगीन्द्राबद्धभूषं भजत गणपतिं रक्तवस्त्राङ्गरागम्॥

जो सिन्दूरकी-सी अंगकान्ति धारण करनेवाले और त्रिनेत्रधारी हैं; जिनका उदर बहुत विशाल है; जो अपने चार हस्त-कमलोंमें दन्त, पाश, अंकुश और वर-मुद्रा धारण करते हैं; जिनके विशाल शुण्ड-दण्डमें बीजपूर (बिजौरा नीबू या अनार) शोभा दे रहा है; जिनका मस्तक बालचन्द्रसे दीप्तिमान् और गण्डस्थल मदके प्रवाहसे आर्द्र है; नागराजको जिन्होंने भूषणके रूपमें धारण किया है तथा जो लाल वस्त्र और अरुण अंगरागसे सुशोभित हैं, उन गजेन्द्र-वदन गणपतिका भजन करो।

एकाक्षरगणपति

रक्तो रक्ताङ्गरागांशुककुसुमयुतस्तुन्दिलश्चन्द्रमौलि-
र्नेत्रैर्युक्तस्त्रिभिर्वामनकरचरणो बीजपूरान्तनासः।
हस्ताग्राक्लृप्तपाशांकुशरदवरदो नागवक्त्रोऽहिभूषो
देवः पद्मासनो वो भवतु नतसुरो भूतये विघ्नराजः॥

वे विघ्ननाशक श्रीगणपति शरीरसे रक्तवर्णके हैं। उन्होंने लाल रंगके ही अंगराग, वस्त्र और पुष्पहार धारण कर रखे हैं। वे लम्बोदर हैं; उनके मस्तकपर चन्द्राकार मुकुट है; उनके तीन नेत्र हैं और हाथ-पैर छोटे-छोटे हैं; उन्होंने शुण्डाग्रभागमें बीजपूर (बिजौरा नीबू) ले रखा है; उनके हस्ताग्रभागमें पाश, अंकुश, दन्त तथा वरद (मुद्रा) सुशोभित हैं; उनका मुख गजके समान है और सर्पमय आभूषण धारण किये हैं। वे कमलके आसनपर विराजमान हैं और समस्त देवता उनके चरणोंमें नतमस्तक हैं; ऐसे विघ्नराजदेव आपलोगोंके लिये कल्याणकारी हों।

हेरम्बगणपति

मुक्ताकाञ्चननीलकुन्दघुसृणच्छायैस्त्रिनेत्रान्वितै-
र्नागास्यैर्हरिवाहनं शशिधरं हेरम्बमर्कप्रभम्।
दृप्तं दानमभीतिमोदकरदान् टङ्कं शिरोऽक्षात्मिकां
मालां मुद्गरमङ्कुशं त्रिशिखिकं दोर्भिर्दधानं भजे॥

हेरम्बगणपति पाँच हस्तिमुखोंसे युक्त हैं। चार हस्तिमुख चारों ओर और एक ऊर्ध्व दिशामें हैं। उनका ऊर्ध्व हस्तिमुख मुक्तावर्णका है। दूसरे चार हस्तिमुख क्रमशः कांचन, नील, कुन्द (श्वेत) और कुंकुमवर्णके हैं। प्रत्येक हस्तिमुख तीन नेत्रोंवाला है। वे सिंहवाहन हैं। उनके कपालमें चन्द्रिका विराजित है और देहकी कान्ति सूर्यके समान प्रभायुक्त है। वे बलदृप्त हैं और अपनी दस भुजाओंमें वर और अभयमुद्रा तथा क्रमशः मोदक, दन्त, टंक, सिर, अक्षमाला, मुद्गर, अंकुश और त्रिशूल धारण करते हैं। मैं उन भगवान् हेरम्बका भजन करता हूँ।

सिंहगणपति

वीणां कल्पलतामरिं च वरदं दक्षे विधत्ते करै-
र्वामे तामरसं च रत्नकलशं सन्मञ्जरीं चाभयम्।
शुण्डादण्डलसन्मृगेन्द्रवदनः शङ्खेन्दुगौरः शुभो
दीव्यद्रत्ननिभांशुको गणपतिः पायादपायात् स नः॥

जो दायें हाथोंमें वीणा, कल्पलता, चक्र तथा वरद (मुद्रा) धारण करते हैं और बायें हाथोंमें कमल, रत्नकलश, सुन्दर धान्य-मंजरी एवं अभय मुद्रा धारण किये हुए हैं, जिनका सिंहसदृश मुख शुण्डादण्डसे सुशोभित है, जो शंख और चन्द्रमाके समान गौरवर्ण हैं तथा जिनका वस्त्र दिव्य रत्नोंके समान दीप्तिमान् है, वे शुभस्वरूप (मंगलमय) गणपति हमको अपाय (विनाश)-से बचायें।

बालगणपति

क्रोडं तातस्य गच्छन् विशदबिसधिया शावकं शीतभानो-
राकर्षन् बालवैश्वानरनिशितशिखारोचिषा तप्यमानः।
गङ्गाम्भः पातुमिच्छन् भुजगपतिफणाफूत्कृतैर्दूयमानो
मात्रा सम्बोध्य नीतो दुरितमपनयेद् बालवेषो गणेशः॥

बालक गणेशजी अपने पिता शंकरजीके मस्तकपर सुशोभित बाल चन्द्रकलाको कमलनाल समझकर उसे खींच लानेके लिये उनकी गोदमें चढ़कर ऊपर लपके; लेकिन तृतीय नेत्रसे निकली लपटोंकी आँच लगी, तब जटाजूटमें बहनेवाली गंगाका जल पीनेको बढ़े तो सर्प फुफकार उठा। इस फुफकारसे घबराये हुए गणेशको माता पार्वती बहला-फुसलाकर अपने साथ ले गयीं। ऐसे बाल गणेश हमारे सब पाप-तापका निवारण करें।

श्रीगणेशप्रातःस्मरणस्तोत्रम्

प्रातः स्मरामि गणनाथमनाथबन्धुं
सिन्दूरपूरपरिशोभितगण्डयुग्मम् ।
उद्दण्डविघ्नपरिखण्डनचण्डदण्ड-
माखण्डलादिसुरनायकवृन्दवन्द्यम् ॥ १ ॥
प्रातर्नमामि चतुराननवन्द्यमान-
मिच्छानुकूलमखिलं च वरं ददानम्।
तं तुन्दिलं द्विरसनाधिपयज्ञसूत्रं
पुत्रं विलासचतुरं शिवयोः शिवाय॥ २ ॥
प्रातर्भजाम्यभयदं खलु भक्तशोक-
दावानलं गणविभुं वरकुञ्जरास्यम्।
अज्ञानकाननविनाशनहव्यवाह-
मुत्साहवर्धनमहं सुतमीश्वरस्य॥ ३ ॥

जो इन्द्र आदि देवेश्वरोंके समूहसे वन्दनीय हैं, अनाथोंके बन्धु हैं, जिनके युगल कपोल सिन्दूरराशिसे अनुरञ्जित हैं, जो उद्दण्ड (प्रबल) विघ्नोंका खण्डन करनेके लिये प्रचण्ड दण्डस्वरूप हैं; उन श्रीगणेशजीका मैं प्रातःकाल स्मरण करता हूँ॥ १ ॥

जो ब्रह्मासे वन्दनीय हैं, अपने सेवकको उसकी इच्छाके अनुकूल पूर्ण वरदान देनेवाले हैं, तुन्दिल हैं, सर्प ही जिनका यज्ञोपवीत है, उन क्रीडाकुशल शिव-पार्वतीके पुत्र (श्रीगणेशजी)-को मैं कल्याण-प्राप्तिके लिये प्रातःकाल नमस्कार करता हूँ॥ २ ॥

जो अपने जनको अभय प्रदान करनेवाले हैं, भक्तोंके शोकरूप वनके लिये दावानल (वनाग्नि) हैं, गणोंके नायक हैं, जिनका मुख श्रेष्ठ हाथीके समान है और जो अज्ञानरूप वनको नष्ट करने (जलाने)-के लिये अग्नि हैं; उन उत्साह बढ़ानेवाले शिवसुत (श्रीगणेशजी)-को मैं प्रातःकाल भजता हूँ॥ ३ ॥

श्लोकत्रयमिदं पुण्यं सदा साम्राज्यदायकम्।
प्रातरुत्थाय सततं यः पठेत्प्रयतः पुमान्॥ ४॥

॥ इति श्रीगणेशप्रातःस्मरणस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

जो पुरुष प्रातःसमय उठकर संयतचित्तसे इन तीनों पवित्र श्लोकोंका नित्य पाठ करता है, उसको यह स्तोत्र सर्वदा साम्राज्य प्रदान करता है॥ ४॥

॥ इस प्रकार श्रीगणेशप्रातःस्मरणस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणेशद्वादशनामस्तोत्रम्

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः॥ १॥
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि॥ २॥
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा।
संग्रामे सङ्कटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते॥ ३॥

॥ इति श्रीगणेशद्वादशनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

सुमुख, एकदन्त, कपिल, गजकर्ण, लम्बोदर, विकट, विघ्ननाशक, विनायक, धूम्रकेतु, गणाध्यक्ष, भालचन्द्र और गजानन—ये गणेशजीके बारह नाम हैं। जो मनुष्य विद्यारम्भ, विवाह, गृहप्रवेश, यात्रा, संग्राम (युद्ध) तथा संकटके अवसरपर इन नामोंका पाठ अथवा श्रवण करता है, उसके कार्यमें विघ्न उत्पन्न नहीं होता है॥ १—३॥

॥ इस प्रकार श्रीगणेशद्वादशनामस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीसङ्कटनाशनगणेशस्तोत्रम्

नारद उवाच

प्रणम्य शिरसा देवं गौरीपुत्रं विनायकम्।
भक्तावासं स्मरेन्नित्यमायुःकामार्थसिद्धये॥ १॥
प्रथमं वक्रतुण्डं च एकदन्तं द्वितीयकम्।
तृतीयं कृष्णपिङ्गाक्षं गजवक्त्रं चतुर्थकम्॥ २॥
लम्बोदरं पञ्चमं च षष्ठं विकटमेव च।
सप्तमं विघ्नराजं च धूम्रवर्णं तथाष्टमम्॥ ३॥
नवमं भालचन्द्रं च दशमं तु विनायकम्।
एकादशं गणपतिं द्वादशं तु गजाननम्॥ ४॥
द्वादशैतानि नामानि त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नरः।
न च विघ्नभयं तस्य सर्वसिद्धिकरं प्रभो॥ ५॥

नारदजी बोले—पार्वतीनन्दन देवदेव श्रीगणेशजीको सिर झुकाकर प्रणाम करके अपनी आयु, कामना और अर्थकी सिद्धिके लिये उन भक्तनिवासका नित्यप्रति स्मरण करे॥ १॥

पहला वक्रतुण्ड (टेढ़ी सूंडवाले), दूसरा एकदन्त (एक दाँतवाले), तीसरा कृष्णपिङ्गाक्ष (काली और भूरी आँखोंवाले), चौथा गजवक्त्र (हाथीके समान मुखवाले), पाँचवाँ लम्बोदर (बड़े पेटवाले), छठा विकट (विकराल), सातवाँ विघ्नराजेन्द्र (विघ्नोंका शासन करनेवाले राजाधिराज), आठवाँ धूम्रवर्ण (धूसर वर्णवाले), नवाँ भालचन्द्र (जिसके ललाटपर चन्द्रमा सुशोभित है), दसवाँ विनायक, ग्यारहवाँ गणपति और बारहवाँ गजानन—इन बारह नामोंका जो पुरुष तीनों सन्ध्याओं (प्रातः, मध्याह्न और सायंकाल)-में पाठ करता है, हे प्रभो! उसे किसी प्रकारके विघ्नका भय नहीं रहता; इस प्रकारका स्मरण सभी सिद्धियाँ देनेवाला है॥ २—५॥

विद्यार्थी लभते विद्यां धनार्थी लभते धनम्।
पुत्रार्थी लभते पुत्रान्मोक्षार्थी लभते गतिम्॥ ६॥
जपेद् गणपतिस्तोत्रं षड्भिर्मासैः फलं लभेत्।
संवत्सरेण सिद्धिं च लभते नात्र संशयः॥ ७॥
अष्टभ्यो ब्राह्मणेभ्यश्च लिखित्वा यः समर्पयेत्।
तस्य विद्या भवेत्सर्वा गणेशस्य प्रसादतः॥ ८॥

॥ इति श्रीनारदपुराणे श्रीसङ्कटनाशनगणेशस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

इससे विद्याभिलाषी विद्या, धनाभिलाषी धन, पुत्रेच्छु पुत्र तथा मुमुक्षु मोक्षगति प्राप्त कर लेता है॥ ६॥

जो इस गणपतिस्तोत्रका जप करता है, उसे छः मासमें इच्छित फल प्राप्त हो जाता है तथा एक वर्षमें पूर्ण सिद्धि प्राप्त हो जाती है; इसमें किसी प्रकारका सन्देह नहीं है॥ ७॥

जो पुरुष इसे लिखकर आठ ब्राह्मणोंको समर्पण करता है, गणेशजीकी कृपासे उसे सब प्रकारकी विद्या प्राप्त हो जाती है॥ ८॥

॥ इस प्रकार श्रीनारदपुराणमें श्रीसंकटनाशनगणेशस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

एकदन्त, गजवदन, चतुर्भुज, गणनायक विघ्नेश।
जय-जय भव-भय-हर लम्बोदर, मङ्गलमय देवेश॥

[पदरत्नाकर]

श्रीसङ्कटनाशनगणेशस्तोत्रम्

देवा ऊचुः

नमो नमस्ते परमार्थरूप
नमो नमस्तेऽखिलकारणाय।
नमो नमस्तेऽखिलकारकाय
सर्वेन्द्रियाणामधिवासिनेऽपि ॥ १ ॥

नमो नमो भूतमयाय तेऽस्तु
नमो नमो भूतकृते सुरेश।
नमो नमः सर्वधियां प्रबोध
नमो नमो विश्वलयोद्भवाय॥ २॥

नमो नमो विश्वभृतेऽखिलेश
नमो नमः कारणकारणाय।
नमो नमो वेदविदामदृश्य
नमो नमः सर्ववरप्रदाय॥ ३॥

देवता बोले—हे परमार्थस्वरूप! आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप सबके कारण हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप सबके कर्ता हैं, आपको नमस्कार है। आप सब इन्द्रियोंमें निवास करते हैं, आपको नमस्कार है॥ १॥

आप समस्त प्राणिमय हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है। हे सुरेश! आप भूत-सृष्टिके कर्ता और संहारक हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप समस्त बुद्धियोंके प्रबोधरूप हैं, संसारकी उत्पत्ति और लय करनेवाले हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है॥ २॥

हे अखिलेश! आप विश्वके पालक हैं, कारणोंके भी कारण हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप वेदज्ञोंके लिये भी अदृश्य हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप सबको वर देनेवाले हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है॥ ३॥

नमो नमो वागविचारभूत
नमो नमो विघ्ननिवारणाय।
नमो नमोऽभक्तमनोरथघ्ने
नमो नमो भक्तमनोरथज्ञ॥ ४॥
नमो नमो भक्तमनोरथेश
नमो नमो विश्वविधानदक्ष।
नमो नमो दैत्यविनाशहेतो
नमो नमः सङ्कटनाशकाय॥ ५॥
नमो नमः कारुणिकोत्तमाय
नमो नमो ज्ञानमयाय तेऽस्तु।

आप वाणीके विचारसे परे हैं—वाणीसे आपके स्वरूपका कथन नहीं किया जा सकता; आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप विघ्नोंका निवारण करते हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप अभक्तके मनोरथको नष्ट करनेवाले हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप भक्तोंके मनोरथोंको जाननेवाले हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है॥ ४॥

आप भक्तोंके मनोरथोंके स्वामी हैं, उनके मनोरथोंको सिद्ध करनेवाले हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप विश्वकी सृष्टि करनेमें कुशल हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप दैत्योंके विनाशके कारण हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप संकटोंको नष्ट करनेवाले हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है॥ ५॥

आप करुणा करनेवालोंमें सर्वश्रेष्ठ हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आपका स्वरूप ज्ञानमय है; आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप

नमो नमोऽज्ञानविनाशनाय
नमो नमो भक्तविभूतिदाय॥ ६ ॥
नमो नमोऽभक्तविभूतिहन्त्रे
नमो नमो भक्तविमोचनाय।
नमो नमोऽभक्तविबन्धनाय
नमो नमस्ते प्रविभक्तमूर्ते॥ ७ ॥
नमो नमस्तत्त्वविबोधकाय
नमो नमस्तत्त्वविदुत्तमाय।
नमो नमस्तेऽखिलकर्मसाक्षिणे
नमो नमस्ते गुणनायकाय॥ ८ ॥

अज्ञानको नष्ट करनेवाले हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप भक्तोंको ऐश्वर्य प्रदान करते हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है॥ ६ ॥

आप अभक्तोंका ऐश्वर्य नष्ट करनेवाले हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप भक्तोंको मुक्ति देनेवाले हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप अभक्तोंको बन्धनमें डालनेवाले हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप पृथक्-पृथक् मूर्तिमें व्याप्त हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है॥ ७ ॥

आप तत्त्वबोध करानेवाले हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप तत्त्वज्ञोंमें सर्वश्रेष्ठ हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप समस्त कर्मोंके साक्षी हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप गुणोंके स्वामी हैं; आपको नमस्कार है, नमस्कार है॥ ८ ॥

गणेश उवाच

भवत्कृतमिदं स्तोत्रमतिप्रीतिकरं मम।
सङ्कष्टनाशनमिति विख्यातं च भविष्यति॥ ९॥
पठतां शृण्वतां चैव सर्वकामप्रदं नृणाम्।
त्रिसन्ध्यं यः पठेदेतत् सङ्कष्टं नाप्नुयात् क्वचित्॥ १०॥

॥ इति श्रीगणेशपुराणे देवैः कृतं श्रीसङ्कटनाशनगणेशस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

गणेशजी बोले—आपलोगोंके द्वारा किया गया यह स्तोत्र मुझे अत्यन्त प्रीति प्रदान करनेवाला है, यह स्तोत्र संकटनाशनके नामसे विख्यात होगा। पढ़नेवाले तथा सुननेवाले लोगोंके लिये यह सभी मनोरथोंको देनेवाला होगा। तीनों सन्ध्याओंमें जो इसका पाठ करेगा, वह कभी भी कष्टको प्राप्त नहीं होगा॥ ९-१०॥

॥ इस प्रकार श्रीगणेशपुराणमें देवोक्त श्रीसंकटनाशनगणेशस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणेशपञ्चरत्नस्तोत्रम्

मुदा करात्तमोदकं सदा विमुक्तिसाधकं
कलाधरावतंसकं विलासिलोकरञ्जकम्।
अनायकैकनायकं विनाशितेभदैत्यकं
नताशुभाशुनाशकं नमामि तं विनायकम्॥ १॥

जिन्होंने बड़े आनन्दसे अपने हाथमें मोदक ले रखे हैं; जो सदा ही मुमुक्षुजनोंकी मोक्षाभिलाषाको सिद्ध करनेवाले हैं; चन्द्रमा जिनके भालदेशके भूषण हैं; जो भक्तिभावमें निमग्न लोगोंके मनको आनन्दित करते हैं; जिनका कोई नायक या स्वामी नहीं है; जो एकमात्र स्वयं ही सबके नायक हैं; जिन्होंने गजासुरका संहार किया है तथा जो नतमस्तक पुरुषोंके अशुभका तत्काल नाश करनेवाले हैं, उन भगवान् विनायकको मैं प्रणाम करता हूँ॥ १॥

नतेतरातिभीकरं नवोदितार्कभास्वरं
नमत्सुरारिनिर्जरं नताधिकापदुद्धरम्।
सुरेश्वरं निधीश्वरं गजेश्वरं गणेश्वरं
महेश्वरं तमाश्रये परात्परं निरन्तरम्॥ २॥
समस्तलोकशङ्करं निरस्तदैत्यकुञ्जरं
दरेतरोदरं वरं वरेभवक्त्रमक्षरम्।
कृपाकरं क्षमाकरं मुदाकरं यशस्करं
मनस्करं नमस्कृतां नमस्करोमि भास्वरम्॥ ३॥
अकिञ्चनार्तिमार्जनं चिरन्तनोक्तिभाजनं
पुरारिपूर्वनन्दनं सुरारिगर्वचर्वणम्।

जो प्रणत न होनेवाले—उद्दण्ड मनुष्योंके लिये अत्यन्त भयंकर हैं; नवोदित सूर्यके समान अरुण प्रभासे उद्भासित हैं; दैत्य और देवता—सभी जिनके चरणोंमें शीश झुकाते हैं; जो प्रणत भक्तोंका भीषण आपत्तियोंसे उद्धार करनेवाले हैं, उन सुरेश्वर, निधियोंके अधिपति, गजेन्द्रशासक, महेश्वर, परात्पर गणेश्वरका मैं निरन्तर आश्रय ग्रहण करता हूँ॥ २॥

जो समस्त लोकोंका कल्याण करनेवाले हैं; जिन्होंने गजाकार दैत्यका विनाश किया है; जो लम्बोदर, श्रेष्ठ, अविनाशी एवं गजराजवदन हैं; कृपा, क्षमा और आनन्दकी निधि हैं; जो यश प्रदान करनेवाले तथा नमनशीलोंको मनसे सहयोग देनेवाले हैं, उन प्रकाशमान देवता गणेशको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ३॥

जो अकिंचन-जनोंकी पीड़ा दूर करनेवाले तथा चिरंतन उक्ति (वेदवाणी)के भाजन (वर्ण्य-विषय) हैं; जिन्हें त्रिपुरारि शिवके ज्येष्ठ पुत्र होनेका गौरव प्राप्त है; जो देव-शत्रुओंके गर्वको चूर्ण कर देनेवाले हैं;

प्रपञ्चनाशभीषणं धनञ्जयादिभूषणं
कपोलदानवारणं भजे पुराणवारणम् ॥ ४ ॥
नितान्तकान्तदन्तकान्तिमन्तकान्तकात्मज-
मचिन्त्यरूपमन्तहीनमन्तरायकृन्तनम् ।
हृदन्तरे निरन्तरं वसन्तमेव योगिनां
तमेकदन्तमेव तं विचिन्तयामि सन्ततम् ॥ ५ ॥
महागणेशपञ्चरत्नमादरेण योऽन्वहं
प्रगायति प्रभातके हृदि स्मरन् गणेश्वरम् ।
अरोगतामदोषतां सुसाहितीं सुपुत्रतां
समाहितायुरष्टभूतिमभ्युपैति सोऽचिरात् ॥ ६ ॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यकृतं श्रीगणेशपञ्चरत्नस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

दृश्य-प्रपंचका संहार करते समय जिनका रूप भीषण हो जाता है; धनंजय आदि नाग जिनके भूषण हैं तथा जो गण्डस्थलसे दानकी धारा बहानेवाले गजेन्द्ररूप हैं, उन पुरातन गजराज गणेशका मैं भजन करता हूँ ॥ ४ ॥

जिनकी दन्तकान्ति नितान्त कमनीय है; जो अन्तकके अन्तक (मृत्युंजय) शिवके पुत्र हैं; जिनका रूप अचिन्त्य एवं अनन्त है; जो समस्त विघ्नोंका उच्छेद करनेवाले हैं तथा योगियोंके हृदयके भीतर जिनका निरन्तर निवास है, उन एकदन्त गणेशका मैं सदा चिन्तन करता हूँ ॥ ५ ॥

जो मनुष्य प्रतिदिन प्रातःकाल मन-ही-मन गणेशका स्मरण करते हुए इस 'महागणेश-पंचरत्न' का आदरपूर्वक उच्चस्वरसे गान करता है, वह शीघ्र ही आरोग्य, निर्दोषता, उत्तम ग्रन्थों एवं सत्पुरुषोंका संग, उत्तम पुत्र, दीर्घ आयु एवं अष्ट सिद्धियोंको प्राप्त कर लेता है ॥ ६ ॥

॥ इस प्रकार श्रीशंकराचार्यरचित श्रीगणेशपंचरत्नस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ ॥

श्रीगणपतिनमस्कारः

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय।
नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते ॥ १ ॥
गजाननं भूतगणादिसेवितं कपित्थजम्बूफलचारुभक्षणम्।
उमासुतं शोकविनाशकारकं नमामि विघ्नेश्वरपादपङ्कजम्॥ २ ॥
एकदन्तं महाकायं लम्बोदरगजाननम्।
विघ्ननाशकरं देवं हेरम्बं प्रणमाम्यहम्॥ ३ ॥
रक्ष रक्ष गणाध्यक्ष रक्ष त्रैलोक्यरक्षक।
भक्तानामभयं कर्ता त्राता भव भवार्णवात्॥ ४॥

॥ इति श्रीगणपतिनमस्कारः सम्पूर्णः ॥

विघ्नेश्वर, वर देनेवाले, देवताओंको प्रिय, लम्बोदर, कलाओंसे परिपूर्ण, जगत्का हित करनेवाले, गजके समान मुखवाले और वेद तथा यज्ञसे विभूषित पार्वतीपुत्रको नमस्कार है; हे गणनाथ! आपको नमस्कार है॥ १॥

जो हाथीके समान मुखवाले हैं, भूतगणादिसे सदा सेवित रहते हैं, कैथ तथा जामुन फल जिनके लिये प्रिय भोज्य हैं, पार्वतीके पुत्र हैं तथा जो प्राणियोंके शोकका विनाश करनेवाले हैं, उन विघ्नेश्वरके चरणकमलोंमें नमस्कार करता हूँ॥ २॥

जो एक दाँतसे सुशोभित हैं, विशाल शरीरवाले हैं, लम्बोदर हैं, गजानन हैं तथा जो विघ्नोंके विनाशकर्ता हैं, मैं उन दिव्य भगवान् हेरम्बको प्रणाम करता हूँ॥ ३॥

हे गणाध्यक्ष! [मेरी] रक्षा कीजिये, रक्षा कीजिये। हे तीनों लोकोंके रक्षक! रक्षा कीजिये; आप भक्तोंको अभय प्रदान करनेवाले हैं, भवसागरसे [मेरी] रक्षा कीजिये॥ ४॥

॥ इस प्रकार श्रीगणपतिनमस्कार सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणेशध्यानम्

श्रीराधा उवाच

खर्वं लम्बोदरं स्थूलं ज्वलन्तं ब्रह्मतेजसा।
गजवक्त्रं वह्निवर्णमेकदन्तमनन्तकम्॥ १॥
सिद्धानां योगिनामेव ज्ञानिनां च गुरोर्गुरुम्।
ध्यातं मुनीन्द्रैर्देवेन्द्रैर्ब्रह्मेशशेषसंज्ञकैः॥ २॥
सिद्धेन्द्रैर्मुनिभिः सद्भिर्भगवन्तं सनातनम्।
ब्रह्मस्वरूपं परमं मङ्गलं मङ्गलालयम्॥ ३॥
सर्वविघ्नहरं शान्तं दातारं सर्वसम्पदाम्।
भवाब्धिमायापोतेन कर्णधारं च कर्मिणाम्॥ ४॥
शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणम्।
ध्यायेद् ध्यानात्मकं साध्यं भक्तेशं भक्तवत्सलम्॥ ५॥

॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्तपुराणे श्रीकृष्णजन्मखण्डे भगवतीराधाकृतं श्रीगणेशध्यानं सम्पूर्णम्॥

श्रीराधाजी बोलीं—जो खर्व (छोटे कदवाले), लम्बोदर, स्थूलकाय, ब्रह्मतेजसे उद्भासित, गजमुख, अग्नितुल्य कान्तिमान्, एकदन्त और अनन्त हैं; जो सिद्धों, योगियों और ज्ञानियोंके गुरुके भी गुरु हैं; ब्रह्मा, शिव और शेष आदि देवेन्द्र, मुनीन्द्र, सिद्धेन्द्र, मुनिगण तथा संतलोग जिनका ध्यान करते हैं; जो ऐश्वर्यशाली, सनातन, ब्रह्मस्वरूप, परम मंगल, मंगलके भण्डार, सम्पूर्ण विघ्नोंको हरनेवाले, शान्त, सम्पूर्ण सम्पत्तियोंके दाता, कर्मयोगियोंके लिये भवसागरमें मायारूपी जहाजके कर्णधारस्वरूप, शरणागत-दीन-दुखीकी रक्षामें तत्पर, ध्यानरूप, साधना करनेयोग्य, भक्तोंके स्वामी और भक्तवत्सल हैं, उन गणेशका ध्यान करना चाहिये॥ १—५॥

॥ इस प्रकार श्रीब्रह्मवैवर्तपुराणके अन्तर्गत श्रीकृष्णजन्मखण्डमें भगवती राधाकृत श्रीगणेशध्यान सम्पूर्ण हुआ॥

मंगलकामना

अविरलमदधाराधौतकुम्भः शरण्यः
फणिवरवृतगात्रः सिद्धसाध्यादिवन्द्यः।
त्रिभुवनजनविघ्नध्वान्तविध्वंसदक्षो
वितरतु गजवक्त्रः सन्ततं मङ्गलं वः॥ १॥
अशेषविघ्नप्रतिषेधदक्षमन्त्राक्षतानामिव दिङ्मुखेषु।
विक्षेपलीला करशीकराणां करोतु वः प्रीतिमिभाननस्य॥ २॥
उच्चैरुत्तालगण्डस्थलबहुलगलद्दानपानप्रमत्त-
स्फीतालिव्रातगीतिश्रुतिविधृतिकलोन्मीलितार्धाक्षिपक्ष्मा।
भक्तप्रत्यूहपृथ्वीरुहनिवहसमुन्मूलनोच्चैरुदञ्च-
च्छुण्डादण्डाग्र उग्रार्भक इभवदनो वः स पायादपायात्॥ ३॥

जिनका कुम्भस्थल निरन्तर बहनेवाली मदधारासे धुला हुआ है; जो सबके शरणदाता हैं; जिनके शरीरमें बड़े-बड़े सर्प लिपटे रहते हैं; जो सिद्ध और साध्य आदि देवताओंके वन्दनीय हैं तथा तीनों लोकोंके निवासीजनोंके विघ्नान्धकारका विध्वंस करनेमें दक्ष (चतुर) हैं, वे गजानन गणेश आपलोगोंको सदा मंगल प्रदान करें॥ १॥

श्रीगजाननके शुण्डसे सम्पूर्ण दिशाओंमें जो जलकणोंके छींटे डालनेकी लीला होती है, वह समस्त विघ्नोंके निवारणमें समर्थ मन्त्राक्षपात-सी प्रतीत होती है; वह लीला आपलोगोंको प्रसन्नता प्रदान करे॥ २॥

जिनके अत्यन्त उन्नत गण्डस्थलपर बहती हुई प्रचुर मदधाराके पानसे मत्त हुए झुंड-के-झुंड भ्रमर गुंजार करते हैं और उस कलरवको सुनकर जो आनन्दातिरेकसे अपनी आँखें अधमुँदी कर लेते हैं; जिनके शुण्डादण्डका अग्रभाग भक्तोंके विघ्नरूपी वृक्ष-समूहोंको जड़-मूलसहित उखाड़ फेंकनेके लिये ऊँचा उठा हुआ है, वे रुद्रकुमार गजानन आपलोगोंको विनाश एवं संकटसे बचायें॥ ३॥

श्रीविनायकस्तुतिः

नमो नमस्तेऽखिललोकनाथ
नमो नमस्तेऽखिललोकधामन्।
नमो नमस्तेऽखिललोककारिन्
नमो नमस्तेऽखिललोकहारिन्॥ १॥
नमो नमस्ते सुरशत्रुनाश
नमो नमस्ते हृतभक्तपाश।
नमो नमस्ते निजभक्तपोष
नमो नमस्ते लघुभक्तितोष॥ २॥
निराकृते नित्यनिरस्तमाय
परात्पर ब्रह्ममयस्वरूप।
क्षराक्षरातीतगुणैर्विहीन
दीनानुकम्पिन् भगवन्नमस्ते॥ ३॥

हे सर्वलोकेश्वर! आपको नमस्कार है। हे सर्वलोकाधार! आपको बार-बार नमस्कार है। हे निखिल सृष्टिके कर्ता एवं निखिल सृष्टिके संहारक! आपको बार-बार नमस्कार है॥ १॥

हे देव-शत्रुओंके विनाशक! आपको बार-बार नमस्कार है। भक्तोंका पाश नष्ट करनेवाले हे प्रभो! आपको बार-बार नमस्कार है। अपने भक्तोंका पोषण करनेवाले आपको बार-बार नमस्कार है। थोड़ी-सी भी भक्तिसे सन्तुष्ट होनेवाले हे प्रभो! आपको बार-बार नमस्कार है॥ २॥

आप निराकार, अन्धकारसे सदा दूर रहनेवाले अर्थात् प्रकाशस्वरूप, परात्पर, ब्रह्मस्वरूप, क्षर-अक्षरसे अतीत, सत्त्वगुणादिसे रहित एवं दीनजनोंपर अनुकम्पा करनेवाले हैं; हे भगवन्! आपको नमस्कार है॥ ३॥

निरामयायाखिलकामपूर
निरञ्जनायाखिलदैत्यदारिन् ।
नित्याय सत्याय परोपकारिन्
समाय सर्वत्र नमो नमस्ते ॥ ४ ॥

॥ इति श्रीगणेशपुराणे श्रीविनायकस्तुतिः सम्पूर्णा ॥

आप निरामय, पूर्णकाम (सम्पूर्ण कामनाओंसे रहित), निरंजन, सम्पूर्ण दैत्योंका दलन करनेवाले, नित्य, सत्य, परोपकारी और सर्वत्र समरूपसे निवास करते हैं; आपको बार-बार नमस्कार है ॥ ४ ॥

॥ इस प्रकार श्रीगणेशपुराणमें श्रीविनायकस्तुति सम्पूर्ण हुई ॥

श्रीगणेशाष्टकम्

गणपतिपरिवारं चारुकेयूरहारं
गिरिधरवरसारं योगिनीचक्रचारम् ।
भवभयपरिहारं दुःखदारिद्र्यदूरं
गणपतिमभिवन्दे वक्रतुण्डावतारम् ॥ १ ॥

गणेशजी सभी गणपतियोंके परिवारमें विराजमान रहनेवाले हैं, वे सुन्दर केयूर तथा हारसे सुशोभित हैं और श्रीकृष्णके श्रेष्ठ अंशस्वरूप वे योगिनीचक्रमें विचरण करनेवाले हैं, सांसारिक भय समाप्त करनेवाले हैं, दुःख तथा दरिद्रताका नाश करनेवाले हैं; मैं वक्रतुण्डावतार धारण करनेवाले श्रीगणेशजीकी वन्दना करता हूँ ॥ १ ॥

अखिलमलविनाशं पाणिना हस्तपाशं
कनकगिरिनिकाशं सूर्यकोटिप्रकाशम्।
भज भवगिरिनाशं मालतीतीरवासं
गणपतिमभिवन्दे मानसे राजहंसम्॥ २॥
विविधमणिमयूखैः शोभमानं विदूरैः
कनकरचितचित्रं कण्ठदेशे विचित्रम्।
दधति विमलहारं सर्वदा यत्नसारं
गणपतिमभिवन्दे वक्रतुण्डावतारम्॥ ३॥
दुरितगजममन्दं वारणीं चैव वेदं
विदितमखिलनादं नृत्यमानन्दकन्दम्।

अपने हाथकी वरदमुद्राके द्वारा प्राणियोंके समग्र दोषोंको दूर करनेवाले, हाथमें पाश धारण करनेवाले, सुमेरुपर्वतके समान कान्तिवाले, करोड़ों सूर्योंके समान प्रकाशवाले, संसाररूपी पर्वतका नाश करनेवाले, मालतीनदीके तटपर निवास करनेवाले गणेशको भजिये। [योगियोंके मनरूपी] मानसरोवरमें राजहंसके समान विचरण करनेवाले [उन्हीं भजनीय] श्रीगणपतिजीकी मैं वन्दना करता हूँ॥ २॥

जो वैदूर्यादि विविध मणियोंकी किरणोंसे सुशोभित हैं, सुवर्णजटित चित्रमय विचित्र धवलहारको कण्ठदेशमें जो सर्वदा धारण करते हैं, जो सभी सत्प्रयत्नोंके सारस्वरूप हैं, उन वक्रतुण्डका अवतार धारण करनेवाले श्रीगणपतिजीकी मैं वन्दना करता हूँ॥ ३॥

प्राणियोंको दुःख देनेवाले पापरूपी प्रचण्ड हाथीको रोकनेमें समर्थ, ज्ञानमूर्ति, समस्त नादसमूहका ज्ञान रखनेवाले, सदा नृत्य करनेवाले,

दधति शशिसुवक्त्रं चाङ्कुशं यो विशेषं
गणपतिमभिवन्दे सर्वदानन्दकन्दम्॥ ४॥
त्रिनयनयुतभाले शोभमाने विशाले
मुकुटमणिसुढाले मौक्तिकानां च जाले।
धवलकुसुममाले यस्य शीर्ष्णः सताले
गणपतिमभिवन्दे सर्वदा चक्रपाणिम्॥ ५॥
वपुषि महति रूपं पीठमादौ सुदीपं
तदुपरि रसकोणं यस्य चोर्ध्वं त्रिकोणम्।
गजमितदलपद्मं संस्थितं चारुछद्मं
गणपतिमभिवन्दे कल्पवृक्षस्य वृन्दे॥ ६॥
वरदविशदशस्तं दक्षिणं यस्य हस्तं
सदयमभयदं तं चिन्तये चित्तसंस्थम्।

सबको आनन्द प्रदान करनेवाले, हाथमें अंकुश धारण करनेवाले, चन्द्रमाके समान सुन्दर मुखवाले, सदैव आनन्दरूपवाले उपर्युक्त विशेषणोंसे विशिष्ट गणपतिजीकी मैं वन्दना करता हूँ॥ ४॥

सुन्दर तथा विशाल तीन नेत्रोंसे युक्त भालवाले, मुकुटपर बहुमूल्य मणि धारण करनेवाले, मुक्ताओंसे सुशोभित हार धारण करनेवाले, मस्तक एवं भालपर शुभ्र फूलोंकी माला धारण करनेवाले, कानोंको सदा डुलानेवाले, हाथमें चक्र धारण करनेवाले गणपतिजीकी मैं सदा वन्दना करता हूँ॥ ५॥

श्रीगणपति-यन्त्रके मध्यमें त्रिकोणाकार जो दीपक है, उसके मध्यमें गणेशजीकी पीठ है, उसके ऊपर छः कोण बने हुए हैं जिसका ऊर्ध्व भाग त्रिकोण है; इस यन्त्रमें पद्मके आठ दल हैं। इस कल्पवृक्षके वनमें अव्यक्तरूपसे सुशोभित रहनेवाले गणपतिजीकी मैं वन्दना करता हूँ॥ ६॥

निरन्तर वरदान देनेके निमित्त जिनका विशाल हाथ सदा दक्षिण दिशामें

शबलकुटिलशुण्डं चैकतुण्डं द्वितुण्डं
गणपतिमभिवन्दे सर्वदा वक्रतुण्डम्॥ ७॥

कल्पद्रुमाधःस्थितकामधेनुं
चिन्तामणिं दक्षिणपाणिशुण्डम्।
बिभ्राणमत्यद्भुतचित्तरूपं
यः पूजयेत्तस्य समस्तसिद्धिः॥ ८॥

व्यासाष्टकमिदं पुण्यं गणेशस्तवनं नृणाम्।
पठतां दुःखनाशाय विद्यां सश्रियमश्नुते॥ ९॥

॥ इति श्रीपद्मपुराणे उत्तरखण्डे व्यासरचितं श्रीगणेशाष्टकं सम्पूर्णम्॥

रहता है, जो दयावान् हैं, अभय देनेवाले हैं तथा प्राणिमात्रके हृदयमें विराजमान रहते हैं, उन गणिपतिजीका मैं चिन्तन करता हूँ। जिनकी सूँड़ चित्र-विचित्र तथा टेढ़ी-मेढ़ी है, जो एकमुखवाले तथा दो मुखवाले हैं, उन वक्रतुण्ड गणपतिजीकी मैं सदा वन्दना करता हूँ॥ ७॥

दक्षिण हाथकी ओर सूँड़वाले, कल्पवृक्षके नीचे स्थित कामधेनु-स्वरूप, चिन्तामणिके समान फल देनेवाले और अद्भुत सुन्दररूप धारण करनेवाले गणेशजीकी जो पूजा करता है, उसके मनोरथोंकी पूर्ण सिद्धि हो जाती है॥ ८॥

वेदव्यासजीके इस गणेशाष्टक स्तवनका पाठ करनेसे मनुष्योंको पुण्य प्राप्त होता है, इसका पाठ करनेवालेका दुःख समाप्त हो जाता है और उसे लक्ष्मीसहित विद्याकी प्राप्ति हो जाती है॥ ९॥

॥ इस प्रकार श्रीपद्मपुराणके उत्तरखण्डमें व्यासरचित श्रीगणेशाष्टक सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणपतिस्तोत्रम्

जेतुं यस्त्रिपुरं हरेण हरिणा व्याजाद्बलिं बध्नता
स्त्रष्टुं वारिभवोद्भवेन भुवनं शेषेण धर्तुं धराम्।
पार्वत्या महिषासुरप्रमथने सिद्धाधिपैः सिद्धये
ध्यातः पञ्चशरेण विश्वजितये पायात्स नागाननः॥ १॥
विघ्नध्वान्तनिवारणैकतरणिर्विघ्नाटवीहव्यवाड्
विघ्नव्यालकुलाभिमानगरुडो विघ्नेभपञ्चाननः।
विघ्नोत्तुङ्गगिरिप्रभेदनपविर्विघ्नाम्बुधेर्वाडवो
विघ्नाघौघघनप्रचण्डपवनो विघ्नेश्वरः पातु नः॥ २॥
खर्वं स्थूलतनुं गजेन्द्रवदनं लम्बोदरं सुन्दरं
प्रस्यन्दन्मदगन्धलुब्धमधुपव्यालोलगण्डस्थलम्।

त्रिपुरासुरको जीतनेके लिये शिवने, बलिको छलसे बाँधते समय विष्णुने, जगत्को रचनेके लिये ब्रह्माने, पृथ्वी धारण करनेके लिये शेषनागने, महिषासुरको मारनेके समय पार्वतीने, सिद्धि पानेके लिये सिद्धोंके अधिपतियों (सनकादि ऋषियों)-ने और सब संसारको जीतनेके लिये कामदेवने जिन गणेशजीका ध्यान किया है, वे हमलोगोंका पालन करें॥ १॥

विघ्नरूप अन्धकारका नाश करनेवाले एकमात्र सूर्य, विघ्नरूप वनको जलानेवाले अग्नि, विघ्नरूप सर्पकुलका दर्प नष्ट करनेके लिये गरुड़, विघ्नरूप हाथीको मारनेवाले सिंह, विघ्नरूप ऊँचे पहाड़को तोड़नेवाले वज्र, विघ्नरूप महासागरके वडवानल, विघ्नरूपी मेघ-समूहको उड़ा देनेवाले प्रचण्ड वायुसदृश गणेशजी हमलोगोंका पालन करें॥ २॥

जो नाटे और मोटे शरीरवाले हैं, जिनका गजराजके समान मुँह और लम्बा उदर है, जो सुन्दर हैं तथा बहते हुए मदकी सुगन्धके लोभी भौरोंके चाटनेसे जिनका गण्डस्थल चपल हो रहा है, दाँतोंकी चोटसे विदीर्ण हुए

दन्ताघातविदारितारिरुधिरैः सिन्दूरशोभाकरं
वन्दे शैलसुतासुतं गणपतिं सिद्धिप्रदं कामदम्॥ ३॥
गजाननाय महसे प्रत्यूहतिमिरच्छिदे।
अपारकरुणापूरतरङ्गितदृशे नमः॥ ४॥
अगजाननपद्मार्कं गजाननमहर्निशम्।
अनेकदन्तं भक्तानामेकदन्तमुपास्महे॥ ५॥
श्वेताङ्गं श्वेतवस्त्रं सितकुसुमगणैः पूजितं श्वेतगन्धैः
क्षीराब्धौ रत्नदीपैः सुरनरतिलकं रत्नसिंहासनस्थम्।
दोर्भिः पाशाङ्कुशाब्जाभयवरमनसं चन्द्रमौलिं त्रिनेत्रं
ध्यायेच्छान्त्यर्थमीशं गणपतिममलं श्रीसमेतं प्रसन्नम्॥ ६॥

शत्रुओंके रक्तसे जो सिन्दूरकी-सी शोभा धारण करते हैं, कामनाओंके दाता और सिद्धि देनेवाले उन पार्वतीके पुत्र गणेशजीकी मैं वन्दना करता हूँ॥ ३॥

विघ्नरूप अन्धकारका नाश करनेवाले, अथाह करुणारूप जलराशिसे तरंगित नेत्रोंवाले गणेश नामक ज्योतिपुंजको नमस्कार है॥ ४॥

जो पार्वतीके मुखरूप कमलको प्रकाशित करनेमें सूर्यरूप हैं, जो भक्तोंको अनेक प्रकारके फल देते हैं, उन एक दाँतवाले गणेशजीकी मैं सदैव उपासना करता हूँ॥ ५॥

जिनका शरीर श्वेत है, वस्त्र श्वेत हैं, श्वेत फूल, चन्दन और रत्नदीपोंसे क्षीरसमुद्रके तटपर जिनकी पूजा हुई है; देवता और मनुष्य जिनको अपना प्रधान पूज्य समझते हैं, जो रत्नके सिंहासनपर बैठे हैं, जिनके हाथोंमें पाश (एक प्रकारकी डोरी), अकुंश और कमलके फूल हैं, जो अभयदान और वरदान देनेवाले हैं, जिनके मस्तकपर चन्द्रमा रहते हैं और जिनके तीन नेत्र हैं; निर्मल लक्ष्मीके साथ विराजमान प्रसन्नप्रभु गणेशजीका शान्तिके लिये ध्यान करे॥ ६॥

आवाहये तं गणराजदेवं रक्तोत्पलाभासमशेषवन्द्यम्।
विघ्नान्तकं विघ्नहरं गणेशं भजामि रौद्रं सहितं च सिद्ध्या॥ ७ ॥
यं ब्रह्म वेदान्तविदो वदन्ति परं प्रधानं पुरुषं तथान्ये।
विश्वोद्गतेः कारणमीश्वरं वा तस्मै नमो विघ्नविनाशनाय॥ ८ ॥
विघ्नेश वीर्याणि विचित्रकाणि वन्दीजनैर्मागधकैः स्मृतानि।
श्रुत्वा समुत्तिष्ठ गजानन त्वं ब्राह्मे जगन्मङ्गलकं कुरुष्व॥ ९ ॥
गणेश हेरम्ब गजाननेति महोदर स्वानुभवप्रकाशिन्।
वरिष्ठ सिद्धिप्रिय बुद्धिनाथ वदन्त एवं त्यजत प्रभीतीः॥ १०॥

जो देवताओंके गणके राजा हैं, लाल कमलके समान जिनके देहकी आभा है, जो सबके वन्दनीय हैं, विघ्नके काल हैं, विघ्नोंको हरनेवाले हैं, शिवजीके पुत्र हैं; उन गणेशजीका मैं सिद्धिके साथ आवाहन और भजन करता हूँ॥ ७॥

जिनको वेदान्ती लोग ब्रह्म कहते हैं और दूसरे लोग परम प्रधान पुरुष अथवा संसारकी सृष्टिके कारण या ईश्वर कहते हैं; उन विघ्नविनाशक गणेशजीको नमस्कार है॥ ८॥

हे विघ्नेश! हे गजानन! आप मागध और वन्दीजनोंके मुखसे गाये जाते हुए अपने विचित्र पराक्रमोंको सुनकर ब्राह्ममुहूर्तमें उठें और जगत्का कल्याण करें॥ ९॥

'हे गणेश! हे हेरम्ब! हे गजानन! हे लम्बोदर! हे आत्मानुभवसे प्रकाशित होनेवाले! हे श्रेष्ठ! हे सिद्धिके प्रियतम! हे बुद्धिनाथ!' ऐसा कहते हुए (हे भक्तो!) अपना भय छोड़ दो॥ १०॥

अनेकविघ्नान्तक वक्रतुण्ड स्वसंज्ञवासिंश्च चतुर्भुजेति।
कवीश देवान्तकनाशकारिन् वदन्त एवं त्यजत प्रभीतीः ॥ ११ ॥
अनन्तचिद्रूपमयं गणेशं ह्यभेदभेदादिविहीनमाद्यम्।
हृदि प्रकाशस्य धरं स्वधीस्थं तमेकदन्तं शरणं व्रजामः ॥ १२ ॥
विश्वादिभूतं हृदि योगिनां वै प्रत्यक्षरूपेण विभान्तमेकम्।
सदा निरालम्बसमाधिगम्यं तमेकदन्तं शरणं व्रजामः ॥ १३ ॥
यदीयवीर्येण समर्थभूता माया तया संरचितं च विश्वम्।
नागात्मकं ह्यात्मतया प्रतीतं तमेकदन्तं शरणं व्रजामः ॥ १४ ॥

'हे अनेक विघ्नोंका नाश करनेवाले! हे वक्रतुण्ड! गणेश आदि अपने विभिन्न नामोंमें निवास करनेवाले! हे चतुर्भुज! हे कवियोंके नाथ! हे दैत्योंका नाश करनेवाले!' ऐसा कहते हुए (हे भक्तो!) अपने भयको भगा दो॥ ११ ॥

जो गणेश अनन्त हैं, चेतनरूप हैं, अभेद और भेद आदिसे रहित और सृष्टिके आदिकारण हैं, अपने हृदयमें जो सदा प्रकाश धारण करते हैं तथा अपनी ही बुद्धिमें स्थित रहते हैं; उन एकदन्त गणेशजीकी शरणमें हम जाते हैं॥ १२ ॥

जो संसारके आदिकारण हैं, योगियोंके हृदयमें अद्वितीय रूपसे साक्षात् प्रकाशित होते हैं और निरालम्ब समाधिके द्वारा ही जाननेयोग्य हैं, उन एकदन्त गणेशकी शरणमें हम जाते हैं॥ १३ ॥

जिनके बलसे माया समर्थ हुई है और उसके द्वारा यह संसार रचा गया है, उन नागस्वरूप तथा आत्मारूपसे प्रतीत होनेवाले एकदन्त गणेशजीकी शरणमें हम जाते हैं॥ १४ ॥

सर्वान्तरे संस्थितमेकगूढं यदाज्ञया सर्वमिदं विभाति।
अनन्तरूपं हृदि बोधकं वै तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥ १५॥
यं योगिनो योगबलेन साध्यं कुर्वन्ति तं कः स्तवनेन नौति।
अतः प्रणामेन सुसिद्धिदोऽस्तु तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥ १६॥
देवेन्द्रमौलिमन्दारमकरन्दकणारुणाः।
विघ्नान् हरन्तु हेरम्बचरणाम्बुजरेणवः॥ १७॥
एकदन्तं महाकायं लम्बोदरगजाननम्।
विघ्ननाशकरं देवं हेरम्बं प्रणमाम्यहम्॥ १८॥
यदक्षरं पदं भ्रष्टं मात्राहीनं च यद्भवेत्।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रसीद परमेश्वर॥ १९॥

॥ इति श्रीगणपतिस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

जो सब लोगोंके अन्तःकरणमें अकेले गूढ़भावसे स्थित रहते हैं, जिनकी आज्ञासे यह जगत् प्रकाशित होता है, जो अनन्तरूप हैं और हृदयमें ज्ञान देनेवाले हैं; उन एकदन्त गणेशकी शरणमें हम जाते हैं॥ १५॥

जिनको योगीजन योगबलसे साध्य करते (जान पाते) हैं, स्तुतिसे उनका वर्णन कौन कर सकता है? इसलिये हम उनको केवल प्रणाम करते हैं कि वे हमें सिद्धि दें; उन भगवान् एकदन्तकी शरणमें हम जाते हैं॥ १६॥

जो इन्द्रके मुकुटमें गुँथे हुए मन्दारपुष्पोंके मकरन्दकणोंसे लाल हो रही है, वह गणेशजीके चरणकमलोंकी रज विघ्नोंका हरण करे॥ १७॥

एक दाँतवाले, बड़े शरीरवाले, स्थूल उदरवाले, हाथीके समान मुखवाले और विघ्नोंका नाश करनेवाले गणेशदेवको मैं प्रणाम करता हूँ॥ १८॥

हे देव! जो अक्षर, पद अथवा मात्रा छूट गयी हो, उसके लिये क्षमा करो और हे परमेश्वर! प्रसन्न होओ॥ १९॥

॥ इस प्रकार श्रीगणपतिस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीसिद्धिविनायकस्तोत्रम्

विघ्नेश विघ्नचयखण्डननामधेय
श्रीशङ्करात्मज सुराधिपवन्द्यपाद।
दुर्गामहाव्रतफलाखिलमङ्गलात्मन्
विघ्नं ममापहर सिद्धिविनायक त्वम्॥ १॥
सत्पद्मरागमणिवर्णशरीरकान्तिः
श्रीसिद्धिबुद्धिपरिचर्चितकुङ्कुमश्रीः ।
दक्षस्तने वलयितातिमनोज्ञशुण्डो
विघ्नं ममापहर सिद्धिविनायक त्वम्॥ २॥
पाशाङ्कुशाब्जपरशूंश्च दधच्चतुर्भि-
र्दोर्भिश्च शोणकुसुमस्त्रगुमाङ्गजातः।
सिन्दूरशोभितललाटविधुप्रकाशो
विघ्नं ममापहर सिद्धिविनायक त्वम्॥ ३॥

हे विघ्नेश! हे सिद्धिविनायक! आपका नाम विघ्न-समूहका खण्डन करनेवाला है। आप भगवान् शंकरके सुपुत्र हैं। देवराज इन्द्र आपके चरणोंकी वन्दना करते हैं। आप श्रीपार्वतीजीके महान् व्रतके उत्तम फल एवं निखिल मंगलरूप हैं। आप मेरे विघ्नका निवारण करें॥ १॥

हे सिद्धिविनायक! आपके श्रीविग्रहकी कान्ति उत्तम पद्मरागमणिके समान अरुण वर्णकी है। श्रीसिद्धि और बुद्धि देवियोंने अनुलेपन करके आपके श्रीअंगोंमें कुंकुमकी शोभाका विस्तार किया है। आपके दाहिने स्तनपर वलयाकार मुड़ा हुआ शुण्ड-दण्ड अत्यन्त मनोहर जान पड़ता है। आप मेरे विघ्न हर लीजिये॥ २॥

हे सिद्धिविनायक! आप अपने चार हाथोंमें क्रमशः पाश, अंकुश, कमल और परशु धारण करते हैं, लाल फूलोंकी मालासे अलंकृत हैं और उमाके

कार्येषु विघ्नचयभीतविरञ्चिमुख्यैः
सम्पूजितः सुरवरैरपि मोदकाद्यैः।
सर्वेषु च प्रथममेव सुरेषु पूज्यो
विघ्नं ममापहर सिद्धिविनायक त्वम्॥ ४॥

शीघ्राञ्चनस्खलनतुङ्गरवोर्ध्वकण्ठ-
स्थूलेन्दुरुद्रगणहासितदेवसङ्घः ।
शूर्पश्रुतिश्च पृथुवर्तुलतुङ्गतुन्दो
विघ्नं ममापहर सिद्धिविनायक त्वम्॥ ५॥

यज्ञोपवीतपदलम्भितनागराजो
मासादिपुण्यददृशीकृतऋक्षराजः ।

अङ्गसे उत्पन्न हुए हैं तथा आपके सिन्दूरशोभित ललाटमें चन्द्रमाका प्रकाश फैल रहा है; आप मेरे विघ्नोंका अपहरण कीजिये॥ ३॥

हे सिद्धिविनायक! सभी कार्योंमें विघ्नसमूहके आ पड़नेकी आशंकासे भयभीत हुए ब्रह्मा आदि श्रेष्ठ देवताओंने भी आपकी मोदक आदि मिष्टान्नोंसे भलीभाँति पूजा की है। आप समस्त देवताओंमें सबसे पहले ही पूजनीय हैं। आप मेरे विघ्न-समूहका निवारण कीजिये॥ ४॥

हे सिद्धिविनायक! आप जल्दी-जल्दी चलने, लड़खड़ाने, उच्चस्वरसे शब्द करने, ऊर्ध्वकण्ठ होने, स्थूल इन्दु धारण करने तथा रुद्रगणको साथ रखनेके कारण समस्त देवसमुदायको हँसाते रहते हैं। आपके कान सूपके समान जान पड़ते हैं; आप मोटा, गोलाकार और ऊँचा तुन्द (तोंद) धारण करते हैं; आप मेरे विघ्नोंका अपहरण कीजिये॥ ५॥

आपने नागराजको यज्ञोपवीतका स्थान दे रखा है; आप मासादि तिथि प्रतिपदामें भी पुण्यदाता चन्द्रमाका प्रत्यक्ष दर्शन करते हैं। भक्तोंको अभय

भक्ताभयप्रद दयालय विघ्नराज
विघ्नं ममापहर सिद्धिविनायक त्वम्॥ ६॥
सद्रत्नसारततिराजितसत्किरीटः
कौसुम्भचारुवसनद्वय ऊर्जितश्रीः।
सर्वत्र मङ्गलकरस्मरणप्रतापो
विघ्नं ममापहर सिद्धिविनायक त्वम्॥ ७॥
देवान्तकाद्यसुरभीतसुरार्तिहर्ता
विज्ञानबोधनवरेण तमोऽपहर्ता।
आनन्दितत्रिभुवनेश कुमारबन्धो
विघ्नं ममापहर सिद्धिविनायक त्वम्॥ ८॥

॥ इति श्रीमुद्गलपुराणे विघ्ननिवारकं श्रीसिद्धिविनायकस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

देनेवाले हे दयाधाम हे विघ्नराज! हे सिद्धिविनायक! आप मेरे विघ्नोंको हर लीजिये॥ ६॥

आपका सुन्दर किरीट उत्तम रत्नोंके सारभागोंकी श्रेणियोंसे उद्दीप्त होता है। आप कुसुम्भी रंगके दो मनोहर वस्त्र धारण करते हैं; आपकी शोभा या कान्ति बहुत बढ़ी-चढ़ी है और सर्वत्र आपके स्मरणका प्रताप सबका मंगल करनेवाला है। हे सिद्धिविनायक! आप मेरे विघ्न हर लें॥ ७॥

हे सिद्धिविनायक! आप देवान्तक आदि असुरोंसे डरे हुए देवताओंकी पीड़ा दूर करनेवाले तथा विज्ञानबोधके वरदानसे सबके अज्ञानान्धकारको हर लेनेवाले हैं। त्रिभुवनपति इन्द्रको आनन्दित करनेवाले हे कुमारबन्धो! आप मेरे विघ्नोंका निवारण कीजिये॥ ८॥

॥ इस प्रकार श्रीमुद्गलपुराणमें विघ्ननिवारक श्रीसिद्धिविनायकस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणपतिस्तोत्रम्

सुवर्णवर्णसुन्दरं सितैकदन्तबन्धुरं
गृहीतपाशकाङ्कुशं वरप्रदाभयप्रदम्।
चतुर्भुजं त्रिलोचनं भुजङ्गमोपवीतिनं
प्रफुल्लवारिजासनं भजामि सिन्धुराननम्॥ १॥
किरीटहारकुण्डलं प्रदीप्तबाहुभूषणं
प्रचण्डरत्नकङ्कणं प्रशोभिताङ्घ्रियष्टिकम्।
प्रभातसूर्यसुन्दराम्बरद्वयप्रधारिणं
सरत्नहेमनूपुरप्रशोभिताङ्घ्रिपङ्कजम्॥ २॥
सुवर्णदण्डमण्डितप्रचण्डचारुचामरं
गृहप्रदेन्दुसुन्दरं युगक्षणप्रमोदितम्।

जो सुवर्णके समान उज्ज्वल वर्णसे सुन्दर प्रतीत होते हैं; एक ही श्वेत दन्तके द्वारा मनोहर जान पड़ते हैं; जिन्होंने हाथोंमें पाश और अंकुश ले रखा है; जो वर तथा अभय प्रदान करनेवाले हैं; जिनके चार भुजाएँ और तीन नेत्र हैं; जो सर्पमय यज्ञोपवीत धारण करते हैं और प्रफुल्ल कमलके आसनपर बैठते हैं, उन गजाननका मैं भजन करता हूँ॥ १॥

जो किरीट, हार और कुण्डलके साथ उद्दीप्त बाहुभूषण धारण करते हैं; चमकीले रत्नोंका कंगन पहनते हैं; जिनके दण्डोपम चरण अत्यन्त शोभाशाली हैं; जो प्रभातकालके सूर्यके समान सुन्दर और लाल दो वस्त्र धारण करते हैं तथा जिनके युगल चरणारविन्द रत्नजटित सुवर्णनिर्मित नूपुरोंसे सुशोभित हैं, उन गणेशजीका मैं भजन करता हूँ॥ २॥

जिनका विशाल एवं मनोहर चँवर सुवर्णमय दण्डसे मण्डित है; जो सकाम भक्तोंको गृह-सुख प्रदान करनेवाले एवं चन्द्रमाके समान

कवीन्द्रचित्तरञ्जकं महाविपत्तिभञ्जकं
षडक्षरस्वरूपिणं भजे गजेन्द्ररूपिणम्॥ ३॥
विरिञ्चिविष्णुवन्दितं विरूपलोचनस्तुतं
गिरीशदर्शनेच्छया समर्पितं पराम्बया।
निरन्तरं सुरासुरैः सपुत्रवामलोचनैः
महामखेष्टकर्मसु स्मृतं भजामि तुन्दिलम्॥ ४॥
मदौघलुब्धचञ्चलालिमञ्जुगुञ्जितारवं
प्रबुद्धचित्तरञ्जकं प्रमोदकर्णचालकम्।
अनन्यभक्तिमानवं प्रचण्डमुक्तिदायकं
नमामि नित्यमादरेण वक्रतुण्डनायकम्॥ ५॥

सुन्दर हैं; अति शीघ्र प्रसन्न होनेवाले हैं; जिनसे कवीश्वरोंके चित्तका रंजन होता है; जो बड़ी-बड़ी विपत्तियोंका भंजन करनेवाले और षडक्षर मन्त्रस्वरूप हैं, उन गजराजरूपधारी गणेशका मैं भजन करता हूँ॥ ३॥

ब्रह्मा और विष्णु जिनकी वन्दना तथा विरूपलोचन शिव जिनकी स्तुति करते हैं; जो गिरीश (शिव)-के दर्शनकी इच्छासे परा अम्बा पार्वतीद्वारा समर्पित हैं; देवता और असुर अपने पुत्रों और वामलोचना पत्नियोंके साथ बड़े-बड़े यज्ञों तथा अभीष्ट कर्मोंमें निरन्तर जिनका स्मरण करते हैं; उन तुन्दिल देवता गणेशका मैं भजन करता हूँ॥ ४॥

जिनकी मदराशिपर लुभाये हुए चंचल भ्रमर मंजु गुंजारव करते रहते हैं; जो ज्ञानीजनोंके चित्तको आनन्द प्रदान करनेवाले हैं; अपने कानोंको सानन्द हिलाया करते हैं और अनन्य भक्ति रखनेवाले मनुष्योंको उत्कृष्ट मुक्ति देनेवाले हैं, उन वक्रतुण्ड गणनायकका मैं प्रतिदिन आदरपूर्वक भजन करता हूँ॥ ५॥

दारिद्र्यविद्रावणमाशु कामदं
स्तोत्रं पठेदेतदजस्रमादरात्।
पुत्री कलत्रस्वजनेषु मैत्री
पुमान् भवेदेकवरप्रसादात्॥ ६ ॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं श्रीगणपतिस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

यह स्तोत्र दरिद्रताको शीघ्र भगानेवाला और अभीष्ट वस्तुको देनेवाला है। जो निरन्तर आदरपूर्वक इसका पाठ करेगा, वह मनुष्य एकेश्वर गणेशकी कृपासे पुत्रवान् तथा स्त्री एवं स्वजनोंके प्रति मित्रभावसे युक्त होगा॥ ६ ॥

॥ इस प्रकार श्रीशंकराचार्यविरचित श्रीगणपतिस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणपतिस्तवः

ऋषिरुवाच

अजं निर्विकल्पं निराकारमेकं
निरानन्दमानन्दमद्वैतपूर्णम्।
परं निर्गुणं निर्विशेषं निरीहं
परब्रह्मरूपं गणेशं भजेम॥ १ ॥
गुणातीतमानं चिदानन्दरूपं
चिदाभासकं सर्वगं ज्ञानगम्यम्।

ऋषि बोले—जो अजन्मा, विकल्परहित, निराकार, अद्वितीय, लौकिक आनन्दसे शून्य, आत्मानन्दस्वरूप, अद्वैतभावसे पूर्ण, सर्वोत्कृष्ट, निर्गुण, निर्विशेष, निरीह एवं परब्रह्मस्वरूप हैं, उन गणेशका हम भजन करें॥ १ ॥

जिनका मान (स्वरूप-निरूपण) तीनों गुणोंसे अतीत है, जो चिदानन्दस्वरूप, चिदाभासक, सर्वव्यापी, ज्ञानगम्य, मुनियोंके ध्येय,

मुनिध्येयमाकाशरूपं परेशं
परब्रह्मरूपं गणेशं भजेम॥ २॥
जगत्कारणं कारणज्ञानरूपं
सुरादिं सुखादिं युगादिं गणेशम्।
जगद्व्यापिनं विश्ववन्द्यं सुरेशं
परब्रह्मरूपं गणेशं भजेम॥ ३॥
रजोयोगतो ब्रह्मरूपं श्रुतिज्ञं
सदा कार्यसक्तं हृदाचिन्त्यरूपम्।
जगत्कारणं सर्वविद्यानिदानं
परब्रह्मरूपं गणेशं नताः स्मः॥ ४॥
सदा सत्त्वयोगं मुदा क्रीडमानं
सुरारीन् हरन्तं जगत्पालयन्तम्।

आकाशस्वरूप एवं परमेश्वर हैं, उन परब्रह्मरूप गणेशका हम भजन करें॥ २॥

जो जगत्के कारण हैं, कारणज्ञान जिनका स्वरूप है, जो देवताओं, सुखों और युगोंके आदिकारण हैं, जो प्रमथगणोंके स्वामी, विश्वव्यापी, जगद्वन्द्य तथा देवेश्वर हैं, उन परब्रह्मरूप गणेशका हम भजन करें॥ ३॥

जो रजोगुणके योगसे ब्रह्माका रूप धारण करते हैं, वेदोंके ज्ञाता हैं और सदा सृष्टिकार्यमें संलग्न रहते हैं, जिनका पारमार्थिक रूप मनसे अचिन्त्य है, जो जगत्की उत्पत्तिके हेतु तथा सम्पूर्ण विद्याओंके आदिकारण हैं, उन परब्रह्मरूप गणेशको हम नमस्कार करते हैं॥ ४॥

जो सदा सत्त्वगुणसे युक्त विष्णुरूप हैं, आनन्दसे खेलते रहते हैं, असुरोंका नाश करते और जगत्की रक्षामें संलग्न रहते हैं, जिनके अनेक

अनेकावतारं निजज्ञानहारं
सदा विश्वरूपं गणेशं नमामः ॥ ५ ॥
तमोयोगिनं रुद्ररूपं त्रिनेत्रं
जगद्धारकं तारकं ज्ञानहेतुम्।
अनेकागमैः स्वं जनं बोधयन्तं
सदा सर्वरूपं गणेशं नमामः ॥ ६ ॥
तमःस्तोमहारं जनाज्ञानहारं
त्रयीवेदसारं परब्रह्मसारम्।
मुनिज्ञानकारं विदूरेविकारं
सदा ब्रह्मरूपं गणेशं नमामः ॥ ७ ॥
निजैरोषधीस्तर्पयन्तं कराद्यैः
सुरौघान् कलाभिः सुधास्राविणीभिः।

अवतार हैं और आत्मज्ञान ही जिनका कण्ठहार है, उन विश्वरूप गणेशको हम सदा नमस्कार करते हैं॥ ५॥

जो तमोगुणके सम्पर्कसे रुद्ररूप धारण करते हैं, जिनके तीन नेत्र हैं, जो जगत्के हर्ता, तारक और ज्ञानके हेतु हैं तथा जो अनेक आगमोक्त वचनोंद्वारा अपने भक्तजनोंको सदा तत्त्वज्ञानोपदेश देते रहते हैं, उन सर्वरूप गणेशको हम नमस्कार करते हैं॥ ६॥

जो अज्ञानान्धकारराशिके नाशक, भक्तजनोंके अज्ञानके निवारक, तीनों वेदोंके सारस्वरूप, परब्रह्मसार, मुनियोंको ज्ञान देनेवाले तथा मनोविकारोंसे सदा दूर रहनेवाले हैं, उन ब्रह्मरूप गणेशको हम नमस्कार करते हैं॥ ७॥

जो अपनी किरण आदिसे ओषधियोंको तृप्त एवं पुष्ट करते हैं, अमृतवर्षिणी कलाओंद्वारा देवसमुदायको तृप्त किया करते हैं, सूर्य-किरणोंसे उत्पन्न संतापको

दिनेशांशुसंतापहारं द्विजेशं
शशाङ्कस्वरूपं गणेशं नमामः ॥ ८ ॥
प्रकाशस्वरूपं नभोवायुरूपं
विकारादिहेतुं कलाभारभूतम्।
अनेकक्रियानेकशक्तिस्वरूपं
सदा शक्तिरूपं गणेशं नमामः ॥ ९ ॥
प्रधानस्वरूपं महत्तत्त्वरूपं
धराचारिरूपं दिगीशादिरूपम्।
असत्सत्स्वरूपं जगद्धेतुरूपं
सदा विश्वरूपं गणेशं नताः स्मः ॥ १० ॥
त्वदीये मनः स्थापयेदङ्घ्रियुग्मे
जनो विघ्नसङ्घातपीडां लभेत।

हर लेते हैं और द्विजों (ब्राह्मणों, नक्षत्रों)-के राजा हैं, उन चन्द्रस्वरूप गणेशको हम नमस्कार करते हैं ॥ ८ ॥

जो प्रकाशस्वरूप, आकाश एवं वायुरूप, सृष्टिके आदि हेतु और कलाओंके आधारस्वरूप हैं, अनेक क्रियाओंकी अनेकानेक शक्तियाँ जिनकी स्वरूपभूता हैं, उन शक्तिरूप गणेशको हम सदा नमस्कार करते हैं ॥ ९ ॥

प्रधान, महत्तत्त्व, भूतलचारी प्राणी तथा दिक्पाल आदि जिनके स्वरूप हैं, जो सदसत्स्वरूप एवं जगत्‌के कारणरूप हैं, उन विश्वरूप गणेशको हम सदा नमस्कार करते हैं ॥ १० ॥

हे गणनाथ! जो आपके युगलचरणोंमें मन लगाये, वह मनुष्य भी यदि विघ्नसमूहजनित पीड़ा प्राप्त करे तो आश्चर्य है! शोभाशाली, विशाल

लसत्सूर्यबिम्बे विशाले स्थितोऽयं
जनो ध्वान्तपीडां कथं वा लभेत॥ ११॥
वयं भ्रामिताः सर्वथाज्ञानयोगा-
दलब्धास्तवाङ्घ्रिं बहून् वर्षपूगान्।
इदानीमवाप्तास्तवैव प्रसादात्-
प्रपन्नान् सदा पाहि विश्वम्भराद्य॥ १२॥
इदं यः पठेत्प्रातरुत्थाय धीमान्
त्रिसन्ध्यं सदा भक्तियुक्तो विशुद्धः।
सुपुत्रान् श्रियं सर्वकामाँल्लभेत
परब्रह्मरूपो भवेदन्तकाले॥ १३॥

॥ इति ऋषिकृतः श्रीगणपतिस्तवः सम्पूर्णः ॥

सूर्यमण्डलके प्रकाशमें खड़ा हुआ मानव अन्धकारजनित क्लेश कैसे प्राप्त कर सकता है॥ ११॥

हे विश्वम्भर! हम अज्ञानयोगसे बहुत वर्षोंतक आपके चरणारविन्दोंको न प्राप्त कर सकनेके कारण सर्वथा भटकते रहे हैं। अब आपकी ही कृपासे आपके चरणोंकी शरणमें आ गये हैं। अतः हे आदिदेव! आप सदा हमारी रक्षा करें॥ १२॥

जो बुद्धिमान् मनुष्य प्रतिदिन प्रातःकाल उठकर भक्तियुक्त हो विशुद्धभावसे सदा तीनों समय इस स्तोत्रका पाठ करता है, वह उत्तम पुत्र, लक्ष्मी तथा सम्पूर्ण मनोरथोंको प्राप्त कर लेता है और अन्तकालमें परब्रह्मरूप हो जाता है॥ १३॥

॥ इस प्रकार ऋषिकृत श्रीगणपतिस्तव सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणपत्यथर्वशीर्षम्

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः ॥ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः । स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥

ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

ॐ नमस्ते गणपतये। त्वमेव प्रत्यक्षं तत्त्वमसि त्वमेव केवलं कर्तासि। त्वमेव केवलं धर्तासि। त्वमेव केवलं हर्तासि। त्वमेव सर्वं खल्विदं ब्रह्मासि। त्वं साक्षादात्मासि नित्यम्॥ १॥

ऋतं वच्मि। सत्यं वच्मि ॥ २॥

हे देवगण! हम भगवान्‌का यजन (आराधन) करते हुए कानोंसे कल्याणमय वचन सुनें, नेत्रोंसे कल्याण (ही) देखें, सुदृढ़ अंगों एवं शरीरसे भगवान्‌की स्तुति करते हुए हमलोग जो आयु आराध्यदेव परमात्माके काम आ सके, उसका उपभोग करें। सब ओर फैले हुए सुयशवाले इन्द्र हमारे लिये कल्याणका पोषण करें, सम्पूर्ण विश्वका ज्ञान रखनेवाले पूषा हमारे लिये कल्याणका पोषण करें, अरिष्टोंको मिटानेके लिये चक्रसदृश शक्तिशाली गरुडदेव हमारे लिये कल्याणका पोषण करें तथा (बुद्धिके स्वामी) बृहस्पति भी हमारे लिये कल्याणकी पुष्टि करें। परमात्मन्! हमारे त्रिविध तापकी शान्ति हो।

गणपतिको नमस्कार है, तुम्हीं प्रत्यक्ष तत्त्व हो, तुम्हीं केवल कर्ता, तुम्हीं केवल धारणकर्ता और तुम्हीं केवल संहारकर्ता हो, तुम्हीं केवल समस्त विश्वरूप ब्रह्म हो और तुम्हीं साक्षात् नित्य आत्मा हो॥ १॥

यथार्थ कहता हूँ। सत्य कहता हूँ॥ २॥

अव त्वं माम्। अव वक्तारम्। अव श्रोतारम्। अव दातारम्। अव धातारम्। अव अनूचानम्। अव शिष्यम्। अव पश्चात्तात्। अव पुरस्तात्। अवोत्तरात्तात्। अव दक्षिणात्तात्। अव चोर्ध्वात्तात्। अवाधस्तात्। सर्वतो मां पाहि पाहि समन्तात्॥ ३॥

त्वं वाङ्मयस्त्वं चिन्मयः। त्वमानन्दमयस्त्वं ब्रह्ममयः। त्वं सच्चिदानन्दाद्वितीयोऽसि। त्वं प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वं ज्ञानमयो विज्ञानमयोऽसि॥ ४॥

सर्वं जगदिदं त्वत्तो जायते। सर्वं जगदिदं त्वत्तस्तिष्ठति। सर्वं जगदिदं त्वयि लयमेष्यति। सर्वं जगदिदं त्वयि प्रत्येति। त्वं भूमिरापोऽनलोऽनिलो नभः। त्वं चत्वारि वाक्पदानि॥ ५॥

तुम मेरी रक्षा करो। वक्ताकी रक्षा करो। श्रोताकी रक्षा करो। दाताकी रक्षा करो। धाताकी रक्षा करो। षडंग वेदविद् आचार्यकी रक्षा करो। शिष्यकी रक्षा करो। पीछेसे रक्षा करो। आगेसे रक्षा करो। उत्तर (वाम) भागकी रक्षा करो। दक्षिण भागकी रक्षा करो। ऊपरसे रक्षा करो। नीचेकी ओरसे रक्षा करो। सर्वतोभावसे मेरी रक्षा करो, सब दिशाओंसे मेरी रक्षा करो॥ ३॥

तुम वाङ्मय हो, तुम चिन्मय हो। तुम आनन्दमय हो, तुम ब्रह्ममय हो। तुम सच्चिदानन्द अद्वितीय परमात्मा हो। तुम प्रत्यक्ष ब्रह्म हो। तुम ज्ञानमय हो, विज्ञानमय हो॥ ४॥

यह सारा जगत् तुमसे उत्पन्न होता है। यह सारा जगत् तुमसे सुरक्षित रहता है। यह सारा जगत् तुममें लीन होता है। यह अखिल विश्व तुममें ही प्रतीत होता है। तुम्हीं भूमि, जल, अग्नि, वायु और आकाश हो। तुम्हीं परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी चतुर्विध वाक् हो॥ ५॥

त्वं गुणत्रयातीतः। त्वं कालत्रयातीतः। त्वं देहत्रयातीतः। त्वं मूलाधारस्थितोऽसि नित्यम्। त्वं शक्तित्रयात्मकः। त्वां योगिनो ध्यायन्ति नित्यम्। त्वं ब्रह्मा त्वं विष्णुस्त्वं रुद्रस्त्वमिन्द्रस्त्वमग्निस्त्वं वायुस्त्वं सूर्यस्त्वं चन्द्रमास्त्वं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम्॥ ६॥

गणादिं पूर्वमुच्चार्य वर्णादिं तदनन्तरम्। अनुस्वारः परतरः। अर्धेन्दुलसितम्। तारेण रुद्धम्। एतत्तव मनुस्वरूपम्। गकारः पूर्वरूपम्। अकारो मध्यमरूपम्। अनुस्वारश्चान्त्यरूपम्। बिन्दुरुत्तररूपम्। नादः सन्धानम्। संहिता सन्धिः। सैषा गणेशविद्या। गणक ऋषिः निचृद्गायत्री छन्दः। गणपतिर्देवता। ॐ गं गणपतये नमः॥ ७॥

तुम सत्त्व-रज-तम—इन तीनों गुणोंसे परे हो। तुम भूत-भविष्यत्-वर्तमान—इन तीनों कालोंसे परे हो। तुम स्थूल, सूक्ष्म और कारण—इन तीनों देहोंसे परे हो। तुम नित्य मूलाधारचक्रमें स्थित हो। तुम प्रभु-शक्ति, उत्साह-शक्ति और मन्त्र-शक्ति—इन तीनों शक्तियोंसे संयुक्त हो। योगिजन नित्य तुम्हारा ध्यान करते हैं। तुम ब्रह्मा हो, तुम विष्णु हो, तुम रुद्र हो, तुम इन्द्र हो, तुम अग्नि हो, तुम वायु हो, तुम सूर्य हो, तुम चन्द्रमा हो, तुम (सगुण) ब्रह्म हो, तुम (निर्गुण) त्रिपाद भूः भुवः स्वः एवं प्रणव हो॥ ६॥

'गण' शब्दके आदि अक्षर गकारका पहले उच्चारण करके अनन्तर आदिवर्ण अकारका उच्चारण करे। उसके बाद अनुस्वार रहे। इस प्रकार अर्धचन्द्रसे शोभित जो '**गं**' है, वह ओंकारके द्वारा रुद्ध हो अर्थात् उसके पहले और पीछे भी ओंकार हो। यही तुम्हारे मन्त्रका स्वरूप (ॐ गं ॐ) है। 'गकार' पूर्वरूप है, 'अकार' मध्यमरूप है, 'अनुस्वार' अन्त्य-रूप है। 'बिन्दु' उत्तररूप है। 'नाद' सन्धान है। 'संहिता' सन्धि है। ऐसी यह गणेशविद्या है। इस विद्याके गणक ऋषि हैं, निचृद् गायत्री छन्द है और गणपति देवता हैं। मन्त्र है—'**ॐ गं गणपतये नमः**'॥ ७॥

एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात्॥ ८॥

एकदन्तं चतुर्हस्तं पाशमङ्कुशधारिणम्।
रदं च वरदं हस्तैर्बिभ्राणं मूषकध्वजम्॥
रक्तं लम्बोदरं शूर्पकर्णकं रक्तवाससम्।
रक्तगन्धानुलिप्ताङ्गं रक्तपुष्पैः सुपूजितम्॥
भक्तानुकम्पिनं देवं जगत्कारणमच्युतम्।
आविर्भूतं च सृष्ट्यादौ प्रकृतेः पुरुषात्परम्॥
एवं ध्यायति यो नित्यं स योगी योगिनां वरः॥ ९॥

नमो व्रातपतये नमो गणपतये नमः प्रमथपतये नमस्तेऽस्तु लम्बोदरायैकदन्ताय विघ्ननाशिने शिवसुताय श्रीवरदमूर्तये नमः॥ १०॥

एकदन्तको हम जानते हैं, वक्रतुण्डका हम ध्यान करते हैं। दन्ती हमको (उस ज्ञान और ध्यानमें) प्रेरित करें॥ ८॥

गणपतिदेव एकदन्त और चतुर्बाहु हैं। वे अपने चार हाथोंमें पाश, अंकुश, दन्त और वरमुद्रा धारण करते हैं। उनके ध्वजमें मूषकका चिह्न है। वे रक्तवर्ण, लम्बोदर, शूर्पकर्ण तथा रक्तवस्त्रधारी हैं। रक्तचन्दनके द्वारा उनके अंग अनुलिप्त हैं। वे रक्तवर्णके पुष्पोंद्वारा सुपूजित हैं। भक्तोंकी कामना पूर्ण करनेवाले, ज्योतिर्मय, जगत्के कारण, अच्युत तथा प्रकृति और पुरुषसे परे विद्यमान वे पुरुषोत्तम सृष्टिके आदिमें आविर्भूत हुए। इनका जो इस प्रकार नित्य ध्यान करता है, वह योगी योगियोंमें श्रेष्ठ है॥ ९॥

व्रातपतिको नमस्कार, गणपतिको नमस्कार, प्रमथपतिको नमस्कार; लम्बोदर, एकदन्त, विघ्ननाशक, शिवतनय श्रीवरदमूर्तिको नमस्कार है॥ १०॥

एतदथर्वशीर्षं योऽधीते। स ब्रह्मभूयाय कल्पते। स सर्वविघ्नैर्न बाध्यते। स सर्वतः सुखमेधते स पञ्चमहा-पापात्प्रमुच्यते। सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति। प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति। सायं प्रातः प्रयुञ्जानो अपापो भवति। सर्वत्राधीयानोऽपविघ्नो भवति धर्मार्थकाममोक्षं च विन्दति। इदमथर्वशीर्षमशिष्याय न देयम्। यो यदि मोहाद्दास्यति स पापीयान् भवति। सहस्रा-वर्तनाद् यं यं काममधीते तं तमनेन साधयेत्॥ ११॥

अनेन गणपतिमभिषिञ्चति स वाग्मी भवति। चतुर्थ्या-मनश्नञ्जपति स विद्यावान् भवति। इत्यथर्वणवाक्यम्। ब्रह्माद्यावरणं विद्यात्। न बिभेति कदाचनेति॥ १२॥

इस अथर्वशीर्षका जो पाठ करता है, वह ब्रह्मीभूत होता है, वह किसी प्रकारके विघ्नोंसे बाधित नहीं होता, वह सर्वतोभावेन सुखी होता है, वह पंच महापापोंसे मुक्त हो जाता है। सायंकाल इसका पाठ करनेवाला दिनमें किये हुए पापोंका नाश करता है, प्रातःकाल पाठ करनेवाला रात्रिमें किये हुए पापोंका नाश करता है। सायं और प्रातःकाल पाठ करनेवाला निष्पाप हो जाता है। (सदा) सर्वत्र पाठ करनेवाला सभी विघ्नोंसे मुक्त हो जाता है एवं धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष—इन चारों पुरुषार्थोंको प्राप्त करता है। यह अथर्वशीर्ष उसको नहीं देना चाहिये, जो शिष्य न हो। जो मोहवश अशिष्यको उपदेश देगा, वह महापापी होगा। इसकी एक हजार आवृत्ति करनेसे उपासक जो कामना करेगा, इसके द्वारा उसे सिद्ध कर लेगा॥ ११॥

जो इस मन्त्रके द्वारा श्रीगणपतिका अभिषेक करता है, वह वाग्मी हो जाता है। जो चतुर्थी तिथिमें उपवासकर जप करता है, वह विद्यावान् (अध्यात्मविद्याविशिष्ट) हो जाता है। यह अथर्वण-वाक्य है। जो ब्रह्मादि आवरणको जानता है, वह कभी भयभीत नहीं होता॥ १२॥

यो दूर्वाङ्कुरैर्यजति स वैश्रवणोपमो भवति। यो लाजैर्यजति स यशोवान् भवति। स मेधावान् भवति। यो मोदकसहस्रेण यजति स वाञ्छितफलमवाप्नोति। यः साज्यसमिद्भिर्यजति स सर्वं लभते स सर्वं लभते॥ १३॥

अष्टौ ब्राह्मणान् सम्यग्ग्राहयित्वा सूर्यवर्चस्वी भवति। सूर्यग्रहे महानद्यां प्रतिमासंनिधौ वा जप्त्वा सिद्धमन्त्रो भवति। महाविघ्नात् प्रमुच्यते। महापापात् प्रमुच्यते। महादोषात् प्रमुच्यते। स सर्वविद् भवति। स सर्वविद् भवति। य एवं वेद॥ १४॥ इत्युपनिषत्॥

जो दूर्वांकुरोंद्वारा यजन करता है, वह कुबेरके समान हो जाता है। जो लाजाके द्वारा यजन करता है, वह यशस्वी होता है, वह मेधावान् होता है। जो सहस्र मोदकोंके द्वारा यजन करता है, वह मनोवांछित फल प्राप्त करता है। जो घृताक्त समिधाके द्वारा हवन करता है, वह सब कुछ प्राप्त करता है, वह सब कुछ प्राप्त करता है॥ १३॥

जो आठ ब्राह्मणोंको इस उपनिषद्का सम्यक् ग्रहण करा देता है, वह सूर्यके समान तेजःसम्पन्न होता है। सूर्यग्रहणके समय महानदीमें अथवा प्रतिमाके निकट इस उपनिषद्का जप करके साधक मन्त्र सिद्ध हो जाता है। सम्पूर्ण महाविघ्नोंसे मुक्त हो जाता है। महापापोंसे मुक्त हो जाता है। महादोषोंसे मुक्त हो जाता है। वह सर्वविद् हो जाता है। वह सर्वविद् हो जाता है—जो इस प्रकार जानता है॥ १४॥ इस प्रकार यह ब्रह्मविद्या है।

श्रीगणेशमहिम्नःस्तोत्रम्

अनिर्वाच्यं रूपं स्तवननिकरो यत्र गणित-
स्तथा वक्ष्ये स्तोत्रं प्रथमपुरुषस्यात्र महतः।
यतो जातं विश्वं स्थितमपि सदा यत्र विलयः
स कीदृग्गीर्वाणः सुनिगमनुतः श्रीगणपतिः॥ १॥
गणेशं गाणेशाः शिवमिति च शैवाश्च विबुधा
रविं सौरा विष्णुं प्रथमपुरुषं विष्णुभजकाः।
वदन्त्येके शाक्ता जगदुदयमूलां परशिवां
न जाने किं तस्मै नम इति परं ब्रह्म सकलम्॥ २॥
तथेशं योगज्ञा गणपतिमिमं कर्म निखिलं
समीमांसा वेदान्तिन इति परं ब्रह्म सकलम्।

श्रीगणेशजीका रूप अनिर्वचनीय है और जिनकी अनेक स्तुतियाँ की गयी हैं तथापि उन महत्तम परम पुरुषका स्तवन करनेको मैं उद्यत हूँ। जिनसे संसारकी उत्पत्ति, स्थिति तथा संहारादि कार्य सदा होते रहते हैं, उन वेदवन्दित भगवान् श्रीगणपतिकी स्तुति वाणीसे कैसे सम्भव है?॥ १॥

जिन्हें भगवान् गणेशके भक्त गणेश कहते हैं, शिवके विद्वान् भक्त शिव कहते हैं, सूर्यके भक्त सूर्य कहते हैं, विष्णुके भक्त प्रथम पुरुष विष्णु कहते हैं, शक्तिकी उपासना करनेवाले जगत्की उत्पत्तिका मूल पराशक्ति शिवा कहते हैं, मुझे ज्ञात नहीं वे वस्तुतः क्या हैं? उन सम्पूर्ण कलायुक्त परब्रह्मको मेरा नमस्कार है॥ २॥

इन श्रीगणपतिको ही योगके तत्त्वको जाननेवाले ईश्वर कहते हैं, पूर्वमीमांसक सम्पूर्ण कर्म कहते हैं, (उत्तर मीमांसक) वेदान्ती लोग पूर्ण

अजां साङ्ख्यो ब्रूते सकलगुणरूपां च सततं
प्रकर्तारं न्यायस्त्वथ जगति बौद्धा धियमिति॥ ३॥
कथं ज्ञेयो बुद्धेः परतर इयं बाह्यसरणि-
र्यथा धीर्यस्य स्यात्स च तदनुरूपो गणपतिः।
महत्कृत्यं तस्य स्वयमपि महान् सूक्ष्ममणुवद्
धृतिर्ज्योतिर्बिन्दुर्गगनसदृशः किञ्च सदसत्॥ ४॥
अनेकास्योऽपाराक्षिकरचरणोऽनन्तहृदय-
स्तथा नानारूपो विविधवदनः श्रीगणपतिः।
अनन्ताह्वः शक्त्या विविधगुणकर्मैकसमये
त्वसङ्ख्यातानन्ताभिमतफलदोऽनेकविषये ॥ ५॥

परब्रह्म कहते हैं, सांख्यवादी सर्वगुणमयी अनादि प्रकृति कहते हैं, नैयायिक लोग संसारका कर्ता मानते हैं और बौद्ध लोग बुद्धि कहते हैं॥ ३॥

उस परतर परमात्माके वास्तविक रूपका ज्ञान बुद्धिगम्य नहीं है; क्योंकि यह बुद्धिके बाहरकी बात है। जिसकी जैसी धारणा होती है, उसे गणपति उसी रूपमें प्राप्त होते हैं। उनके कृत्य महान् हैं, वे स्वयं भी महत्तम तथा अणुसे भी सूक्ष्मतम हैं। धृति, ज्योति, बिन्दु, आकाश आदि सब उन्हींके रूप हैं। वे ही सत् तथा असत् रूपसे सर्वत्र विद्यमान हैं॥ ४॥

श्रीगणपति अनेक मुखोंसे युक्त हैं; अपार नेत्र, हाथ तथा चरणोंवाले हैं; वे अनन्त हृदयवाले हैं; विविध रूपोंवाले हैं; विविध प्रकारके मुखोंवाले हैं; उनके न नामोंका अन्त है और न शक्तिका अन्त है; क्योंकि नाना प्रकारके गुण एवं कर्मोंका सम्पादन वे एक कालमें करते हैं। अपने भक्तोंको अनेक प्रकारके असंख्य, अनन्त मनोवांछित फल वे एक साथ प्रदान करते रहते हैं॥ ५॥

न यस्यान्तो मध्यो न च भवति चादिः सुमहता-
मलिप्तः कृत्वेत्थं सकलमपि खंवत् स च पृथक्।
स्मृतः संस्मर्तृणां सकलहृदयस्थः प्रियकरो
नमस्तस्मै देवाय सकलसुरवन्द्याय महते॥ ६॥
गणेशाद्यं बीजं दहनवनितापल्लवयुतं
मनुश्चैकार्णोऽयं प्रणवसहितोऽभीष्टफलदः।
सबिन्दुश्चाङ्गाद्यां गणकऋषिछन्दोऽस्य च निचृत्
स देवः प्राग्बीजं विपदपि च शक्तिर्जपकृताम्॥ ७॥
गकारो हेरम्बः सगुण इति पुन्निर्गुणमयो
द्विधाऽप्येको जातः प्रकृतिपुरुषो ब्रह्म हि गणः।

परमात्मास्वरूप श्रीगणेशजीका न आदि है, न अन्त है और न मध्य है। वे सब कुछ करते हुए भी आकाशकी तरह अलिप्त रहते हैं। वे स्मरण करनेवाले भक्तोंद्वारा सदा वन्दित होकर उनके हृदयोंमें अन्तर्यामीरूपसे विराजमान रहते हैं तथा उनका कल्याण-सम्पादन करते रहते हैं। सभी देवताओंके वन्दनीय उन महान् देवको मेरा नमस्कार है॥ ६॥

हे गणेश! आपका मूल बीजमन्त्र (गं) एकाक्षर है, जो बिन्दु, अंगादि और प्रणवके सहित अभीष्ट फलको प्रदान करता है। इस मन्त्रके ऋषि गणक, छन्द निचृत् एवं देवता गणपति हैं। विपत्तिकालमें बीजाक्षरसहित इस मन्त्र (ॐ गं गणपतये नमः)-का जप करनेसे भक्तोंको शक्ति प्राप्त होती है॥ ७॥

गकार हेरम्ब सगुण प्रकृतितत्त्व है और निर्गुण पुरुषतत्त्व भी है। एक होते हुए भी प्रकृति और पुरुषरूपमें दो प्रकारसे विभक्त हुआ वह ब्रह्म ही गण है। वे ही परमात्मा उत्पत्ति, स्थिति तथा प्रलय करनेवाले हैं, वे

स चेशश्चोत्पत्तिस्थितिलयकरोऽयं प्रथमको
यतो भूतं भव्यं भवति पतिरीशो गणपतिः ॥ ८ ॥
गकारः कण्ठोर्ध्वं गजमुखसमो मर्त्यसदृशो
णकारः कण्ठाधो जठरसदृशाकार इति च।
अधोभागः कट्यां चरण इति हीशोऽस्य च तनु-
र्विभातीत्थं नाम त्रिभुवनसमं भूर्भुवः सुवः ॥ ९ ॥
गणेशेति त्र्यर्णात्मकमपि वरं नाम सुखदं
सकृत्प्रोच्चैरुच्चारितमिति नृभिः पावनकरम्।
गणेशस्यैकस्य प्रतिजपकरस्यास्य सुकृतं
न विज्ञातो नाम्नः सकलमहिमा कीदृशविधः ॥ १० ॥
गणेशेत्याह्वां यः प्रवदति मुहुस्तस्य पुरतः
प्रपश्यंस्तद्वक्त्रं स्वयमपि गणस्तिष्ठति तदा।

गणपति ही आदिदेव हैं, जिनसे भूत, भविष्य तथा वर्तमान होते हैं; ये गणपति सबके पति तथा ईश हैं॥ ८॥

गजमुखाकार 'ग' कण्ठके ऊर्ध्वभागमें स्थित मृत्युलोकसदृश है, 'णकार' जठराकार होकर कण्ठके अधोभागमें स्थित है और शकार कटिके अधोभागमें चरण बनकर स्थित है। इस प्रकार श्रीगणपतिका गणेश नाम भूर्भुवः तथा सुवरूप त्रिभुवनके समान सुशोभित हो रहा है॥ ९॥

तीन वर्णोंका जो यह 'गणेश' ऐसा सुखद एवं सुन्दर नाम है, वह मनुष्योंके द्वारा एक बार भी उच्च स्वरसे उच्चारण किये जानेपर उन्हें पवित्र कर देता है। एक बार भी 'गणेश' नामका जप करनेवालेका पुण्यफल नहीं जाना जा सकता है, तो उनके नामकी सम्पूर्ण महिमा कितनी है, इसे कौन जान सकता है!॥ १०॥

जिस भक्तकी जिह्वामें 'गणेश' ऐसा नाम उच्चरित होता है, सम्पूर्ण गणरूपा सृष्टि उसके सामने उसके मुखकी ओर बार-बार निहारती रहती

स्वरूपस्य ज्ञानं त्वमुक इति नाम्नास्य भवति
प्रबोधः सुप्तस्य त्वखिलमिह सामर्थ्यममुना॥ ११॥
गणेशो विश्वेऽस्मिन्स्थित इह च विश्वं गणपतौ
गणेशो यत्रास्ते धृतिमतिरमैश्वर्यमखिलम्।
समुक्तं नामैकं गणपतिपदं मङ्गलमयं
तदेकास्यं दृष्टेः सकलविबुधास्येक्षणसमम्॥ १२॥
बहुक्लेशैर्व्याप्तैः स्मृत उत गणेशे च हृदये
क्षणात्क्लेशान्मुक्तो भवति सहसा त्वभ्रचयवत्।
वने विद्यारम्भे युधि रिपुभये कुत्र गमने
प्रवेशे प्राणान्ते गणपतिपदं चाशु विशति॥ १३॥

है। इस नामजपमें स्वरूपज्ञान करानेका ऐसा सामर्थ्य है—जैसे किसी सोये हुए व्यक्तिको उसका नाम लेकर पुकारनेपर हो जाता है॥ ११॥

ब्रह्मरूप श्रीगणपति सम्पूर्ण विश्वमें व्याप्त हैं एवं सम्पूर्ण विश्व उन गणपतिमें व्याप्त है। जहाँ मूर्तिमान् श्रीगणेशजी अधिष्ठित होते हैं, वहाँ नैसर्गिक धृति, मति तथा सम्पूर्ण समृद्धि विद्यमान रहती है। श्रीगणेशजीका सम्यक् रीतिसे उच्चारण किया हुआ एक भी नाम सभी मंगलोंका दाता है एवं श्रीगणपतिजीका एक बार दर्शन भी समस्त देवताओंके दर्शनके समान कल्याणकारी है॥ १२॥

हृदयमें गणेशका स्मरण करनेपर अनेक कष्टोंसे सन्तप्त व्यक्ति भी क्षणभरमें [वेगपूर्वक वायुके द्वारा बिखेरे गये] बादलके समान क्लेशसे मुक्त हो जाता है। इसी प्रकार दुर्गम वनप्रान्तमें, विद्यारम्भमें, युद्धादिमें, शत्रुभयमें, [देश-देशान्तरकी] यात्रामें, प्रवेशकालमें, मृत्युके समयमें गणपतिका नामस्मरण करनेसे साधक भक्त शीघ्र ही गणेशजीके पादपद्मोंकी शरण प्राप्त कर लेता है॥ १३॥

गणाध्यक्षो ज्येष्ठः कपिल अपरो मङ्गलनिधि-
र्दयालुर्हेरम्बो वरद इति चिन्तामणिरजः।
वरानीशो ढुण्ढिर्गजवदननामा शिवसुतो
मयूरेशो गौरीतनय इति नामानि पठति॥ १४॥
महेशोऽयं विष्णुः सुकविरविरिन्दुः कमलजः
क्षितिस्तोयं वह्निः श्वसन इति खं त्वद्रिरुदधिः।
कुजस्तारः शुक्रो गुरुरुडुबुधोऽगुश्च धनदो
यमः पाशी काव्यः शनिरखिलरूपो गणपतिः॥ १५॥
मुखं वह्निः पादौ हरिरपि विधाता प्रजननं
रविर्नेत्रे चन्द्रो हृदयमपि कामोऽस्य मदनः।
करौ शक्रः कट्यमवनिरुदरं भाति दशनं
गणेशस्यासन्वै क्रतुमयवपुश्चैव सकलम्॥ १६॥

गणाध्यक्ष, ज्येष्ठ, कपिल, अपर, मंगलनिधि, दयालु, हेरम्ब, वरद, चिन्तामणि, अज, वरानीश (श्रेष्ठ अनीश्वर), ढुंढि, गजवदन, शिवसुत, मयूरेश, गौरीतनय—इन नामोंका जो पाठ करता है, [उसका कल्याण होता है]॥ १४॥

ये गणपति ही शिव, विष्णु, प्रकाशरूप सूर्य, चन्द्र, ब्रह्मा, पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, पर्वत, समुद्र, मंगल, शुक्र, गुरु, बुध, राहु तथा शनि [आदि ग्रहनक्षत्र], कुबेर, यम, वरुण आदि—इन सभी रूपोंमें विराजमान हैं॥ १५॥

गणेशजीका मुख अग्निस्वरूप है, उनके दोनों चरण विष्णुस्वरूप हैं, उनकी जननेन्द्रिय ब्रह्मास्वरूप है, उनके दोनों नेत्र सूर्य एवं चन्द्रस्वरूप हैं, उनका हृदय कामदेवस्वरूप है, उनके हाथ इन्द्रस्वरूप हैं, कटिप्रदेश पृथ्वीस्वरूप और उदर कवचकी भाँति सुशोभित है। श्रीगणेशका सम्पूर्ण विग्रह यज्ञस्वरूप है॥ १६॥

अनर्घ्यालङ्कारैररुणवसनैर्भूषिततनुः
करीन्द्रास्यः सिंहासनमुपगतो भाति बुधराट्।
स्मितः स्यात्तन्मध्येऽप्युदितरविबिम्बोपमरुचिः
स्थिता सिद्धिर्वामे मतिरितरगाचामरकरा॥ १७॥
समन्तात्तस्यासन्प्रवरमुनिसिद्धाः सुरगणाः
प्रशंसन्तीत्यग्रे विविधनुतिभिः साञ्जलिपुटाः।
विडौजाद्यैर्ब्रह्मादिभिरनुवृतो भक्तनिकरै-
र्गणक्रीडामोदप्रमुदविकटाद्यैः सहचरैः॥ १८॥
वशित्वाद्यष्टादशदिगखिलाल्लोलमनुवाग्-
दृतिः पादूःखड्गोऽञ्जनरसबलाः सिद्धय इमाः।

बहुमूल्य अलंकारों तथा अरुण वर्णके वस्त्रोंसे भूषित शरीरवाले, गजराजके समान मुखवाले और ज्ञानियोंमें सर्वश्रेष्ठ गणेशजी सिंहासनपर बैठे हुए सुशोभित हो रहे हैं। उनकी खिली मुसकानमें उदयकालीन सूर्यबिम्बके समान कान्ति है। हाथोंमें चामर धारण किये भगवती सिद्धि उनके वाम भागमें तथा बुद्धि दायें भागमें स्थित हैं॥ १७॥

श्रीगणेशजीको सभी ओरसे घेरकर उनके सम्मुख श्रेष्ठ मुनिगण, सिद्धगण, देवतागण अंजलिबद्ध होकर नाना प्रकारकी स्तुतियोंसे उनकी वन्दना कर रहे हैं। इन्द्र तथा ब्रह्मा आदि देवताओं, भक्त-वृन्दों, क्रीडा-आमोद-प्रमोद करनेवाले विकट आदि गणों तथा अन्य सहचरोंसे ये गणेशजी सदा घिरे रहते हैं॥ १८॥

वशित्व आदि अठारह सिद्धियाँ समस्त दिशाओंमें पदत्राण, खड्ग अंजन आदिसे विभूषित होकर वेदध्वनि करती हुई, हाथोंमें उपहार-

सदा पृष्ठे तिष्ठन्त्यनिमिषदृशस्तन्मुखलया
गणेशं सेवन्तेऽप्यतिनिकटसूपायनकराः ॥ १९ ॥
मृगाङ्कास्या रम्भाप्रभृतिगणिका यस्य पुरतः
सुसंगीतं कुर्वन्त्यपि कुतुकगन्धर्वसहिताः।
मुदः पारो नात्रेत्यनुपमपदे दोर्विगलिता
स्थिरं जातं चित्तं चरणमवलोक्यास्य विमलम् ॥ २० ॥
हरेणायं ध्यातस्त्रिपुरमथने चासुरवधे
गणेशः पार्वत्या बलिविजयकालेऽपि हरिणा।
विधात्रा संसृष्टावुरगपतिना क्षोणिधरणे
नरैः सिद्धौ मुक्तौ त्रिभुवनजये पुष्पधनुषा ॥ २१ ॥

सामग्री लेकर सदा पीठकी ओर रहकर निर्निमेष दृष्टिसे गणेशजीकी ओर उन्मुख होकर उनके समीपमें सेवारत रहती हैं॥ १९॥

चन्द्रमाके समान मुखवाली रम्भा आदि अप्सराएँ कुतुकगंधर्वोंके साथ जिन श्रीगणेशके समक्ष उत्तम नृत्य-संगीत प्रस्तुत कर रही थीं, उनके विमल चरणोंका दर्शन कर लेनेपर उनका चित्त शान्त हो गया और अनुपम स्थितिमें विलीन होनेके कारण उनके आनन्दकी सीमा न रही तथा उनके हस्तसंचालन शिथिल हो गये॥ २०॥

भगवान् शंकरने त्रिपुरासुरके नाश करते समय इन श्रीगणेशका ध्यान किया था, पार्वतीजीने असुरोंके संहारके समय तथा भगवान् विष्णुने [असुरराज] बलिपर विजय प्राप्त करनेके समय इन गणाधिपका स्मरण किया था। ब्रह्माने सृष्टिके समयमें तथा शेषजीने पृथिवी धारण करते समय गणेशजीका स्मरण किया था। कामदेवने त्रिभुवनविजयके लिये तथा मनुष्योंने सिद्धि एवं मुक्तिप्राप्तिहेतु श्रीगणेशजीका स्मरण किया है॥ २१॥

अयं सुप्रासादे सुर इव निजानन्दभुवने
महान् श्रीमानाद्ये लघुतरगृहे रङ्कसदृशः।
शिवद्वारे द्वाःस्थो नृप इव सदा भूपतिगृहे
स्थितो भूत्वोमाङ्के शिशुगणपतिर्लालनपरः॥ २२॥
अमुष्मिन्सन्तुष्टे गजवदन एवापि विबुधे
ततस्ते सन्तुष्टास्त्रिभुवनगताः स्युर्बुधगणाः।
दयालुर्हेरम्बो न च भवति यस्मिंश्च पुरुषे
यथा सर्वं तस्य प्रजननमतः सान्द्रतमसि॥ २३॥
वरेण्यो भूशुण्डिर्भृगुगुरुकुजमुद्गलमुखा-
ह्यपारास्तद्भक्ता जपहवनपूजास्तुतिपराः।
गणेशोऽयं भक्तप्रिय इति च सर्वत्र गदितं
विभक्तिर्यत्रास्ते स्वयमपि सदा तिष्ठति गणः॥ २४॥

श्रीगणेशजी देवालयोंमें देवताके रूपमें, निजानन्द भुवनमें महान् एवं श्रीमान्‌के रूपमें तथा अकिंचनोंके गृहमें तापसरूपमें, भगवान् शंकरके द्वारपर द्वारपालके रूपमें, राजाओंके राजमहलोंमें राजाके रूपमें और माता उमाकी गोदमें प्यार लेनेके लिये शिशुके रूपमें विराजते हैं [अर्थात् वे सर्वव्यापी हैं]॥ २२॥

इन गजानन भगवान् गणेशके प्रसन्न रहनेपर त्रिलोकीके सभी देवता प्रसन्न होते हैं। जिस मनुष्यके ऊपर गणेशकी कृपा नहीं होती, उसका सम्पूर्ण जन्म व्यर्थ हो जाता है तथा वह घोर अन्धकारमें भटकता रहता है॥ २३॥

श्रेष्ठ भुशुण्डि, भृगु, गुरु, मंगल, मुद्‌गल आदि अनेक प्रधान भक्त हुए हैं, जो उनके जप, हवन, पूजन, स्तवन आदिमें सदा संलग्न रहते थे। ये श्रीगणनाथ भक्तवत्सल हैं—यह बात सर्वत्र कही गयी है। जहाँ [भक्तोंके द्वारा] उनकी विशेष भक्ति होती है, वहाँ गणपति स्वयं विराजमान रहते हैं॥ २४॥

मृदः काश्चिद्धातोश्छदविलिखिता वापि दृषदः
स्मृता व्याजान्मूर्तिः पथि यदि बहिर्येन सहसा।
अशुद्धोऽद्धा द्रष्टा प्रवदति तदाह्वां गणपतेः
रुतः शुद्धो मर्त्यो भवति दुरिताद्विस्मय इति॥ २५॥
बहिर्द्वारस्योर्ध्वं गजवदनवर्ष्मेन्धनमयं
प्रशस्तं वा कृत्वा विविधकुशलैस्तत्र निहतम्।
प्रभावात्तन्मूर्त्या भवति सदनं मङ्गलमयं
त्रिलोक्यानन्दस्तां भवति जगतो विस्मय इति॥ २६॥
सिते भाद्रे मासि प्रतिशरदि मध्याह्नसमये
मृदो मूर्तिं कृत्वा गणपतितिथौ ढुण्ढिसदृशीम्।
समर्चत्युत्साहः प्रभवति महान् सर्वसदने
विलोक्यानन्दस्तां प्रभवति नृणां विस्मय इति॥ २७॥

यात्राके समय, बाहर मार्गमें यदि गणेशजीकी मूर्ति मिट्टीकी या धातुकी अथवा शिलापर अंकित ही मिल जाय, तो उसके दर्शनसे गणपति—ऐसा नाम लेनेसे अथवा स्मरण करनेसे दुष्कर्म करनेवाला मन्दभाग्य मनुष्य भी पापसे मुक्त होकर शुद्ध हो जाता है—यह आश्चर्य है॥ २५॥

बाहर द्वारके ऊपर यदि गजानन गणेशजीकी पाषाणकी, काष्ठकी या किसी भी प्रशस्त धातुकी प्रतिमा कुशल कारीगरोंसे निर्मित कराकर लगायी जाय, तो उस मूर्तिके प्रभावसे सम्पूर्ण भवन मंगलमय हो जाता है तथा उसे देखकर जगत्‌में आनन्द व्याप्त होता है—यह आश्चर्य है॥ २६॥

प्रत्येक वर्ष शरद् ऋतुमें भाद्र मासके शुक्लपक्षकी गणेशचतुर्थीको ढुण्ढिसदृश मिट्टीकी मूर्ति बनाकर मध्याह्नमें पूजन-अर्चन करनेसे सभी सदनोंमें महान् उत्साह व्याप्त होता है और उस मूर्तिको देखकर मनुष्योंको आनन्द प्राप्त होता है—यह आश्चर्य है॥ २७॥

तथा ह्येकः श्लोको वरयति महिम्नो गणपतेः
कथं स श्लोकेऽस्मिन् स्तुत इति भवेत्सम्प्रपठिते।
स्मृतं नामास्यैकं सकृदिदमनन्ताह्वयसमं
यतो यस्यैकस्य स्तवनसदृशं नान्यदपरम्॥ २८॥

गजवदन विभो यद्वर्णितं वैभवं ते
त्विह जनुषि ममेत्थं चारु तद्दर्शयाशु।
त्वमसि च करुणायाः सागरः कृत्स्नदाता-
प्यति तव भृतकोऽहं सर्वदा चिन्तकोऽस्मि॥ २९॥

सुस्तोत्रं प्रपठतु नित्यमेतदेव
स्वानन्दं प्रतिगमनेऽप्ययं सुमार्गः।
सन्चिन्त्य स्वमनसि तत्पदारविन्दं
स्थाप्याग्रे स्तवनफलं नतीः करिष्ये॥ ३०॥

इस श्रीगणपतिके महिम्नका एक श्लोक भी स्तवनमें प्रयोग करनेसे गणेशजी अच्छी प्रकारसे पाठ किये गये सम्पूर्ण स्तोत्रके समान कैसे संस्तुत हो जाते हैं? गणेशजीका एक नाम भी एक बार स्मरण करनेसे अनन्त नामोच्चारणका फल प्राप्त हो जाता है। इसलिये इन एक [श्रीगणेश]-के स्तवनके समान अन्य कुछ नहीं है॥ २८॥

हे गजवदन! अपनी शक्ति और बुद्धिके अनुसार मैंने आपकी महिमाका वर्णन किया, आप कृपा करके मुझे इसी जन्ममें शीघ्र उस वैभवका दर्शन कराइये। आप कृपाके सागर हैं, आप भक्तोंको सब कुछ दे देते हैं; मैं आपका दास हूँ और सदा आपका चिन्तन करनेवाला हूँ॥ २९॥

इस मंगलमय स्तोत्रका नित्य पाठ करनेसे आत्मानन्द प्राप्त होता है। यात्राके समय पाठ करनेसे मार्ग शुभ हो जाता है। मैं श्रीगणेशजीके चरणकमलका चिन्तन करता हुआ इस स्तवनके फलको सामने रखकर प्रणाम करता हूँ॥ ३०॥

गणेशदेवस्य माहात्म्यमेत-
द्यः श्रावयेद्वापि पठेच्च तस्य।
क्लेशा लयं यान्ति लभेच्च शीघ्रं
स्त्रीपुत्रविद्यार्थगृहं च मुक्तिम्॥ ३१॥

॥ इति श्रीपुष्पदन्तविरचितं श्रीगणेशमहिम्नःस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

जो भगवान् गणेशजीके इस महिम्नको दूसरोंको सुनायेगा अथवा स्वयं इसका पाठ करेगा, उसके सभी दुःख समाप्त हो जायँगे और वह शीघ्र ही स्त्री, पुत्र, विद्या, सम्पत्ति, गृह तथा मोक्षको प्राप्त करेगा॥ ३१॥

॥ इस प्रकार श्रीपुष्पदन्तविरचित श्रीगणेशमहिम्नःस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

'नमामि त्वां गणाधिप!'

गणाधिप नमस्तुभ्यं सर्वविघ्नप्रशान्तिद।
उमानन्दप्रद प्राज्ञ त्राहि मां भवसागरात्॥
हरानन्दकर ध्यानज्ञानविज्ञानद प्रभो।
विघ्नराज नमस्तुभ्यं सर्वदैत्यैकसूदन॥
सर्वप्रीतिप्रद श्रीद सर्वयज्ञैकरक्षक।
सर्वाभीष्टप्रद प्रीत्या नमामि त्वां गणाधिप॥

(पद्मपुराण, सृष्टि० ६१। २६—२८)

श्रीगणेशजी! आपको नमस्कार है। आप सम्पूर्ण विघ्नोंकी शान्ति करनेवाले, उमाके लिये आनन्ददायक तथा परम बुद्धिमान् हैं, आप भवसागरसे मेरा उद्धार कीजिये। विघ्नराज! आप भगवान् शंकरको आनन्दित करनेवाले, अपना ध्यान करनेवालोंको ज्ञान और विज्ञानके प्रदाता तथा सम्पूर्ण दैत्योंके एकमात्र संहारक हैं, आपको नमस्कार है। गणपते! आप सबको प्रसन्नता और लक्ष्मी देनेवाले, सम्पूर्ण यज्ञोंके एकमात्र रक्षक तथा सब प्रकारके मनोरथोंको पूर्ण करनेवाले हैं, मैं प्रेमपूर्वक आपको प्रणाम करता हूँ।

श्रीएकदन्तशरणागतिस्तोत्रम्

देवर्षय ऊचुः

सदात्मरूपं सकलादिभूत-
ममायिनं सोऽहमचिन्त्यबोधम्।
अनादिमध्यान्तविहीनमेकं
तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥ १॥

अनन्तचिद्रूपमयं गणेश-
मभेदभेदादिविहीनमाद्यम्।
हृदि प्रकाशस्य धरं स्वधीस्थं
तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥ २॥

समाधिसंस्थं हृदि योगिनां यं
प्रकाशरूपेण विभातमेतम्।
सदा निरालम्बसमाधिगम्यं
तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥ ३॥

देवर्षिगण बोले—जो सदात्मस्वरूप, सबके आदिकारण, मायारहित तथा 'सोऽहमस्मि' (वह परमात्मा मैं हूँ)—इस अचिन्त्य बोधसे सम्पन्न हैं; जिनका आदि, मध्य और अन्त नहीं है, उन एक—अद्वितीय एकदन्तधारी भगवान् गणेशकी हम शरण लेते हैं॥ १॥

जो अनन्त चिन्मय हैं; अभेद और भेद आदिसे परे हैं; आदिपुरुष हैं और हृदयमें ज्ञानमय प्रकाश धारण करते हैं, अपनी बुद्धिमें स्थित हुए उन एकदन्त गणेशकी हम शरण लेते हैं॥ २॥

जो सदा समाधिस्थ रहते हैं, योगियोंके हृदयमें प्रकाशरूपसे उद्भासित होते हैं और सदा निरालम्ब समाधिके द्वारा अनुभवमें आनेवाले हैं, उन एकदन्तधारी भगवान् गणेशकी हम शरण लेते हैं॥ ३॥

स्वबिम्बभावेन विलासयुक्तां
प्रत्यक्षमायां विविधस्वरूपाम्।
स्ववीर्यकं तत्र ददाति यो वै
तमेकदन्तं शरणं व्रजामः ॥ ४ ॥

त्वदीयवीर्येण समर्थभूत-
स्वमायया संरचितं च विश्वम्।
तुरीयकं ह्यात्मप्रतीतिसंज्ञं
तमेकदन्तं शरणं व्रजामः ॥ ५ ॥

त्वदीयसत्ताधरमेकदन्तं
गुणेश्वरं यं गुणबोधितारम्।
भजन्तमत्यन्तमजं त्रिसंस्थं
तमेकदन्तं शरणं व्रजामः ॥ ६ ॥

जो स्वीय बिम्बभावसे विलासशीला, विविधस्वरूपा, प्रत्यक्ष दृश्यरूपा माया है, उसमें जो अपने वीर्य (बल)-का आधान करते हैं, उन एकदन्तधारी भगवान् गणेशकी हम शरण लेते हैं॥ ४॥

[हे प्रभो!] आपके ही वीर्यसे—बल-वैभवसे सामर्थ्यशालिनी हुई जो आपकी मायाशक्ति है, उसीके द्वारा इस सम्पूर्ण विश्वकी संरचना हुई है। आप जाग्रत्, स्वप्न और सुषुप्ति—इन तीनों अवस्थाओंसे परे, आत्मबोधस्वरूप, तुरीय परमात्मा हैं। ऐसे एकदन्तधारी भगवान् गणेशकी हम शरण लेते हैं॥ ५॥

[हे भगवन्!] आपकी ही सत्ता धारण करनेवाले भक्त एकदन्त (अपूर्व दानी) हैं, वे तीनों गुणोंके स्वामी होते हुए उन गुणोंका बोध करानेवाले हैं। वे आप अजन्मा परमेश्वरके अत्यन्त भजनमें संलग्न हैं। तीनों लोकों, तीनों गुणों, तीनों अवस्थाओं एवं तीनों देवोंमें विद्यमान उन एकदन्त गणेशकी हम शरण लेते हैं॥ ६॥

ततस्त्वया प्रेरितनादकेन
सुषुप्तिसंज्ञं रचितं जगद् वै।
समानरूपं ह्युभयत्रसंस्थं
तमेकदन्तं शरणं व्रजामः ॥ ७ ॥
तदेव विश्वं कृपया प्रभूतं
द्विभावमादौ तमसा विभान्तम्।
अनेकरूपं च तथैकभूतं
तमेकदन्तं शरणं व्रजामः ॥ ८ ॥
ततस्त्वया प्रेरितकेन सृष्टं
बभूव सूक्ष्मं जगदेकसंस्थम्।
सुसात्त्विकं स्वप्नमनन्तमाद्यं
तमेकदन्तं शरणं व्रजामः ॥ ९ ॥
तदेव स्वप्नं तपसा गणेश
सुसिद्धरूपं विविधं बभूव।

[हे प्रभो!] फिर आपके द्वारा प्रेरित नादने सुषुप्ति-नामक जगत्की सृष्टि की है। दोनों अवस्थाओंमें समानरूपसे विराजमान आप एकदन्तकी हम शरण लेते हैं॥ ७॥

वह सुषुप्ति-संज्ञक जगत् ही, जो आदिकालमें तमसे आच्छन्न था, आपकी कृपासे दो रूपोंमें प्रकट हुआ। जो अनेकरूप होते हुए भी एकरूप हैं, उन भगवान् एकदन्तकी हम शरण लेते हैं॥ ८॥

तदनन्तर आपके द्वारा प्रेरित बिन्दुसे सूक्ष्म जगत्की सृष्टि हुई, जो एकमात्र आपमें ही स्थित है। जो परम सात्त्विक, स्वप्नमय, अनन्त एवं सबके आदिकारण हैं, उन भगवान् एकदन्तकी हम शरण लेते हैं॥ ९॥

हे गणेश! वह सूक्ष्म जगत् ही स्वप्न है, जो आपके संकल्पमय तपसे सुसिद्धरूप हो विविध भावोंमें प्रकट हुआ। वह आपकी कृपासे सदा

सदैकरूपं कृपया च तेऽद्य
तमेकदन्तं शरणं व्रजामः ॥ १० ॥
त्वदाज्ञया तेन त्वया हृदिस्थं
तथा सुसृष्टं जगदंशरूपम्।
विभिन्नजाग्रन्मयमप्रमेयं
तमेकदन्तं शरणं व्रजामः ॥ ११ ॥
तदेव जाग्रद्रजसा विभातं
विलोकितं त्वत्कृपया स्मृतेन।
बभूव भिन्नं च सदैकरूपं
तमेकदन्तं शरणं व्रजामः ॥ १२ ॥
सदेव सृष्ट्वा प्रकृतिस्वभावा-
त्तदन्तरे त्वं च विभासि नित्यम्।
धियः प्रदाता गणनाथ एक-
स्तमेकदन्तं शरणं व्रजामः ॥ १३ ॥

एकरूपमें स्थित है। आज हम उन्हीं भगवान् एकदन्तकी शरण लेते हैं ॥ १० ॥

आपकी आज्ञासे क्रियाशील हुए उस स्वप्नके द्वारा आपने ही अपने हृदयमें विराजमान जगत्के अंशरूप जगत्की उत्तम सृष्टि की है। वह विभिन्न जाग्रत्कालीन वस्तुओंसे उपलक्षित है। हम अप्रमेय शक्तिशाली उन भगवान् एकदन्तकी शरण लेते हैं ॥ ११ ॥

वही जाग्रत् जगत् रजोगुणसे व्यक्त होकर आपकी कृपा एवं स्मृतिसे प्रत्यक्ष दिखायी देता है। जो सदा एकरूप होते हुए भी विभिन्न रूपोंमें प्रकट हुए हैं, उन भगवान् एकदन्तकी हम शरण लेते हैं ॥ १२ ॥

प्रकृतिके स्वभावसे सद्रूप जगत्की ही सृष्टि करके आप उसके भीतर नित्य विराज रहे हैं। एकमात्र गणनाथ ही बुद्धिके दाता हैं। हम उन्हीं भगवान् एकदन्तकी शरण लेते हैं ॥ १३ ॥

त्वदाज्ञया भान्ति ग्रहाश्च सर्वे
प्रकाशरूपाणि विभान्ति खे वै।
भ्रमन्ति नित्यं स्वविहारकार्या-
स्तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥ १४॥

त्वदाज्ञया सृष्टिकरो विधाता
त्वदाज्ञया पालक एकविष्णुः।
त्वदाज्ञया संहरको हरोऽपि
तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥ १५॥

यदाज्ञया भूमिजलेऽत्र संस्थे
यदाज्ञयापः प्रवहन्ति नद्यः।
स्वतीर्थसंस्थश्च कृतः समुद्र-
स्तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥ १६॥

[हे भगवन्!] आपकी ही आज्ञासे आकाशमें समस्त ग्रह तथा प्रकाशरूप तारे विभासित हो रहे हैं। वे आपके आदेशसे ही नित्य अपने विहार-कार्यका सम्पादन करते हुए भ्रमण करते हैं। उन्हीं आप भगवान् एकदन्तकी हम शरण लेते हैं॥ १४॥

[हे प्रभो!] आपकी आज्ञासे विधाता सृष्टिरचना करते हैं, आपकी आज्ञासे अद्वितीय विष्णु सृष्टिका पालन करते हैं और महादेवजी भी आपकी आज्ञासे ही सबका संहार करते हैं। हम उन्हीं आप भगवान् एकदन्तकी शरण लेते हैं॥ १५॥

जिनकी आज्ञासे यहाँ भूमि और जल स्थित हैं, जिनके आदेशसे जलस्वरूपा नदियाँ बहती हैं तथा जिनकी आज्ञासे ही समुद्र अपने तीर्थोंकी सीमामें विराजमान रहता है, उन भगवान् एकदन्तकी हम शरण लेते हैं॥ १६॥

यदाज्ञया देवगणा दिविस्था
ददन्ति वै कर्मफलानि नित्यम्।
यदाज्ञया शैलगणाः स्थिरा वै
तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥ १७॥

यदाज्ञया शेषधराधरो वै
यदाज्ञया मोहप्रदश्च कामः।
यदाज्ञया कालधरोऽर्यमा च
तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥ १८॥

यदाज्ञया वाति विभाति वायु
र्यदाज्ञयाग्निर्जठरादिसंस्थः।
यदाज्ञयेदं सचराचरं च
तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥ १९॥

जिनकी आज्ञासे प्रेरित हो स्वर्गवासी देवता सदा कर्मफल प्रदान करते हैं तथा जिनके आदेशसे ही पर्वतोंके समूह सुस्थिर रहते हैं, उन भगवान् एकदन्तकी हम शरण लेते हैं॥ १७॥

जिनकी आज्ञासे शेषनाग पृथ्वीको धारण करते हैं; जिनकी प्रेरणासे कामदेव सबको मोहमें डालता है तथा जिनकी आज्ञासे सूर्यदेव कालचक्र धारण करते हैं, उन भगवान् एकदन्तकी हम शरण लेते हैं॥ १८॥

जिनकी आज्ञासे वायु प्रवहमान होती है, जिनके आदेशसे जठरादि स्थानोंमें स्थित अग्निदेव उद्दीप्त रहते हैं तथा जिनकी प्रेरणासे ही चराचर प्राणियोंसहित यह सम्पूर्ण जगत् संचालित होता है, उन भगवान् एकदन्तकी हम शरण लेते हैं॥ १९॥

यदन्तरे संस्थितमेकदन्त-
स्तदाज्ञया सर्वमिदं विभाति।
अनन्तरूपं हृदि बोधकं य-
स्तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥ २०॥
सुयोगिनो योगबलेन साध्यं
प्रकुर्वते कः स्तवनेन स्तौति।
अतः प्रणामेन सुसिद्धिदोऽस्तु
तमेकदन्तं शरणं व्रजामः॥ २१॥

गृत्समद उवाच

एवं स्तुत्वा गणेशानं देवाः समुनयः प्रभुम्।
तूष्णींभावं प्रपद्यैव ननृतुर्हर्षसंयुताः॥ २२॥
स तानुवाच प्रीतात्मा देवर्षीणां स्तवेन वै।
एकदन्तो महाभागो देवर्षीन् भक्तवत्सलः॥ २३॥

सबके अन्तःकरणमें भगवान् एकदन्त विराज रहे हैं; उन्हींकी आज्ञासे यह सम्पूर्ण जगत् विभासित होता है। जिनका रूप अनन्त है, जो सबके हृदयमें रहकर बोध उत्पन्न करते हैं, उन भगवान् एकदन्तकी हम शरण लेते हैं॥ २०॥

जिन्हें उत्तम योगीजन योगबलसे साध्य (उपलब्ध) करते हैं, उनकी स्तोत्रोंद्वारा स्तुति कौन कर सकता है! अतः वे प्रणाममात्रसे हमारे लिये उत्तम सिद्धिदाता हों। हम उन भगवान् एकदन्तकी शरण लेते हैं॥ २१॥

गृत्समद बोले—इस प्रकार ऋषि-मुनियोंसहित देवता भगवान् गणेशकी स्तुति करके मौन हो हर्षोल्लासके साथ नृत्य करने लगे। देवर्षियोंद्वारा किये गये स्तवनसे प्रसन्नचित्त हो भक्तवत्सल महाभाग एकदन्तने उनसे कहा॥ २२-२३॥

एकदन्त उवाच

स्तोत्रेणाहं प्रसन्नोऽस्मि सुराः सर्षिगणाः किल।
वरदोऽहं वृणुत वो दास्यामि मनसीप्सितम्॥ २४॥
भवत्कृतं मदीयं यत् स्तोत्रं प्रीतिप्रदं च तत्।
भविष्यति न संदेहः सर्वसिद्धिप्रदायकम्॥ २५॥
यं यमिच्छति तं तं वै दास्यामि स्तोत्रपाठतः।
पुत्रपौत्रादिकं सर्वं कलत्रं धनधान्यकम्॥ २६॥
गजाश्वादिकमत्यन्तं राज्यभोगादिकं ध्रुवम्।
भुक्तिं मुक्तिं च योगं वै लभते शान्तिदायकम्॥ २७॥
मारणोच्चाटनादीनि राजबन्धादिकं च यत्।
पठतां शृण्वतां नृणां भवेच्च बन्धहीनता॥ २८॥

एकदन्त बोले—हे ऋषि और देवताओ! मैं तुम्हारे द्वारा की गयी स्तुतिसे बहुत प्रसन्न हूँ; वर देनेको उद्यत हूँ। अतः माँगो, मैं तुम्हें मनोवांछित वस्तु दूँगा॥ २४॥

तुमलोगोंके द्वारा जो मेरा स्तवन किया गया है, वह प्रीति प्रदान करनेवाला है। इसमें संदेह नहीं कि वह तुम्हारे लिये सम्पूर्ण सिद्धियोंको देनेवाला होगा॥ २५॥

इस स्तोत्रके पाठसे मनुष्य जिस-जिस वस्तुको पानेकी इच्छा करता है, वह सब मैं उसे दूँगा। पुत्र-पौत्र आदि, कलत्र, धन-धान्य, हाथी-घोड़े तथा राज्यभोग आदि सब वस्तुएँ उसे निश्चय ही अतिशय मात्रामें प्राप्त होंगी। स्तोत्र-पाठ करनेवाला मनुष्य भोग, मोक्ष तथा शान्तिदायक योग भी प्राप्त कर लेगा॥ २६-२७॥

मारण, उच्चाटन और मोहन आदि प्रयोग उसके ऊपर सफल न होंगे। राजाके द्वारा बन्धन आदिकी प्राप्तिका कष्ट भी दूर हो जायगा। इसका पाठ और श्रवण करनेवाले मनुष्य बन्धनहीन हो जायँगे॥ २८॥

एकविंशतिवारं यः श्लोकानेवैकविंशतीन्।
पठेच्च हृदि मां स्मृत्वा दिनानि त्वेकविंशतिम्॥ २९॥
न तस्य दुर्लभं किञ्चित् त्रिषु लोकेषु वै भवेत्।
असाध्यं साधयेन्मर्त्यः सर्वत्र विजयी भवेत्॥ ३०॥
नित्यं यः पठति स्तोत्रं ब्रह्मभूतः स वै नरः।
तस्य दर्शनतः सर्वे देवाः पूता भवन्ति च॥ ३१॥

॥ इति श्रीमुद्गलपुराणे श्रीएकदन्तशरणागतिस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

जो अपने मनमें मेरा चिन्तन करते हुए इन इक्कीस श्लोकोंका इक्कीस दिनोंतक प्रतिदिन इक्कीस बार पाठ करेगा, उसके लिये तीनों लोकोंमें कुछ भी दुर्लभ नहीं रहेगा। वह मनुष्य असाध्य कार्यका भी साधन कर लेगा और सर्वत्र विजयी होगा॥ २९-३०॥

जो प्रतिदिन इस स्तोत्रका पाठ करता है, वह मनुष्य ब्रह्मभूत होता है। उसके दर्शनसे समस्त देवता पवित्र हो जाते हैं॥ ३१॥

॥ इस प्रकार श्रीमुद्गलपुराणमें श्रीएकदन्तशरणागतिस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीमयूरेशस्तोत्रम्

ब्रह्मोवाच

पुराणपुरुषं देवं नानाक्रीडाकरं मुदा।
मायाविनं दुर्विभाव्यं मयूरेशं नमाम्यहम्॥ १॥

ब्रह्माजी बोले—जो पुराणपुरुष हैं और प्रसन्नतापूर्वक नाना प्रकारकी क्रीडाएँ करते हैं; जो मायाके स्वामी हैं तथा जिनका स्वरूप दुर्विभाव्य (अचिन्त्य)है, उन मयूरेश गणेशको मैं प्रणाम करता हूँ॥ १॥

परात्परं चिदानन्दं निर्विकारं हृदि स्थितम्।
गुणातीतं गुणमयं मयूरेशं नमाम्यहम्॥ २॥
सृजन्तं पालयन्तं च संहरन्तं निजेच्छया।
सर्वविघ्नहरं देवं मयूरेशं नमाम्यहम्॥ ३॥
नानादैत्यनिहन्तारं नानारूपाणि बिभ्रतम्।
नानायुधधरं भक्त्या मयूरेशं नमाम्यहम्॥ ४॥
इन्द्रादिदेवतावृन्दैरभिष्टुतमहर्निशम्।
सदसद्व्यक्तमव्यक्तं मयूरेशं नमाम्यहम्॥ ५॥
सर्वशक्तिमयं देवं सर्वरूपधरं विभुम्।
सर्वविद्याप्रवक्तारं मयूरेशं नमाम्यहम्॥ ६॥

जो परात्पर, चिदानन्दमय, निर्विकार, सबके हृदयमें अन्तर्यामी-रूपसे स्थित, गुणातीत एवं गुणमय हैं, उन मयूरेशको मैं नमस्कार करता हूँ॥ २॥

जो स्वेच्छासे ही संसारकी सृष्टि, पालन और संहार करते हैं, उन सर्वविघ्नहारी देवता मयूरेशको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ३॥

जो अनेकानेक दैत्योंके प्राणनाशक हैं और नाना प्रकारके रूप धारण करते हैं, उन नाना अस्त्र-शस्त्रधारी मयूरेशको मैं भक्तिभावसे नमस्कार करता हूँ॥ ४॥

इन्द्र आदि देवताओंका समुदाय दिन-रात जिनका स्तवन करता है तथा जो सत्, असत् , व्यक्त और अव्यक्तरूप हैं, उन मयूरेशको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ५॥

जो सर्वशक्तिमय, सर्वरूपधारी, सर्वव्यापक और सम्पूर्ण विद्याओंके प्रवक्ता हैं, उन भगवान् मयूरेशको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ६॥

पार्वतीनन्दनं शम्भोरानन्दपरिवर्धनम्।
भक्तानन्दकरं नित्यं मयूरेशं नमाम्यहम्॥ ७॥
मुनिध्येयं मुनिनुतं मुनिकामप्रपूरकम्।
समष्टिव्यष्टिरूपं त्वां मयूरेशं नमाम्यहम्॥ ८॥
सर्वाज्ञाननिहन्तारं सर्वज्ञानकरं शुचिम्।
सत्यज्ञानमयं सत्यं मयूरेशं नमाम्यहम्॥ ९॥
अनेककोटिब्रह्माण्डनायकं जगदीश्वरम्।
अनन्तविभवं विष्णुं मयूरेशं नमाम्यहम्॥ १०॥

मयूरेश उवाच

इदं ब्रह्मकरं स्तोत्रं सर्वपापप्रणाशनम्।
सर्वकामप्रदं नृणां सर्वोपद्रवनाशनम्॥ ११॥

जो पार्वतीजीको पुत्ररूपसे आनन्द प्रदान करते और भगवान् शंकरका भी आनन्द बढ़ाते हैं, उन भक्तानन्दवर्धन मयूरेशको मैं नित्य नमस्कार करता हूँ॥ ७॥

मुनि जिनका ध्यान करते हैं, मुनि जिनके गुण गाते हैं तथा जो मुनियोंकी कामना पूर्ण करते हैं, उन आप समष्टि-व्यष्टिरूप मयूरेशको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ८॥

जो समस्त वस्तुविषयक अज्ञानके निवारक, सम्पूर्ण ज्ञानके उद्भावक, पवित्र, सत्य-ज्ञानस्वरूप तथा सत्यनामधारी हैं, उन मयूरेशको मैं नमस्कार करता हूँ॥ ९॥

जो अनेक कोटि ब्रह्माण्डके नायक, जगदीश्वर, अनन्त वैभवसम्पन्न तथा सर्वव्यापी विष्णुरूप हैं, उन मयूरेशको मैं प्रणाम करता हूँ॥ १०॥

मयूरेश बोले—यह स्तोत्र ब्रह्मभावकी प्राप्ति करानेवाला और समस्त पापोंका नाशक है, मनुष्योंको सम्पूर्ण मनोवांछित वस्तु देनेवाला तथा सारे उपद्रवोंका शमन करनेवाला है॥ ११॥

कारागृहगतानां च मोचनं दिनसप्तकात्।
आधिव्याधिहरं चैव भुक्तिमुक्तिप्रदं शुभम्॥ १२॥

॥ इति श्रीमयूरेशस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

सात दिन इसका पाठ किया जाय तो कारागारमें पड़े हुए मनुष्योंको भी छुड़ा लाता है। यह शुभ स्तोत्र आधि (मानसिक चिन्ता) तथा व्याधि (शरीरगत रोग)को भी हर लेता है और भोग एवं मोक्ष प्रदान करता है॥ १२॥

॥ इस प्रकार श्रीमयूरेशस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीमयूरेश्वरस्तोत्रम्

परब्रह्मरूपं चिदानन्दरूपं
सदानन्दरूपं सुरेशं परेशम्।
गुणाब्धिं गुणेशं गुणातीतमीशं
मयूरेशमाद्यं नताः स्मो नताः स्मः॥ १॥

जगद्वन्द्यमेकं परोंकारमेकं
गुणानां परं कारणं निर्विकल्पम्।
जगत्पालकं हारकं तारकं तं
मयूरेशमाद्यं नताः स्मो नताः स्मः॥ २॥

जो परब्रह्मस्वरूप, चिदानन्दमय, सदानन्दरूप, देवेश्वर, परमेश्वर, गुणोंके सागर, गुणोंके स्वामी तथा गुणोंसे अतीत हैं, उन आदि ईश्वर मयूरेश्वरको हम नमस्कार करते हैं, नमस्कार करते हैं॥ १॥

जो एकमात्र विश्ववन्द्य और एकमात्र परम ओंकारस्वरूप हैं, जो गुणोंके परम कारण एवं निर्विकल्प हैं, उन जगत्‌के पालक, संहारक एवं उद्धारक आदि-मयूरेश्वरको हम नमस्कार करते हैं, नमस्कार करते हैं॥ २॥

महादेवसूनुं महादैत्यनाशं
महापूरुषं सर्वदा विघ्ननाशम्।
सदा भक्तपोषं परं ज्ञानकोशं
मयूरेशमाद्यं नताः स्मो नताः स्मः॥ ३॥
अनादिं गुणादिं सुरादिं शिवाया
महातोषदं सर्वदा सर्ववन्द्यम्।
सुरार्यन्तकं भुक्तिमुक्तिप्रदं तं
मयूरेशमाद्यं नताः स्मो नताः स्मः॥ ४॥
परं मायिनं मायिनामप्यगम्यं
मुनिध्येयमाकाशकल्पं जनेशम्।
असंख्यावतारं निजाज्ञाननाशं
मयूरेशमाद्यं नताः स्मो नताः स्मः॥ ५॥

जो महादेवजीके पुत्र, महान् दैत्योंके नाशक, महापुरुष, सदा विघ्नविनाशक तथा सदैव भक्तोंके पोषक हैं, उन परम ज्ञानके कोष आदिमयूरेश्वरको हम नमस्कार करते हैं, नमस्कार करते हैं॥ ३॥

जिनका कोई आदि नहीं है, जो समस्त गुणोंके आदिकारण तथा देवताओंके भी आदि-उद्भावक हैं, पार्वतीदेवीको महान् सन्तोष देनेवाले तथा सबके द्वारा सदा ही वन्दनीय हैं, उन दैत्यनाशक एवं भोग तथा मोक्षके प्रदाता आदिमयूरेश्वरको हम नमस्कार करते हैं, नमस्कार करते हैं॥ ४॥

जो परम मायावी (मायाके अधिपति) और मायावियोंके लिये भी अगम्य हैं, महर्षिगण जिनका सदा ध्यान करते हैं, जो अनादि आकाशके तुल्य सर्वव्यापक हैं, जीवमात्रके स्वामी हैं तथा जिनके असंख्य अवतार हैं, उन आत्मतत्त्वविषयक अज्ञानके नाशक आदिमयूरेश्वरको हम नमस्कार करते हैं, नमस्कार करते हैं॥ ५॥

अनेकक्रियाकारणं श्रुत्यगम्यं
त्रयीबोधितानेककर्मादिबीजम्।
क्रियासिद्धिहेतुं सुरेन्द्रादिसेव्यं
मयूरेशमाद्यं नताः स्मो नताः स्मः॥ ६॥
महाकालरूपं निमेषादिरूपं
कलाकल्परूपं सदागम्यरूपम्।
जनज्ञानहेतुं नृणां सिद्धिदं तं
मयूरेशमाद्यं नताः स्मो नताः स्मः॥ ७॥
महेशादिदेवैः सदा सेव्यपादं
सदा रक्षकं योगिनां चित्स्वरूपम्।
सदा कामरूपं कृपाम्भोनिधिं तं
मयूरेशमाद्यं नताः स्मो नताः स्मः॥ ८॥

जो अनेकानेक क्रियाओंके कारण हैं, जिनका स्वरूप श्रुतियोंके लिये भी अगम्य है, जो वेदबोधित अनेकानेक कर्मोंके आदिबीज हैं, समस्त कार्योंकी सिद्धिके हेतु हैं तथा देवेन्द्र आदि जिनकी सदा सेवा करते हैं, उन आदिमयूरेश्वरको हम नमस्कार करते हैं, नमस्कार करते हैं॥ ६॥

जो महाकालस्वरूप हैं, लव-निमेष आदि भी जिनके ही स्वरूप हैं, जो कला और कल्परूप हैं तथा जिनका स्वरूप सदा ही अगम्य है, जो लोगोंके ज्ञानके हेतु तथा मनुष्योंको सब प्रकारकी सिद्धि प्रदान करनेवाले हैं, उन आदिमयूरेश्वरको हम नमस्कार करते हैं, नमस्कार करते हैं॥ ७॥

महेश्वर आदि देवता सदा जिनके चरणोंकी सेवा करते हैं, जो योगियोंके नित्य रक्षक, चित्स्वरूप, निरन्तर इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले और करुणाके सागर हैं, उन आदिमयूरेश्वरको हम नमस्कार करते हैं, नमस्कार करते हैं॥ ८॥

सर्वत्र जयमाप्नोति श्रियं परमदुर्लभाम्।
पुत्रवान् धनवांश्चैव वशतामखिलं नयेत्॥ १३॥

॥ इति श्रीगणेशपुराणे श्रीमयूरेश्वरस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

सर्वत्र विजय प्राप्त होती है; परम दुर्लभ लक्ष्मी उपलब्ध होती है। वह पुत्रवान् और धनवान् होता है तथा सबको वशमें कर लेता है॥ ११—१३॥

॥ इस प्रकार श्रीगणेशपुराणमें श्रीमयूरेश्वरस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणेशभुजङ्गस्तोत्रम्

रणत्क्षुद्रघण्टानिनादाभिरामं
चलत्ताण्डवोद्दण्डवत्पद्मतालम्।
लसत्तुन्दिलाङ्गोपरिव्यालहारं
गणाधीशमीशानसूनुं तमीडे॥ १॥
ध्वनिध्वंसवीणालयोल्लासिवक्त्रं
स्फुरच्छुण्डदण्डोल्लसद्बीजपूरम्।

शिवपुत्र उन गणपतिकी मैं वन्दना करता हूँ, जिनके गलेमें छोटी-छोटी घण्टियाँ मधुर ध्वनि करती हुई सुशोभित हैं, जिनके चलनेसे ताण्डव नृत्यकी भाँति चरणताल उठती है और जिनके तुंदिलांग (तोंद)-पर सर्पहार शोभा पा रहा है॥ १॥

शिवपुत्र उन गणपतिकी मैं वन्दना करता हूँ, जिनके प्रफुल्लित मुखारविन्दसे निकली ध्वनि वीणाकी लय-माधुरीको मात करती है, जिनके स्फुरित शुण्ड-दण्डमें बीजपूर (बिजौरा नींबू)-का फल सुशोभित

गलद्दर्पसौगन्ध्यलोलालिमालं
गणाधीशमीशानसूनुं तमीडे ॥ २ ॥
प्रकाशज्जपारक्तरत्नप्रसून-
प्रवालप्रभातारुणज्योतिरेकम् ।
प्रलम्बोदरं वक्रतुण्डैकदन्तं
गणाधीशमीशानसूनुं तमीडे ॥ ३ ॥
विचित्रस्फुरद्रत्नमालाकिरीटं
किरीटोल्लसच्चन्द्ररेखाविभूषम् ।
विभूषैकभूषं भवध्वंसहेतुं
गणाधीशमीशानसूनुं तमीडे ॥ ४ ॥
उदञ्चद्भुजावल्लरीदृश्यमूलो-
च्चलद्भ्रूलताविभ्रमभ्राजदक्षम् ।
मरुत्सुन्दरीचामरैः सेव्यमानं
गणाधीशमीशानसूनुं तमीडे ॥ ५ ॥

है, जिनके मस्तकसे द्रवित मदजलकी सुगन्धसे भ्रमरपंक्ति आकर्षित होकर मँडरा रही है॥ २॥

शिवपुत्र उन गणपतिकी मैं वन्दना करता हूँ, जिनके श्रीविग्रहका अद्वितीय उज्ज्वल प्रकाश जपाकुसुम, माणिक्य, रक्तपुष्प, मूँगे और प्रातःकालकी अरुणिम आभाके समान सुशोभित है और जो लम्बोदर, वक्रतुण्ड और एकदन्त हैं॥ ३॥

शिवपुत्र उन गणपतिकी मैं वन्दना करता हूँ, जिनके मुकुटमें नाना दिव्य रत्नोंकी मालाएँ तथा चन्द्रमाकी ज्योतिष्मती रेखा सुशोभित है और जो दिव्य अद्वितीय प्रकाशसे अलंकृत एवं भवरोगके नाशक हैं॥ ४॥

शिवपुत्र उन गणपतिकी मैं वन्दना करता हूँ, जिनकी सेवामें देवकन्याएँ हाथ उठाकर अपनी कटाक्षशोभासे मण्डित चामरोंसे व्यजन करती हैं॥ ५॥

स्फुरन्निष्ठुरालोलपिङ्गाक्षितारं
कृपाकोमलोदारलीलावतारम् ।
कलाबिन्दुगं गीयते योगिवर्यै-
र्गणाधीशमीशानसूनुं तमीडे ॥ ६ ॥
यमेकाक्षरं निर्मलं निर्विकल्पं
गुणातीतमानन्दमाकारशून्यम् ।
परं पारमोंकारमाम्नायगर्भं
वदन्ति प्रगल्भं पुराणं तमीडे ॥ ७ ॥
चिदानन्दसान्द्राय शान्ताय तुभ्यं
नमो विश्वकर्त्रे च हर्त्रे च तुभ्यम्।
नमोऽनन्तलीलाय कैवल्यभासे
नमो विश्वबीज प्रसीदेशसूनो ॥ ८ ॥

शिवपुत्र उन गणपतिकी मैं वन्दना करता हूँ, जिनके नेत्रोंकी पुतली दुष्टजनोंके प्रति क्रोधसे लाल और चंचल रहती है तथा जो भक्तोंके प्रति कृपासे कोमल और उदार लीलाएँ करते हैं और श्रेष्ठ योगीजन कला और बिन्दुसहित 'गं' महामन्त्रसे उनका स्तुतिगान करते हैं॥ ६॥

जिन गणपतिको एकाक्षर मन्त्ररूप, निर्मल, निर्विकल्प, गुणातीत, आनन्दरूप, शून्याकार (निराकार) और परात्पर तत्त्व, वेदगर्भ तथा ओंकाररूप कहा गया है, उन पुरातन श्रेष्ठ तत्त्वकी मैं वन्दना करता हूँ॥ ७॥

हे विश्वबीज! हे शिवपुत्र! आप प्रसन्न हों। चिदानन्दघनस्वरूप, शान्तस्वरूप आपको नमस्कार है, संसारके सृष्टिकर्ता और संहारक आपको नमस्कार है, अनन्त लीला करनेवाले, कैवल्यात्मा आपको नमस्कार है॥ ८॥

इमं सुस्तवं प्रातरुत्थाय भक्त्या
पठेद्यस्तु मर्त्यो लभेत्सर्वकामान्।
गणेशप्रसादेन सिध्यन्ति वाचो
गणेशे विभौ दुर्लभं किं प्रसन्ने॥ ९॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यकृतं श्रीगणेशभुजङ्गस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

जो मनुष्य प्रातःकाल उठकर भक्तिपूर्वक इस सुन्दर स्तोत्रका पाठ करता है, वह सारी मनोकामनाओंको प्राप्त कर लेता है तथा भगवान् गणपतिकी कृपासे उसे वाक्सिद्धि प्राप्त हो जाती है। सर्वव्यापी भगवान् गणेशके प्रसन्न होनेपर कुछ भी दुर्लभ नहीं है॥ ९॥

॥ श्रीशंकराचार्यरचित श्रीगणेशभुजंगस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणेशस्तुतिः

देवा ऊचुः

यः सर्वकार्येषु सदा सुराणा-
मपीशविष्ण्वम्बुजसम्भवानाम्।
पूज्यो नमस्यः परिचिन्तनीय-
स्तं विघ्नराजं शरणं व्रजामः॥ १॥
न विघ्नराजेन समोऽस्ति कश्चिद्-
देवो मनोवाञ्छितसम्प्रदाता।

देवता बोले—सदा सब कार्योंमें सम्पूर्ण देवता तथा शिव, विष्णु और ब्रह्माजी भी जिनका पूजन, नमस्कार और चिन्तन करते हैं, उन विघ्नराज गणेशकी हम शरण ग्रहण करते हैं॥ १॥

विघ्नराज गणेशके समान मनोवांछित फल देनेवाला कोई देवता नहीं है,

निश्चित्य चैतत्त्रिपुरान्तकोऽपि
तं पूजयामास वधे पुराणाम्॥ २॥
करोतु सोऽस्माकमविघ्नमस्मिन्
महाक्रतौ सत्वरमाम्बिकेयः।
ध्यातेन येनाखिलदेहभाजां
पूर्णा भविष्यन्ति मनोऽभिलाषाः॥ ३॥
महोत्सवोऽभूदखिलस्य देव्या
जातः सुतश्चिन्तितमात्र एव।
अतोऽवदन् सुरसंघाः कृतार्थाः
सद्योजातं विघ्नराजं नमन्तः॥ ४॥
यो मातुरुत्सङ्गतोऽथ मात्रा
निवार्यमाणोऽपि बलाच्च चन्द्रम्।

ऐसा निश्चय करके त्रिपुरारि महादेवजीने भी त्रिपुरवधके समय पहले उनका पूजन किया था॥ २॥

जिनका ध्यान करनेसे सम्पूर्ण देहधारियोंके मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं, वे अम्बिकानन्दन गणेश इस (संसृतिरूप) महायज्ञमें शीघ्र ही हमारे विघ्नोंका निवारण करें॥ ३॥

देवी पार्वतीके चिन्तनमात्रसे ही गणेशजी-जैसा पुत्र उत्पन्न हो गया, इससे सम्पूर्ण जगत्में महान् उत्सव छा गया है—यह बात उन देवताओंने अपने मुखसे कही थी, जो नवजात शिशुरूपमें गणेशजीको नमस्कार करके कृतार्थ हुए थे॥ ४॥

माताकी गोदमें बैठे हुए और माताके मना करनेपर भी जिन्होंने पिताके ललाटमें स्थित चन्द्रमाको बलपूर्वक पकड़कर उनकी जटाओंमें

संगोपयामास पितुर्जटासु
गणाधिनाथस्य विनोद एषः॥५॥
पपौ स्तनं मातुरथापि तृप्तो
यो भ्रातृमात्सर्यकषायबुद्धिः।
लम्बोदरस्त्वं भव विघ्नराज
लम्बोदरं नाम चकार शम्भुः॥६॥
संवेष्टितो देवगणैर्महेशः
प्रवर्ततां नृत्यमितीत्युवाच।
सन्तोषितो नूपुररावमात्राद्
गणेश्वरत्वेऽभिषिषेच पुत्रम्॥७॥
यो विघ्नपाशं च करेण बिभ्रत्
स्कन्धे कुठारं च तथा परेण।

छिपा दिया, यह गणेशजीका बालविनोद था॥५॥

यद्यपि वे पूर्ण तृप्त थे, तब भी अधिक देरतक माताके स्तनोंका दूध इसलिये पीते रहे कि कहीं बड़े भैया कार्तिकेय भी आकर न पीने लगें। उनकी बुद्धिमें बालस्वभाववश भाईके प्रति ईर्ष्या भर गयी थी। यह देखकर भगवान् शंकरने विनोदवश कहा—विघ्नराज! तुम बहुत दूध पीते हो, इसलिये लम्बोदर हो जाओ—ऐसा कहकर उन्होंने उनका नाम 'लम्बोदर' रख दिया॥६॥

देवसमुदायसे घिरे हुए महेश्वरने कहा—बेटा! तुम्हारा नृत्य होना चाहिये। यह सुनकर उन्होंने अपने घुँघरूकी आवाजसे ही शंकरजीको सन्तुष्ट कर दिया। इससे प्रसन्न होकर शिवने अपने पुत्रको गणेशके पदपर अभिषिक्त कर दिया॥७॥

जो एक हाथमें विघ्नपाश और दूसरे हाथसे कंधेपर कुठार लिये रहते हैं तथा पूजन न पानेपर अपनी माताके कार्यमें भी विघ्न डाल देते

अपूजितो विघ्नमथोऽपि मातुः
करोति को विघ्नपतेः समोऽन्यः ॥ ८ ॥
धर्मार्थकामादिषु पूर्वपूज्यो
देवासुरैः पूज्यत एव नित्यम्।
यस्यार्चनं नैव विनाशमेति
तं पूर्वपूज्यं प्रथमं नमामि ॥ ९ ॥
यस्यार्चनात्प्रार्थनयानुरूपां
दृष्ट्वा तु सर्वस्य फलस्य सिद्धिम्।
स्वतन्त्रसामर्थ्यकृतातिगर्वं
भ्रातृप्रियं त्वाखुरथं तमीडे ॥ १० ॥
यो मातरं सरसैर्नृत्यगीतै-
स्तथाभिलाषैरखिलैर्विनोदैः ।
सन्तोषयामास तदातितुष्टं
तं श्रीगणेशं शरणं प्रपद्ये ॥ ११ ॥

हैं, उन विघ्नराजके समान दूसरा कौन है? ॥ ८ ॥

जो धर्म, अर्थ और काम आदिमें सबसे पहले पूजनीय हैं तथा देवता और असुर भी प्रतिदिन जिनकी पूजा करते हैं, जिनके पूजनका फल कभी नष्ट नहीं होता, उन प्रथम पूजनीय गणेशको हम पहले मस्तक नवाते हैं ॥ ९ ॥

जिनकी पूजासे सबको प्रार्थनाके अनुरूप सब प्रकारके फलकी सिद्धि दृष्टिगोचर होती है, जिन्हें अपने स्वतन्त्र सामर्थ्यपर अत्यन्त गर्व है, उन बन्धुप्रिय मूषक-वाहन गणेशजीकी हम स्तुति करते हैं ॥ १० ॥

जिन्होंने अपने सरस संगीत, नृत्य, समस्त मनोरथोंकी सिद्धि तथा विनोदके द्वारा माता पार्वतीको पूर्ण सन्तुष्ट किया है, उन अत्यन्त सन्तुष्ट हृदयवाले श्रीगणेशजीकी हम शरण लेते हैं ॥ ११ ॥

सुरोपकारैरसुरैश्च युद्धैः
स्तोत्रैर्नमस्कारपरैश्च मन्त्रैः।
पितृप्रसादेन सदा समृद्धं
तं श्रीगणेशं शरणं प्रपद्ये॥ १२॥
जये पुराणामकरोत् प्रतीपं
पित्रापि हर्षात् प्रतिपूजितो यः।
निर्विघ्नतां चापि पुनश्चकार
तस्मै गणेशाय नमस्करोमि॥ १३॥

गणेश उवाच

स्तोत्रेणानेन ये भक्त्या मां स्तोष्यन्ति यतव्रताः।
तेषां दारिद्र्यदुःखानि न भवेयुः कदाचन॥ १४॥

॥ इति श्रीब्रह्मपुराणे देवकृता श्रीगणेशस्तुतिः सम्पूर्णा॥

देवताओंके प्रति किये गये उपकारों, असुरोंके साथ किये गये युद्धों, स्तोत्रों तथा नमस्कारयुक्त मन्त्रों और पिताके कृपा-प्रसादसे समृद्धिशाली उन श्रीगणेशकी हम शरण ग्रहण करते है॥ १२॥

त्रिपुरासुरके साथ युद्धके समय शिवजीके भी विजयमें जिन्होंने विघ्न उत्पन्न कर दिया; तत्पश्चात् पिताजीके द्वारा प्रेमपूर्वक पूजित होनेपर जिन्होंने पुनः कार्यको निर्विघ्न कर दिया, उन श्रीगणेशको हम नमस्कार करते है॥ १३॥

गणेशजी बोले—जो संयमी इस स्तोत्रसे भक्तिपूर्वक मेरा स्तवन करेंगे, उन्हें दरिद्रता और दुःख कभी नहीं प्राप्त होगा॥ १४॥

॥ इस प्रकार श्रीब्रह्मपुराणमें देवकृत श्रीगणेशस्तुति सम्पूर्ण हुई॥

श्रीगणाधिपस्तोत्रम्

सरागिलोकदुर्लभं विरागिलोकपूजितं
सुरासुरैर्नमस्कृतं जरादिमृत्युनाशकम्।
गिरा गुरुं श्रिया हरिं जयन्ति यत्पदार्चका
नमामि तं गणाधिपं कृपापयः पयोनिधिम्॥ १॥

गिरीन्द्रजामुखाम्बुजप्रमोददानभास्करं
करीन्द्रवक्त्रमानताघसङ्घवारणोद्यतम्।
सरीसृपेशबद्धकुक्षिमाश्रयामि संततं
शरीरकान्तिनिर्जिताब्जबन्धुबालसंततिम्॥ २॥

शुकादिमौनिवन्दितं गकारवाच्यमक्षरं
प्रकाममिष्टदायिनं सकामनम्रपङ्क्तये।

जो विषयासक्त लोगोंके लिये दुर्लभ, विरक्तजनोंसे पूजित, देवताओं और असुरोंसे वन्दित तथा जरा आदि मृत्युके नाशक हैं; जिनके चरणारविन्दोंकी अर्चना करनेवाले अपनी वाणीद्वारा बृहस्पतिको और लक्ष्मीद्वारा श्रीविष्णुको भी जीत लेते हैं, उन दयारूपी जलके सागर गणाधिपतिको मैं प्रणाम करता हूँ॥ १॥

जो गिरिराजनन्दिनी उमाके मुखारविन्दको प्रमोद प्रदान करनेके लिये सूर्यरूप हैं; जिनका मुख गजराजके समान है; जो प्रणतजनोंकी पापराशिका नाश करनेके लिये उद्यत रहते हैं; जिनकी कुक्षि (उदर) नागराज शेषसे आवेष्टित है तथा जो अपने शरीरकी कान्तिसे बालसूर्यकी किरणावलीको पराजित कर देते हैं, उन गणेशजीकी मैं सदा शरण लेता हूँ॥ २॥

शुक आदि मौनावलम्बी महात्मा जिनकी वन्दना करते हैं; जो गकारसे वाच्य, अविनाशी तथा सकामभाव लेकर चरणोंमें प्रणत होनेवाले भक्त-

चकासनं चतुर्भुजैर्विकासिपद्मपूजितं
प्रकाशितात्मतत्त्वकं नमाम्यहं गणाधिपम्॥ ३॥
नराधिपत्वदायकं स्वरादिलोकदायकं
जरादिरोगवारकं निराकृतासुरव्रजम्।
कराम्बुजैर्धरन्सृणीन् विकारशून्यमानसै-
र्हृदा सदा विभावितं मुदा नमामि विघ्नपम्॥ ४॥
श्रमापनोदनक्षमं समाहितान्तरात्मना
समाधिभिः सदार्चितं क्षमानिधिं गणाधिपम्।
रमाधवादिपूजितं यमान्तकात्मसम्भवं
शमादिषड्गुणप्रदं नमामि तं विभूतये॥ ५॥

समूहोंके लिये अभीष्ट वस्तुको देनेवाले हैं; चार भुजाएँ जिनकी शोभा बढ़ाती हैं; जो प्रफुल्ल कमलसे पूजित होते हैं और आत्मतत्त्वके प्रकाशक हैं, उन गणाधिपतिको मैं नमस्कार करता हूँ॥ ३॥

जो नरेशत्व प्रदान करनेवाले, स्वर्गादि लोकोंके दाता, जरा आदि रोगोंका निवारण करनेवाले तथा असुरसमुदायका संहार करनेवाले हैं; जो अपने करारविन्दोंद्वारा अंकुश धारण करते हैं और निर्विकार चित्तवाले उपासक जिनका सदा ही मनके द्वारा ध्यान करते हैं, उन विघ्नपतिको मैं सानन्द प्रणाम करता हूँ॥ ४॥

जो सब प्रकारके श्रम या पीड़ाका निवारण करनेमें समर्थ हैं; एकाग्रचित्तवाले योगीके द्वारा सदा समाधिसे पूजित हैं; क्षमाके सागर और गणोंके अधिपति हैं; लक्ष्मीपति विष्णु आदि देवता जिनकी पूजा करते हैं; जो मृत्युंजयके आत्मज हैं तथा शम आदि छः गुणोंके दाता हैं, उन गणेशको मैं ऐश्वर्यप्राप्तिके लिये नमस्कार करता हूँ॥ ५॥

गणाधिपस्य पञ्चकं नृणामभीष्टदायकं
प्रणामपूर्वकं जनाः पठन्ति ये मुदायुताः।
भवन्ति ते विदाम्पुरः प्रगीतवैभवाः जना-
श्चिरायुषोऽधिकश्रियः सुसूनवो न संशयः॥ ६॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यकृतं श्रीगणाधिपस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

यह 'गणाधिपपंचकस्तोत्र' मनुष्योंको अभीष्ट वस्तु प्रदान करनेवाला है। जो लोग प्रणामपूर्वक प्रसन्नताके साथ इसका पाठ करते हैं, वे विद्वानोंके समक्ष अपने वैभवके लिये प्रशंसित होते हैं तथा दीर्घायु, अधिक श्री-सम्पत्तिसे सम्पन्न और सुन्दर पुत्रवाले होते हैं; इसमें संशय नहीं है॥ ६॥

॥ इस प्रकार श्रीशंकराचार्यविरचित श्रीगणाधिपस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगजाननस्तोत्रम्

देवर्षय ऊचुः

विदेहरूपं भवबन्धहारं
सदा स्वनिष्ठं स्वसुखप्रदं तम्।
अमेयसाङ्ख्येन च लक्ष्यमीशं
गजाननं भक्तियुतं भजामः॥ १॥

देवर्षि बोले—जो विदेह (देहाभिमानशून्य)-रूपसे स्थित हैं; भवबन्धनका नाश करनेवाले हैं; सदा स्वानन्दरूपमें स्थित तथा आत्मानन्द प्रदान करनेवाले हैं, उन अमेय सांख्यज्ञानके लक्ष्यभूत भगवान् गजाननका हम भक्तिभावसे भजन करते हैं॥ १॥

मुनीन्द्रवन्द्यं विधिबोधहीनं
सुबुद्धिदं बुद्धिधरं प्रशान्तम्।
विकारहीनं सकलाङ्गकं वै
गजाननं भक्तियुतं भजामः॥ २॥

अमेयरूपं हृदि संस्थितं तं
ब्रह्माहमेकं भ्रमनाशकारम्।
अनादिमध्यान्तमपाररूपं
गजाननं भक्तियुतं भजामः॥ ३॥

जगत्प्रमाणं जगदीशमेव-
मगम्यमाद्यं जगदादिहीनम्।
अनात्मनां मोहप्रदं पुराणं
गजाननं भक्तियुतं भजामः॥ ४॥

जो मुनीश्वरोंके लिये वन्दनीय, वेदज्ञानसे भी अज्ञेय, उत्तम बुद्धिके दाता, बुद्धिधारी, प्रशान्तचित्त, निर्विकार तथा सर्वांगपूर्ण हैं, उन गजाननका हम भक्तिपूर्वक भजन करते हैं॥ २॥

जिनका स्वरूप अमेय (मानातीत) है; जो हृदयमें विराजमान हैं; 'मैं एकमात्र अद्वितीय ब्रह्म हूँ'—यह बोध जिनका स्वरूप है; जो भ्रमका नाश करनेवाले हैं; जिनका आदि, मध्य और अन्त नहीं है तथा जो अपाररूप हैं, उन गजाननका हम भक्तिभावसे भजन करते हैं॥ ३॥

जिनका स्वरूप जगत्को मापनेवाला अर्थात् विश्वव्यापी है; इस प्रकार जो जगदीश्वर, अगम्य, सबके आदि तथा जगत् आदिसे हीन हैं तथा जो अनात्मा (अज्ञानी) पुरुषोंको मोहमें डालनेवाले हैं, उन पुराणपुरुष गजाननका हम भक्तिभावसे भजन करते हैं॥ ४॥

न पृथ्विरूपं न जलप्रकाशं
न तेजसंस्थं न समीरसंस्थम्।
न खे गतं पञ्चविभूतिहीनं
गजाननं भक्तियुतं भजामः ॥ ५॥
न विश्वगं तैजसगं न प्राज्ञं
समष्टिव्यष्टिस्थमनन्तगं तम्।
गुणैर्विहीनं परमार्थभूतं
गजाननं भक्तियुतं भजामः ॥ ६॥
गुणेशगं नैव च बिन्दुसंस्थं
न देहिनं बोधमयं न ढुण्ढिम्।
सुयोगहीनं प्रवदन्ति तत्स्थं
गजाननं भक्तियुतं भजामः ॥ ७॥

जो न तो पृथ्वीरूप हैं, न जलके रूपमें प्रकाशित होते हैं; न तेज, वायु और आकाशमें स्थित हैं, उन पंचविध विभूतियोंसे रहित गजाननका हम भक्तिभावसे भजन करते हैं॥ ५॥

जो न विश्वमें हैं, न तैजसमें हैं और न प्राज्ञ ही हैं; जो समष्टि और व्यष्टि—दोनोंमें विराजमान हैं, उन अनन्तव्यापी, निर्गुण एवं परमार्थस्वरूप गजाननका हम भक्तिभावसे भजन करते हैं॥ ६॥

जो न तो गुणोंके स्वामी (प्रधान)में हैं तथा न बिन्दुमें विराजमान हैं; न बोधमय देही हैं और न ढुण्ढि ही हैं; जिन्हें ज्ञानीजन सुयोगहीन और योगमें स्थित बताते हैं, उन गजाननका हम भक्तिभावसे भजन करते हैं॥ ७॥

अनागतं ग्रैवगतं गणेशं
कथं तदाकारमयं वदामः।
तथापि सर्वं प्रतिदेहसंस्थं
गजाननं भक्तियुतं भजामः॥ ८॥

यदि त्वया नाथ धृतं न किञ्चि-
त्तदा कथं सर्वमिदं भजामि।
अतो महात्मानमचिन्त्यमेवं
गजाननं भक्तियुतं भजामः॥ ९॥

सुसिद्धिदं भक्तजनस्य देवं
सकामिकानामिह सौख्यदं तम्।
अकामिकानां भवबन्धहारं
गजाननं भक्तियुतं भजामः॥ १०॥

जो अनागत (भविष्य) हैं, गजग्रीवायुक्त हैं, उन गणेशको हम उस आकारसे युक्त कैसे कहें! तथापि जो सर्वरूप हैं और प्रत्येक शरीरमें अन्तर्यामीरूपसे विराजमान हैं, उन गजाननका हम भक्ति-भावसे भजन करते हैं॥ ८॥

हे नाथ! यदि आपने कुछ भी धारण नहीं किया है, तब हम कैसे इस सम्पूर्ण जगत्‌की सेवा कर सकते हैं। अतः ऐसे अचिन्त्य महात्मा गजाननका हम भक्तिभावसे भजन करते हैं॥ ९॥

जो भक्तजनोंको उत्तम सिद्धि देनेवाले देवता हैं; सकाम पुरुषोंको यहाँ अभीष्ट सौख्य प्रदान करते हैं और निष्कामजनोंके भव-बन्धनको हर लेते हैं, उन गजाननका हम भक्तिभावसे भजन करते हैं॥ १०॥

सुरेन्द्रसेव्यं ह्यसुरैः सुसेव्यं
समानभावेन विराजयन्तम्।
अनन्तबाहुं मुषकध्वजं तं
गजाननं भक्तियुतं भजामः॥ ११॥
सदा सुखानन्दमयं जले च
समुद्रजे इक्षुरसे निवासम्।
द्वन्द्वस्य यानेन च नाशरूपं
गजाननं भक्तियुतं भजामः॥ १२॥
चतुःपदार्था विविधप्रकाशास्त
एव हस्ताः सचतुर्भुजं तम्।
अनाथनाथं च महोदरं वै
गजाननं भक्तियुतं भजामः॥ १३॥
महाखुमारूढमकालकालं
विदेहयोगेन च लभ्यमानम्।

जो सुरेन्द्रोंके सेव्य हैं और असुर भी जिनकी भलीभाँति सेवा करते हैं; जो समान भावसे सर्वत्र विराजमान हैं; जिनकी भुजाएँ अनन्त हैं और जिनके ध्वजमें मूषकका चिह्न है, उन गजाननका हम भक्तिभावसे भजन करते हैं॥ ११॥

जो सदा सुखानन्दमय हैं; समुद्रके जलमें तथा इक्षुरसमें निवास करते हैं; और जो अपने वाहनद्वारा द्वन्द्वका नाश करनेवाले हैं, उन गजाननका हम भक्तिभावसे भजन करते हैं॥ १२॥

विविध रूपसे प्रकाशित होनेवाले जो चार पदार्थ (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष) हैं, वे ही जिनके हाथ हैं और उन्हीं हाथोंके कारण जो चतुर्भुज हैं, उन अनाथनाथ महोदर गजाननका हम भक्तिभावसे भजन करते हैं॥ १३॥

जो विशाल मूषकपर आरूढ़ हैं, अकालकाल हैं; विदेहात्मक योगसे जिनकी उपलब्धि होती है; जो मायावी नहीं हैं, अपितु मायावियोंको

अमायिनं मायिकमोहदं तं
गजाननं भक्तियुतं भजामः ॥ १४ ॥
रविस्वरूपं रविभासहीनं
हरिस्वरूपं हरिबोधहीनम्।
शिवस्वरूपं शिवभासनाशं
गजाननं भक्तियुतं भजामः ॥ १५ ॥
महेश्वरीस्थं च सुशक्तिहीनं
प्रभुं परेशं परवन्द्यमेवम्।
अचालकं चालकबीजरूपं
गजाननं भक्तियुतं भजामः ॥ १६ ॥
शिवादिदेवैश्च खगैश्च वन्द्यं
नरैर्लतावृक्षपशुप्रमुख्यैः ।

मोहमें डालनेवाले हैं, उन गजाननका हम भक्तिभावसे भजन करते हैं ॥ १४ ॥

जो सूर्यस्वरूप होकर भी सूर्यके प्रकाशसे रहित हैं; हरिस्वरूप होकर भी हरिबोधसे हीन हैं; तथा जो शिवस्वरूप होकर भी शिवप्रकाशके नाशक (उसे तिरोहित कर देनेवाले) हैं, उन गजाननका हम भक्तिभावसे भजन करते हैं ॥ १५ ॥

महेश्वरीके साथ रहकर भी जो उत्तम शक्तिसे हीन हैं; प्रभु, परमेश्वर और परके लिये भी वन्दनीय हैं; अचालक होकर भी जो चालक बीजरूप हैं, उन गजाननका हम भक्तिभावसे भजन करते हैं ॥ १६ ॥

जो शिवादि देवताओं, पक्षियों, मनुष्यों, लताओं, वृक्षों, प्रमुख पशुओं तथा चराचर प्राणियोंके लिये वन्दनीय हैं; ऐसे होते हुए भी जो लोकरहित

चराचरैर्लोकविहीनमेकं
गजाननं भक्तियुतं भजामः ॥ १७॥
मनोवचोहीनतया सुसंस्थं
निवृत्तिमात्रं ह्यजमव्ययं तम्।
तथापि देवं पुरसंस्थितं तं
गजाननं भक्तियुतं भजामः ॥ १८॥
वयं सुधन्या गणपस्तवेन
तथैव मर्त्यार्चनतस्तथैव।
गणेशरूपाय कृतास्त्वया तं
गजाननं भक्तियुतं भजामः ॥ १९॥
गजास्यबीजं प्रवदन्ति वेदा-
स्तदेव चिह्नेन च योगिनस्त्वाम्।
गच्छन्ति तेनैव गजानन त्वां
गजाननं भक्तियुतं भजामः ॥ २०॥

हैं, उन एक—अद्वितीय गजाननका हम भक्तिभावसे भजन करते हैं॥ १७॥

जो मन और वाणीकी पहुँचसे परे विद्यमान हैं; निवृत्तिमात्र जिनका स्वरूप है; जो अजन्मा और अविनाशी हैं तथापि जो नगरमें स्थित देवता हैं, उन गजाननका हम भक्तिभावसे भजन करते हैं॥ १८॥

हम गणपतिकी स्तुतिसे परम धन्य हो गये। मर्त्यलोककी वस्तुओंसे उनका अर्चन करके भी हम धन्य हैं। जिन्होंने हमें गणेशस्वरूप बना लिया है, उन गजाननका हम भक्तिभावसे भजन करते हैं॥ १९॥

हे गजानन! आपके गजमुखरूपी बीज-मन्त्रको वेद बताते हैं; उसी बीजरूप चिह्नसे योगी पुरुष आपको प्राप्त होते हैं। आप गजाननका हम भक्ति-भावसे भजन करते हैं॥ २०॥

पुराणवेदाः शिवविष्णुकाद्याः
शुक्रादयो ये गणपस्तवे वै।
विकुण्ठिताः किं च वयं स्तुवीमो
गजाननं भक्तियुतं भजामः॥ २१॥

मुद्‌गल उवाच

एवं स्तुत्वा गणेशानं नेमुः सर्वे पुनः पुनः।
तानुत्थाप्य वचो रम्यं गजानन उवाच ह॥ २२॥

गजानन उवाच

वरं ब्रूत महाभागा देवाः सर्षिगणाः परम्।
स्तोत्रेण प्रीतिसंयुक्तो दास्यामि वाञ्छितं परम्॥ २३॥
गजाननवचः श्रुत्वा हर्षयुक्ताः सुरर्षयः।
जगुस्तं भक्तिभावेन साश्रुनेत्राः प्रजापते॥ २४॥

वेद, पुराण, शिव, विष्णु और ब्रह्मा आदि तथा शुक्र आदि भी गणपतिकी स्तुतिमें कुण्ठित हो जाते हैं, फिर हमलोग उनकी क्या स्तुति कर सकते हैं? हम गजाननका केवल भक्तिभावसे भजन करते हैं॥ २१॥

मुद्‌गल बोले—इस प्रकार गणेशकी स्तुति करके समस्त देवर्षियोंने उन्हें बारम्बार नमस्कार किया। तब गजाननने उन सबको उठाकर उनसे यह मधुर वचन कहा॥ २२॥

गजानन बोले—हे महाभाग देवताओ तथा देवर्षियो! तुम कोई उत्तम वर माँगो। तुम्हारे इस स्तोत्रसे प्रसन्न होकर मैं तुम्हें उत्तम मनोवांछित वर दूँगा॥ २३॥

हे प्रजापते! गजाननकी यह बात सुनकर देवता और देवर्षि हर्षसे उल्लसित हो, नेत्रोंसे प्रेमाश्रु बहाते हुए भक्ति-भावसे उनसे इस प्रकार बोले ॥ २४॥

देवर्षय ऊचुः

गजानन यदि स्वामिन् प्रसन्नो वरदोऽसि मे।
तदा भक्तिं दृढां देहि लोभहीनां त्वदीयकाम्॥ २५॥
लोभासुरस्य देवेश कृता शान्तिः सुखप्रदा।
तया जगदिदं सर्वं वरयुक्तं कृतं त्वया॥ २६॥
अधुना देवदेवेश कर्मयुक्ता द्विजातयः।
भविष्यन्ति धरायां वै वयं स्वस्थानगास्तथा॥ २७॥
स्वस्वधर्मरताः सर्वे कृतास्त्वया गजानन।
अतः परं वरं ढुण्ढे याचमानाः किमप्यहो॥ २८॥
यदा ते स्मरणं नाथ करिष्यामो वयं प्रभो।
तदा सङ्कटहीनान् वै कुरु त्वं नो गजानन॥ २९॥
एवमुक्त्वा प्रणेमुस्तं गजाननमनामयम्।
तानुवाचाथ प्रीतात्मा भक्ताधीनः स्वभावतः॥ ३०॥

देवर्षियोंने कहा—हे गजानन! हे स्वामिन् ! यदि आप प्रसन्न होकर हमें वर देना चाहते हैं तो अपनी लोभशून्य सुदृढ़ भक्ति दीजिये॥ २५॥

हे देवेश्वर! आपने जो लोभासुरकी शान्ति की है, वह परम सुखदायिनी है। उसीसे आपने सम्पूर्ण जगत्‌को वरयुक्त कर दिया॥ २६॥

हे देवदेवेश्वर! अब द्विजातिगण इस भूतलपर अपने-अपने कर्ममें संलग्न होंगे और हम भी अपने-अपने स्थानोंमें सुखसे रहेंगे॥ २७॥

हे गजानन! आपने सब लोगोंको अपने-अपने धर्ममें तत्पर कर दिया है। हे ढुण्ढिराज! अब इसके बाद भी हम कोई उत्तम वर माँग रहे हैं॥ २८॥

हे नाथ! हे प्रभो! जब हम आपका स्मरण करें, हे गजानन! तब आप हम सबको संकटहीन कर दिया करें॥ २९॥

ऐसा कहकर देवर्षियोंने रोगादि विकारोंसे रहित गजानन गणेशको प्रणाम किया। तब स्वभावतः भक्तोंके अधीन रहनेवाले गणेशने प्रसन्नचित्त होकर उनसे कहा॥ ३०॥

गजानन उवाच

यद्यच्च प्रार्थितं देवा मुनयः सर्वमञ्जसा।
भविष्यति न संदेहो मत्स्मृत्या सर्वदा हि वः॥ ३१॥
भवत्कृतं मदीयं वै स्तोत्रं सर्वत्र सिद्धिदम्।
भविष्यति विशेषेण मम भक्तिप्रदायकम्॥ ३२॥
पुत्रपौत्रप्रदं पूर्णं धनधान्यप्रवर्धनम्।
सर्वसम्पत्करं देवाः पठनाच्छ्रवणान्नृणाम्॥ ३३॥
मारणोच्चाटनादीनि नश्यन्ति स्तोत्रपाठतः।
परकृत्यं च विप्रेन्द्रा अशुभं नैव बाधते॥ ३४॥

गजानन बोले—हे देवताओ तथा ऋषियो! आप लोगोंने जो-जो प्रार्थना की है, मेरे स्मरणसे आपकी वे सारी प्रार्थनाएँ सर्वदा एवं अनायास पूर्ण हो जायँगी, इसमें संदेह नहीं है॥ ३१॥

आपलोगोंद्वारा किया गया मेरा यह स्तोत्र सर्वत्र सिद्धि देनेवाला होगा, विशेषत: यह मेरी भक्ति प्रदान करेगा॥ ३२॥

हे देवताओ! यह स्तोत्र पढ़ने और सुननेसे मनुष्योंको पुत्र-पौत्र प्रदान करनेवाला, पूर्ण धन-धान्यकी वृद्धि करनेवाला तथा सम्पूर्ण सम्पदाओंको देनेवाला होगा॥ ३३॥

इस स्तोत्रके पाठसे शत्रुओंद्वारा किये गये मारण और उच्चाटन आदिके प्रयोग नष्ट हो जायँगे। हे विप्रेन्द्र! दूसरोंका किया हुआ आभिचारिक प्रयोग और अशुभ कर्म उसमें कभी बाधा नहीं दे सकेगा॥ ३४॥

2024 Ganeshstotraratnakar_Section_4_2_Front

संग्रामे जयदं चैव यात्राकाले फलप्रदम्।
शत्रूच्चाटनादिषु च प्रशस्तं तद्भविष्यति॥ ३५॥
कारागृहगतस्यैव बन्धनाशकरं भवेत्।
असाध्यं साधयेत् सर्वमनेनैव सुरर्षयः॥ ३६॥
एकविंशतिवारं च एकविंशदिनावधिम्।
प्रयोगं यः करोत्येव स सर्वसिद्धिभाग् भवेत्॥ ३७॥
धर्मार्थकाममोक्षाणां ब्रह्मभूतस्य दायकम्।
भविष्यति न संदेहः स्तोत्रं मद्भक्तिवर्धनम्॥ ३८॥
एवमुक्त्वा गणाधीशस्तत्रैवान्तरधीयत॥ ३९॥

॥ इति श्रीमुद्‌गलपुराणे देवर्षिकृतं श्रीगजाननस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

यह स्तोत्र संग्राममें विजय और यात्राकालमें उत्तम फल देनेवाला होगा। शत्रुके उच्चाटन आदिके लिये किया गया इसका प्रयोग श्रेष्ठ सिद्ध होगा॥ ३५॥

जो कारागारमें पड़ा हुआ है, उसके द्वारा पढ़ा गया यह स्तोत्र उसके बन्धनका नाश करनेवाला होगा। हे देवर्षियो! इस स्तोत्रसे ही सारा असाध्य साधन करना चाहिये॥ ३६॥

जो इक्कीस दिनोंतक प्रतिदिन इक्कीस बार इसका प्रयोग करता है, वह सम्पूर्ण सिद्धियोंका भागी होगा॥ ३७॥

मेरी भक्तिको बढ़ानेवाला यह स्तोत्र धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष तथा ब्रह्मभाव प्रदान करनेवाला होगा; इसमें संदेह नहीं है॥ ३८॥

ऐसा कहकर गणेशजी वहीं अन्तर्धान हो गये॥ ३९॥

॥ इस प्रकार श्रीमुद्‌गलपुराणमें देवर्षिकृत श्रीगजाननस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणेशाष्टकम्

सर्वे ऊचुः

यतोऽनन्तशक्तेरनन्ताश्च जीवा
यतो निर्गुणादप्रमेया गुणास्ते।
यतो भाति सर्वं त्रिधा भेदभिन्नं
सदा तं गणेशं नमामो भजामः॥ १॥
यतश्चाविरासीज्जगत्सर्वमेत-
त्तथाब्जासनो विश्वगो विश्वगोप्ता।
तथेन्द्रादयो देवसङ्घा मनुष्याः
सदा तं गणेशं नमामो भजामः॥ २॥
यतो वह्निभानूद्भवो भूर्जलं च
यतः सागराश्चन्द्रमा व्योम वायुः।

सब भक्तोंने कहा—जिन अनन्त शक्तिवाले परमेश्वरसे अनन्त जीव प्रकट हुए हैं; जिन निर्गुण परमात्मासे अप्रमेय (असंख्य) गुणोंकी उत्पत्ति हुई है; सात्त्विक, राजस और तामस—इन तीन भेदोंवाला यह सम्पूर्ण जगत् जिनसे प्रकट एवं भासित हो रहा है, उन गणेशका हम नमन एवं भजन करते हैं॥ १॥

जिनसे इस समस्त जगत्का प्रादुर्भाव हुआ है; जिनसे कमलासन ब्रह्मा, विश्वव्यापी विश्वरक्षक विष्णु, इन्द्र आदि देव-समुदाय और मनुष्य प्रकट हुए हैं, उन गणेशका हम सदा ही नमन एवं भजन करते हैं॥ २॥

जिनसे अग्नि और सूर्यका प्राकट्य हुआ; पृथ्वी, जल, समुद्र, चन्द्रमा, आकाश और वायुका प्रादुर्भाव हुआ तथा जिनसे स्थावर-जंगम

यतः स्थावरा जङ्गमा वृक्षसङ्घाः
सदा तं गणेशं नमामो भजामः ॥ ३॥

यतो दानवाः किन्नरा यक्षसङ्घा
यतश्चारणा वारणाः श्वापदाश्च।
यतः पक्षिकीटा यतो वीरुधश्च
सदा तं गणेशं नमामो भजामः ॥ ४॥

यतो बुद्धिरज्ञाननाशो मुमुक्षोर्यतः
सम्पदो भक्तसंतोषिकाः स्युः।
यतो विघ्ननाशो यतः कार्यसिद्धिः
सदा तं गणेशं नमामो भजामः ॥ ५॥

यतः पुत्रसम्पद् यतो वाञ्छितार्थो
यतोऽभक्तविघ्नास्तथानेकरूपाः।

और वृक्षसमूह उत्पन्न हुए हैं, उन गणेशका हम नमन एवं भजन करते हैं ॥ ३ ॥

जिनसे दानव, किंनर और यक्षसमूह प्रकट हुए; जिनसे हाथी और हिंसक जीव उत्पन्न हुए तथा जिनसे पक्षियों, कीटों और लता-बेलोंका प्रादुर्भाव हुआ, उन गणेशका हम सदा ही नमन और भजन करते हैं ॥ ४ ॥

जिनसे मुमुक्षुको बुद्धि प्राप्त होती है और अज्ञानका नाश होता है; जिनसे भक्तोंको सन्तोष देनेवाली सम्पदाएँ प्राप्त होती हैं तथा जिनसे विघ्नोंका नाश और समस्त कार्योंकी सिद्धि होती है, उन गणेशका हम सदा नमन एवं भजन करते हैं ॥ ५ ॥

जिनसे पुत्र-सम्पत्ति सुलभ होती है; जिनसे मनोवांछित अर्थ सिद्ध होता है; जिनसे अभक्तोंको अनेक प्रकारके विघ्न प्राप्त होते हैं तथा

यतः शोकमोहौ यतः काम एव
सदा तं गणेशं नमामो भजामः॥ ६॥
यतोऽनन्तशक्तिः स शेषो बभूव
धराधारणेऽनेकरूपे च शक्तः।
यतोऽनेकधा स्वर्गलोका हि नाना
सदा तं गणेशं नमामो भजामः॥ ७॥
यतो वेदवाचो विकुण्ठा मनोभिः
सदा नेति नेतीति यत्ता गृणन्ति।
परब्रह्मरूपं चिदानन्दभूतं
सदा तं गणेशं नमामो भजामः॥ ८॥

श्रीगणेश उवाच

पुनरूचे गणाधीशः स्तोत्रमेतत्पठेन्नरः।
त्रिसंध्यं त्रिदिनं तस्य सर्वं कार्यं भविष्यति॥ ९॥

जिनसे शोक, मोह और काम प्राप्त होते हैं, उन गणेशका हम सदा नमन एवं भजन करते हैं॥ ६॥

जिनसे अनन्त शक्तिसम्पन्न सुप्रसिद्ध शेषनाग प्रकट हुए; जो इस पृथ्वीको धारण करने एवं अनेक रूप ग्रहण करनेमें समर्थ हैं; जिनसे अनेक प्रकारके अनेक स्वर्गलोक प्रकट हुए हैं, उन गणेशका हम सदा ही नमन एवं भजन करते हैं॥ ७॥

जिनके विषयमें वेदवाणी कुण्ठित है; जहाँ मनकी भी पहुँच नहीं है तथा श्रुति सदा सावधान रहकर 'नेति-नेति'—इन शब्दोंद्वारा जिनका वर्णन करती है; जो सच्चिदानन्दस्वरूप परब्रह्म हैं, उन गणेशका हम सदा ही नमन एवं भजन करते हैं॥ ८॥

श्रीगणेशजी बोले—जो मनुष्य तीन दिनोंतक तीनों संध्याओंके समय इस स्तोत्रका पाठ करेगा, उसके सारे कार्य सिद्ध हो जायँगे॥ ९॥

यो जपेदष्टदिवसं श्लोकाष्टकमिदं शुभम्।
अष्टवारं चतुर्थ्यां तु सोऽष्टसिद्धीरवाप्नुयात्॥ १०॥
यः पठेन्मासमात्रं तु दशवारं दिने दिने।
स मोचयेद् बन्धगतं राजवध्यं न संशयः॥ ११॥
विद्याकामो लभेद्विद्यां पुत्रार्थी पुत्रमाप्नुयात्।
वाञ्छिताँल्लभते सर्वानेकविंशतिवारतः॥ १२॥
यो जपेत् परया भक्त्या गजाननपरो नरः।
एवमुक्त्वा ततो देवश्चान्तर्धानं गतः प्रभुः॥ १३॥

॥ इति श्रीगणेशपुराणे श्रीगणेशाष्टकं सम्पूर्णम्॥

जो आठ दिनोंतक इन आठ श्लोकोंका एक बार पाठ करेगा और चतुर्थी तिथिको आठ बार इस स्तोत्रको पढ़ेगा, वह आठों सिद्धियोंको प्राप्त कर लेगा॥ १०॥

जो एक मासतक प्रतिदिन दस-दस बार इस स्तोत्रका पाठ करेगा, वह कारागारमें बँधे हुए तथा राजाके द्वारा वध-दण्ड पानेवाले कैदीको भी छुड़ा लेगा, इसमें संशय नहीं है॥ ११॥

इस स्तोत्रका इक्कीस बार पाठ करनेसे विद्यार्थी विद्याको, पुत्रार्थी पुत्रको तथा कामार्थी समस्त मनोवांछित कामनाओंको प्राप्त कर लेता है॥ १२॥

जो मनुष्य पराभक्तिसे इस स्तोत्रका जप करता है, वह गजाननका परम भक्त हो जाता है—ऐसा कहकर भगवान् गणेश वहीं अन्तर्धान हो गये॥ १३॥

॥ इस प्रकार श्रीगणेशपुराणमें श्रीगणेशाष्टक सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणेशकव्यष्टकम्

चतुःषष्टिकोट्याख्यविद्याप्रदं त्वां
सुराचार्यविद्याप्रदानापदानम् ।
कठाभीष्टविद्यार्पकं दन्तयुग्मं
कविं बुद्धिनाथं कवीनां नमामि॥ १॥

स्वनाथं प्रधानं महाविघ्ननाथं
निजेच्छाविसृष्टाण्डवृन्देशनाथम् ।
प्रभुं दक्षिणास्यस्य विद्याप्रदं त्वां
कविं बुद्धिनाथं कवीनां नमामि॥ २॥

विभो व्यासशिष्यादिविद्याविशिष्ट-
प्रियानेकविद्याप्रदातारमाद्यम् ।
महाशाक्तदीक्षागुरुं श्रेष्ठदं त्वां
कविं बुद्धिनाथं कवीनां नमामि॥ ३॥

हे गणेश्वर! आप चौंसठ कोटि विद्याओंके दाता तथा देवताओंके आचार्य बृहस्पतिको भी विद्या-प्रदानका कार्य पूर्ण करनेवाले हैं। कठको अभीष्ट विद्या देनेवाले भी आप ही हैं। (अथवा आप कठोपनिषद्रूपा अभीष्ट विद्याके दाता हैं।) आप द्विरद हैं, कवि हैं और कवियोंकी बुद्धिके स्वामी हैं; मैं आपको प्रणाम करता हूँ॥ १॥

आप ही अपने स्वामी एवं प्रधान हैं। बड़े-बड़े विघ्नोंके नाथ हैं। स्वेच्छासे रचित ब्रह्माण्ड-समूहके स्वामी और रक्षक भी आप ही हैं। आप दक्षिणास्यके प्रभु एवं विद्यादाता हैं। आप कवि हैं एवं कवियोंके लिये बुद्धिनाथ हैं; मैं आपको प्रणाम करता हूँ॥ २॥

हे विभो! आप व्यास-शिष्य आदि विद्याविशिष्ट प्रियजनोंको अनेक विद्या प्रदान करनेवाले और सबके आदिपुरुष हैं। महाशाक्त-मन्त्रकी दीक्षाके गुरु एवं श्रेष्ठ वस्तु प्रदान करनेवाले आप कवि एवं कवियोंके बुद्धिनाथको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ३॥

विधात्रे त्रयीमुख्यवेदांश्च योगं
महाविष्णवे चागमाञ् शङ्कराय।
दिशन्तं च सूर्याय विद्यारहस्यं
कविं बुद्धिनाथं कवीनां नमामि॥ ४॥
महाबुद्धिपुत्राय चैकं पुराणं
दिशन्तं गजास्यस्य माहात्म्ययुक्तम्।
निजज्ञानशक्त्या समेतं पुराणं
कविं बुद्धिनाथं कवीनां नमामि॥ ५॥
त्रयीशीर्षसारं रुचानेकमारं
रमाबुद्धिदारं परं ब्रह्मपारम्।
सुरस्तोमकायं गणौघाधिनाथं
कविं बुद्धिनाथं कवीनां नमामि॥ ६॥
चिदानन्दरूपं मुनिध्येयरूपं
गुणातीतमीशं सुरेशं गणेशम्।

जो विधाता (ब्रह्माजी)-को 'वेदत्रयी' के नामसे प्रसिद्ध मुख्य वेदोंका, महाविष्णुको योगका, शंकरको आगमोंका और सूर्यदेवको विद्याके रहस्यका उपदेश देते हैं, उन कवियोंके बुद्धिनाथ एवं कवि गणेशजीको मैं नमस्कार करता हूँ॥ ४॥

महाबुद्धि-देवीके पुत्रके प्रति गजाननके माहात्म्यसे युक्त तथा निज ज्ञानशक्तिसे सम्पन्न एक पुराणका उपदेश देनेवाले गणेशको, जो कवि एवं कवियोंके बुद्धिनाथ हैं, मैं प्रणाम करता हूँ॥ ५॥

जो वेदान्तके सारतत्त्व, अपने तेजसे अनेक असुरोंका संहार करनेवाले, सिद्धि-लक्ष्मी एवं बुद्धिको दाराके रूपमें अंगीकार करनेवाले और परात्पर ब्रह्म-स्वरूप हैं, देवताओंका समुदाय जिनका शरीर है तथा जो गण-समुदायके अधीश्वर हैं, उन कवि एवं कवियोंके बुद्धिनाथ गणेशको मैं नमस्कार करता हूँ॥ ६॥

जो ज्ञानानन्दस्वरूप, मुनियोंके ध्येय तथा गुणातीत हैं; धरा एवं

धरानन्दलोकादिवासप्रियं त्वां
कविं बुद्धिनाथं कवीनां नमामि॥ ७॥
अनेकप्रतारं सुरक्ताब्जहारं
परं निर्गुणं विश्वसद्ब्रह्मरूपम्।
महावाक्यसन्दोहतात्पर्यमूर्तिं
कविं बुद्धिनाथं कवीनां नमामि॥ ८॥
इदं ये तु कव्यष्टकं भक्तियुक्ता-
स्त्रिसन्ध्यं पठन्ते गजास्यं स्मरन्तः।
कवित्वं सुवाक्यार्थमत्यद्भुतं ते
लभन्ते प्रसादाद् गणेशस्य मुक्तिम्॥ ९॥

॥ इति ब्रह्मपुराणे श्रीवाल्मीकिकृतं श्रीगणेशकव्यष्टकं सम्पूर्णम्॥

स्वानन्दलोक आदिका निवास जिन्हें प्रिय है; उन ईश्वर, सुरेश्वर, कवि तथा कवियोंके बुद्धिनाथ गणेशको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ७॥

जो अनेकानेक भक्तजनोंको भवसागरसे पार करनेवाले हैं, लाल कमलके फूलोंका हार धारण करते हैं, परम निर्गुण हैं; विश्वात्मक सद्ब्रह्म जिनका रूप है, 'तत्त्वमसि' आदि महावाक्योंके समूहका तात्पर्य जिनका श्रीविग्रह है, उन कवि एवं कवियोंके बुद्धिनाथ गणेशको मैं नमस्कार करता हूँ॥ ८॥

जो भक्ति-भावसे युक्त हो तीनों सन्ध्याओंके समय गजाननका स्मरण करते हुए इस 'कव्यष्टक' का पाठ करते हैं, वे गणेशजीके कृपाप्रसादसे कवित्व, सुन्दर एवं अद्भुत वाक्यार्थ तथा मानव-जीवनके चरम लक्ष्य मोक्षको प्राप्त कर लेते हैं॥ ९॥

॥ इस प्रकार ब्रह्मपुराणान्तर्गत श्रीवाल्मीकिकृत श्रीगणेशकव्यष्टक सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणेशस्तवनम्

देवा ऊचुः

गजाननाय पूर्णाय साङ्ख्यरूपमयाय ते।
विदेहेन च सर्वत्र संस्थिताय नमो नमः॥ १॥
अमेयाय च हेरम्ब परशुधारकाय ते।
मूषकवाहनायैव विश्वेशाय नमो नमः॥ २॥
अनन्तविभवायैव परेषां पररूपिणे।
शिवपुत्राय देवाय गुहाग्रजाय ते नमः॥ ३॥
पार्वतीनन्दनायैव देवानां पालकाय ते।
सर्वेषां पूज्यदेहाय गणेशाय नमो नमः॥ ४॥
स्वानन्दवासिने तुभ्यं शिवस्य कुलदैवत।
विष्ण्वादीनां विशेषेण कुलदेवाय ते नमः॥ ५॥

देवता बोले—[हे गणेश्वर!] आप गजके समान मुख धारण करनेवाले, पूर्ण परमात्मा और ज्ञानस्वरूप हैं। आप निराकाररूपसे सर्वत्र विद्यमान हैं; आपको बारम्बार नमस्कार है॥ १॥

हे हेरम्ब! आपको किन्हीं प्रमाणोंद्वारा मापा नहीं जा सकता, आप परशु धारण करनेवाले हैं, आपका वाहन मूषक है; आप विश्वेश्वरको बारम्बार नमस्कार है॥ २॥

आपका वैभव अनन्त है, आप परात्पर हैं, भगवान् शिवके पुत्र तथा स्कन्दके बड़े भाई हैं; आप देवको नमस्कार है॥ ३॥

जो पार्वतीको आनन्दित करनेवाले, देवताओंके रक्षक हैं और जिनका श्रीविग्रह सबके लिये पूजनीय है; उन आप गणेशको बारम्बार नमस्कार है॥ ४॥

भगवान् शिवके कुलदेवता आप अपने स्वरूपभूत स्वानन्द-धाममें निवास करनेवाले हैं। विष्णु आदि देवताओंके तो आप विशेषरूपसे कुलदेवता हैं; आपको नमस्कार है॥ ५॥

योगाकाराय सर्वेषां योगशान्तिप्रदाय च।
ब्रह्मेशाय नमस्तुभ्यं ब्रह्मभूतप्रदाय ते॥ ६ ॥
सिद्धिबुद्धिपते नाथ सिद्धिबुद्धिप्रदायिने।
मायिने मायिकेभ्यश्च मोहदाय नमो नमः॥ ७ ॥
लम्बोदराय वै तुभ्यं सर्वोदरगताय च।
अमायिने च मायाया आधाराय नमो नमः॥ ८ ॥
गजः सर्वस्य बीजं यत्तेन चिह्नेन विघ्नप।
योगिनस्त्वां प्रजानन्ति तदाकारा भवन्ति ते॥ ९ ॥
तेन त्वं गजवक्त्रश्च किं स्तुमस्त्वां गजानन।
वेदादयो विकुण्ठाश्च शङ्कराद्याश्च देवपाः॥ १० ॥

आप योगस्वरूप एवं सबको योगजनित शान्ति प्रदान करनेवाले हैं; ब्रह्मभावकी प्राप्ति करानेवाले आप ब्रह्मेश्वरको नमस्कार है॥ ६॥

नाथ! आप सिद्धि और बुद्धिके पति हैं तथा सिद्धि और बुद्धि प्रदान करनेवाले हैं; आप मायाके अधिपति तथा मायावियोंको मोहमें डालनेवाले हैं; आपको बारम्बार नमस्कार है॥ ७॥

आप लम्बोदर हैं, जठरानलरूपसे सबके उदरमें निवास करते हैं, आपपर किसीकी माया नहीं चलती और आप ही मायाके आधार हैं; आपको बारम्बार नमस्कार है॥ ८॥

विघ्नराज! गज सबका बीज है। उस बीजरूप चिह्नसे ही योगीजन आपको पहचानते तथा आपका सारूप्य प्राप्त कर लेते हैं॥ ९॥

हे गजानन! उस बीजस्वरूप गजचिह्नके कारण ही आप 'गजमुख' कहलाते हैं, हम आपकी क्या स्तुति कर सकते हैं? आपकी स्तुति करनेमें तो वेदादि शास्त्र तथा शंकर आदि देवेश्वर भी कुण्ठित हो जाते हैं॥ १०॥

शुक्रादयश्च शेषाद्याः स्तोतुं शक्ता भवन्ति न।
तथापि संस्तुतोऽसि त्वं स्फूर्त्या त्वद्दर्शनात्मना॥ ११॥

॥ इति श्रीमुद्गलपुराणे देवकृतं श्रीगणेशस्तवनं सम्पूर्णम्॥

शुक्र आदि विद्वान् और शेष आदि नाग भी आपके स्तवनमें समर्थ नहीं हैं; तथापि आपके दर्शनरूप स्फूर्तिसे हमने आपका स्तवन कर लिया है॥ ११॥

॥ इस प्रकार श्रीमुद्गलपुराणमें देवकृत श्रीगणेशस्तवन सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीसङ्कष्टहरस्तोत्रम्

देवा ऊचुः

दीननाथ दयासिन्धो योगिहृत्पद्मसंस्थित।
अनादिमध्यरहितस्वरूपाय नमो नमः॥ १॥
जगद्भास चिदाभास ज्ञानगम्य नमो नमः।
मुनिमानसविष्टाय नमो दैत्यविघातिने॥ २॥
त्रिलोकेश गुणातीत गुणक्षोभ नमो नमः।
त्रैलोक्यपालन विभो विश्वव्यापिन् नमो नमः॥ ३॥

देवता बोले—हे दीननाथ! हे दयासिन्धो! हे योगियोंके हृत्कमलपर निवास करनेवाले प्रभो! आदि, मध्य और अन्तसे रहित स्वरूपवाले आपको बार-बार नमस्कार है॥ १॥

हे जगत्प्रकाशक! हे चिदाभास! हे ज्ञानगम्य! आपको बार-बार नमस्कार है। मुनियोंके मनमें प्रविष्ट तथा दैत्योंका विनाश करनेवाले आपको नमस्कार है॥ २॥

हे त्रैलोक्यके स्वामी! हे गुणातीत! हे गुणक्षोभक! आपको बार-बार नमस्कार है। हे त्रिभुवनपालक! हे विश्वव्यापिन् विभो! आपको बार-बार नमस्कार है॥ ३॥

मायातीताय भक्तानां कामपूराय ते नमः।
सोमसूर्याग्निनेत्राय नमो विश्वम्भराय ते॥ ४॥
अमेयशक्तये तुभ्यं नमस्ते चन्द्रमौलये।
चन्द्रगौराय शुद्धाय शुद्धज्ञानकृते नमः॥ ५॥

॥ इति श्रीगणेशपुराणे देवैः कृतं श्रीसङ्कष्टहरस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

मायातीत और भक्तोंकी कामना-पूर्ति करनेवाले आपको नमस्कार है। चन्द्र, सूर्य और अग्नि जिनके नेत्र हैं और जो विश्वका भरण करनेवाले हैं, उन आपको नमस्कार है॥ ४॥

अमित-शक्तिसम्पन्न आप चन्द्रमौलिको नमस्कार है। चन्द्रोपम गौर, शुद्धस्वरूप एवं शुद्ध ज्ञानप्रदाता आपको नमस्कार है॥ ५॥

॥ इस प्रकार श्रीगणेशपुराणमें देवकृत श्रीसंकष्टहरस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

सर्वसम्पत्करढुण्ढिविनायकस्तोत्रम्

श्रीकण्ठ उवाच

जय विघ्नकृतामाद्य भक्तनिर्विघ्नकारक।
अविघ्न विघ्नशमन महाविघ्नैकविघ्नकृत्॥ १॥
जय सर्वगणाधीश जय सर्वगणाग्रणीः।
गणप्रणतपादाब्ज गणनातीतसद्गुण॥ २॥

श्रीकण्ठ [शिवजी] बोले—हे विघ्नकर्ताओंके कारण! हे भक्तोंके निर्विघ्न-कारक, विघ्नहीन, विघ्नविनाशन, महाविघ्नोंके मुख्य विघ्न करनेवाले! आपकी जय हो॥ १॥

हे सर्वगणाधीश, सर्वगणाग्रणी! आपकी जय हो। हे गणोंसे प्रणाम किये हुए पदकमलवाले, गणनातीतसद्गुण! आपकी जय हो॥ २॥

जय सर्वग सर्वेश सर्वबुद्ध्येकशेवधे।
सर्वमायाप्रपञ्चज्ञ सर्वकर्माग्रपूजित॥ ३॥
सर्वमङ्गलमाङ्गल्य जय त्वं सर्वमङ्गल।
अमङ्गलोपशमन महामङ्गलहेतुक॥ ४॥
जय सृष्टिकृतां वन्द्य जय स्थितिकृता नत।
जय संहृतिकृत्स्तुत्य जय सत्कर्मसिद्धिद॥ ५॥
सिद्धवन्द्यपदाम्भोज जय सिद्धिविधायक।
सर्वसिद्ध्येकनिलय महासिद्ध्यृद्धिसूचक॥ ६॥
अशेषगुणनिर्माण गुणातीत गुणाग्रणीः।
परिपूर्णचरित्रार्थ जय त्वं गुणवर्णित॥ ७॥
जय सर्वबलाधीशबलारातिबलप्रद।
बलाकोज्ज्वलदन्ताग्र बालाबालपराक्रम॥ ८॥

हे सर्वगत, सर्वेश, सब बुद्धियोंके मुख्य निधान, सब मायाप्रपञ्चके जाननेवाले, सब कर्मोंमें अग्रपूजित! आपकी जय हो॥ ३॥

हे सब मंगलोंके मंगलस्वरूप, सब मंगलवाले, अमंगलनाशक, महामंगलकारण! आपकी जय हो॥ ४॥

हे सृष्टिकर्ताओंके वंदनीय! आपकी जय हो। हे पालनकर्ता विष्णुसे नमस्कृत! आपकी जय हो। हे संहारकारक! हे स्तुतिके योग्य! आपकी जय हो। हे अच्छे कर्मोंके सिद्धिदायक! आपकी जय हो॥ ५॥

हे सिद्धोंसे वंदनीय पदकमलवाले, सिद्धिकारक, सब सिद्धियोंके मुख्य स्थान, मुक्तिसमृद्धिसूचक! आपकी जय हो॥ ६॥

हे सम्पूर्ण गुणोंके निर्माण करनेवाले, गुणोंसे परे, गुणाग्रणी, परिपूर्णचरित्रार्थ, गुणोंसे वर्णित! आपकी जय हो॥ ७॥

हे सब बलोंके अधीश्वर इन्द्रके बलदायक, बकपंक्तिके समान श्वेत दंताग्रवाले, बालक, अबालपराक्रम! आपकी जय हो॥ ८॥

अनन्तमहिमाधार धराधरविदारण।
दन्ताग्रप्रोतदिङ्नाग जय नागविभूषण॥ ९ ॥
ये त्वां नमन्ति करुणामय दिव्यमूर्ते
सर्वैनसामपि भुवो भुवि मुक्तिभाजः।
तेषां सदैव हरसीह महोपसर्गान्
स्वर्गापवर्गमपि सम्प्रददासि तेभ्यः॥ १०॥
ये विघ्नराज भवता करुणाकटाक्षैः
सम्प्रेक्षिताः क्षितितले क्षणमात्रमत्र।
तेषां क्षयन्ति सकलान्यपि किल्बिषाणि
लक्ष्मीः कटाक्षयति तान् पुरुषोत्तमान् हि॥ ११॥
ये त्वां स्तुवन्ति नतविघ्नविघातदक्ष
दाक्षायणीहृदयपङ्कजतिग्मरश्मे ।
श्रूयन्त एव त इह प्रथिता न चित्रं
चित्रं तदत्र गणपा यदहो त एव॥ १२॥

हे अनन्त महिमाके आधार, पर्वतविदारण, दन्तके अग्रभागसे ग्रथित दिग्गजवाले, सर्पालंकार! आपकी जय हो॥ ९॥

हे दयामय, दिव्यमूर्ते! सब पापोंके आश्रय हुए भी जो जन आपको नमस्कार करते हैं, वे पृथ्वीपर मुक्तिके भागी होते हैं एवं आप यहाँ उनके बड़े उपद्रवोंको हर लेते हैं एवं उनको स्वर्ग और मुक्ति भी देते हैं॥ १०॥

हे विघ्नराज! जो इस भूतलमें क्षणमात्र आपसे करुणा-कटाक्षोंके द्वारा देखे गये हैं, उनके सब पाप भी नष्ट हो जाते हैं और उन पुरुषोत्तमोंको ही लक्ष्मीजी करुणा-कटाक्षसे देखती हैं॥ ११॥

हे भक्तविघ्नविघातदक्ष, दक्षपुत्रीके हृदयकमलके सूर्य! जो आपकी स्तुति करते हैं, वे यहाँ प्रसिद्ध सुने जाते हैं—यह आश्चर्य नहीं है, अपितु जो वे ही लोग यहाँ गणोंके स्वामी होते हैं, वह विचित्र है॥ १२॥

ये शीलयन्ति सततं भवतोऽङ्घ्रियुग्मं
ते पुत्रपौत्रधनधान्यसमृद्धिभाजः।
संशीलिताङ्घ्रिकमलाबहुभृत्यवर्गै-
र्भूपालभोग्यकमलां विमलां लभन्ते॥ १३॥
त्वं कारणं परमकारणकारणानां
वेद्योऽसि वेदविदुषां सततं त्वमेकः।
त्वं मार्गणीयमसि किञ्चनमूलवाचां
वाचामगोचर चराचर दिव्यमूर्ते॥ १४॥
वेदा विदन्ति न यथार्थतया भवन्तं
ब्रह्मादयोऽपि न चराचरसूत्रधार।
त्वं हंसि पासि विदधासि समस्तमेकः
कस्ते स्तुतिव्यतिकरो मनसाप्यगम्य॥ १५॥
त्वद्दुष्टदृष्टिविशिखैर्निहतान्निहन्मि
दैत्यान् पुरान्धकजलन्धरमुख्यकांश्च।

जो आपके दोनों पदारविन्दोंका निरन्तर ध्यान करते हैं, वे धन-धान्य, पुत्र और पौत्रोंसे युक्त होते हैं एवं बहुत भृत्यवर्गोंसे सेवित पद-कमलवाले होकर विमल एवं राजाओंसे भोगने योग्य सम्पत्तिको पाते हैं॥ १३॥

हे परमकारण, निजकारण, वाणीके अविषय, दिव्यमूर्ते! आप कारणोंके कारण हैं एवं वेदोंके पण्डितोंसे एकमात्र निरन्तर जाननेयोग्य हैं और जो कुछ खोजनेयोग्य है, वह आप ही हैं॥ १४॥

हे मनसे भी अगम्य, चराचरसूत्रधार! वेद आपको यथार्थ रूपमें नहीं जानते हैं एवं ब्रह्मादि देव भी नहीं जानते हैं? एकमात्र आप ही संसारका सृजन, पालन एवं संहार करते हैं। इससे आपकी स्तुति करनेका माध्यम कौन है अर्थात् कोई भी नहीं है॥ १५॥

हे सिद्धिदायक! मैं आपके क्रोधदर्शनरूप बाणोंसे मारे हुए अन्धक तथा जलन्धर आदि प्रधान दैत्योंको मारता हूँ एवं यहाँ किसकी शक्ति

कस्यास्ति शक्तिरिह यस्त्वदृतेऽपि तुच्छं
वाञ्छेद्विधातुमिह सिद्धिद कार्यजातम्॥ १६॥
अन्वेषणे ढुढिरयं प्रथितोऽस्ति धातुः
सर्वार्थढुण्ढिततया तव ढुण्ढि नाम।
काशीप्रवेशमपि को लभतेऽत्र देही
तोषं विना तव विनायक ढुण्ढिराज॥ १७॥
ढुण्ढे प्रणम्य पुरतस्तव पादपद्मं
यो मां नमस्यति पुमानिह काशिवासी।
तत्कर्णमूलमधिगम्य पुरादिशामि
तत्किञ्चिदत्र न पुनर्भवतास्ति येन॥ १८॥
स्नात्वा नरः प्रथमतो मणिकर्णिकाया-
मुद्धूलिताङ्घ्रियुगलस्तु सचैलमाशु।
देवर्षिमानवपितॄनपि तर्पयित्वा
ज्ञानोदतीर्थमभिलभ्य भजेत्ततस्त्वाम्॥ १९॥

है जो आपके बिना यहाँ छोटे भी कार्य-समूहक विधान करनेके लिये इच्छा करे!॥ १६॥

हे ढुंढिराज, विनायक! यह 'ढुढि' धातु 'खोजने' अर्थमें प्रसिद्ध है, इसलिये सर्वार्थ ढूँढ़नेसे आपका ढुण्ढि नाम है और इस लोकमें कौन देहधारी आपके सन्तुष्ट हुए बिना काशीप्रवेशको पा सकता है?॥ १७॥

हे ढुंढे! जो काशीवासी पुरुष यहाँ पहले आपके पदकमलको प्रणामकर मुझे नमस्कार करता है, उसके कानके समीप प्राप्त होकर मैं उस ब्रह्मज्ञानको देता हूँ, जिससे वह इस जगत्में पुनः उत्पन्न नहीं होता है!॥ १८॥

धूलसे धूसरित दोनों पाँवोंवाला पुरुष पहले वस्त्र-समेत शीघ्र ही मणिकर्णिकामें स्नानकर देव, ऋषि, मनुष्य और पितरोंका तर्पणकर फिर ज्ञानोदतीर्थको सामने पाकर तदनन्तर आपकी सेवा करे॥ १९॥

सामोदमोदकभरैर्वरधूपदीपै-
मार्ल्यैः सुगन्धबहुलैरनुलेपनैश्च।
सम्प्रीणय काशिनगरीफलदानदक्षं
प्रोक्त्वाथ मां क इह सिध्यति नैव ढुण्ढे॥ २०॥
तीर्थान्तराणि च ततः क्रमवर्जितोऽपि
संसाधयन्निह भवत्करुणाकटाक्षैः।
दूरीकृतस्वहितघात्युपसर्गवर्गो
ढुण्ढे लभेदविकलं फलमत्र काश्याम्॥ २१॥
यः प्रत्यहं नमति ढुण्ढिविनायकं त्वां
काश्यां प्रगे प्रतिहताखिलविघ्नसङ्घः।
नो तस्य जातु जगतीतलवर्तिवस्तु
दुष्प्रापमत्र च परत्र च किञ्चनापि॥ २२॥

हे ढुंढे! सुगन्धित लड्डूसमूह, श्रेष्ठ धूप, दीप, माल्य और सुगन्धसमूहसमेत अनुलेपनोंसे काशीपुरीके फल देनेमें दक्ष हुए आपको भलीभाँति तृप्त करनेके अनन्तर मेरी स्तुति करके कौन यहाँ नहीं सिद्ध होता है अर्थात् सब कोई सिद्ध हो जाता है॥ २०॥

हे ढुंढे! तदनन्तर क्रमसे रहित भी होकर आपके करुणा-कटाक्षोंसे अन्य तीर्थोंका भी यहाँ भली-भाँति साधन करता हुआ एवं दूर किये अपने हितघाती उत्पात-समूहोंवाला होता हुआ इस काशीपुरीमें सम्पूर्ण फलको प्राप्त कर लेता है॥ २१॥

जो प्रातःकाल काशीमें प्रतिदिन आप ढुंढि विनायकको नमस्कार करता है, वह विघ्नसमूहका विनाशक होता है एवं उसको पृथ्वीतलमें वर्तमान कोई भी वस्तु इस और उस लोकमें भी कभी दुर्लभ नहीं है॥ २२॥

योनाम ते जपति ढुण्ढिविनायकस्य
तं वै जपन्त्यनुदिनं हृदि सिद्धयोऽष्टौ।
भोगान्विभुज्य विविधान्विबुधोपभोग्यान्
निर्वाणया कमलया व्रियते स चान्ते॥ २३॥
दूरे स्थितोऽप्यहरहस्तव पादपीठं
यः संस्मरेत्सकलसिद्धिद ढुण्ढिराज।
काशीस्थितेरविकलं स फलं लभेत
नैवान्यथा न वितथा मम वाक्कदाचित्॥ २४॥
जाने विघ्नानसङ्ख्यातान्विनिहन्तुमनेकधा।
क्षेत्रस्यास्य महाभाग नानारूपैरिह स्थितः॥ २५॥
यानि यानि च रूपाणि यत्र यत्र च तेऽनघ।
तानि तत्र प्रवक्ष्यामि शृण्वन्त्वेते दिवौकसः॥ २६॥
प्रथमं ढुण्ढिराजोऽसि मम दक्षिणतो मनाक्।
आढुण्ढ्य सर्वभक्तेभ्यः सर्वार्थान् सम्प्रयच्छसि॥ २७॥

जो आप ढुंढि विनायकका नाम जपता है, उसका प्रतिदिन हृदयमें आठों सिद्धियाँ स्मरण करती हैं और वह देवोंके भोगनेयोग्य अनेक भाँतिके भोगोंको भोगकर अन्तमें मोक्षलक्ष्मीद्वारा अंगीकार किया जाता है॥ २३॥

हे सकलसिद्धिद ढुंढिराज! दूर देशमें स्थित भी जो दिनों-दिन आपके पद-पीठका स्मरण करता है, वह काशीवासका सम्पूर्ण फल प्राप्त करता है—यह मेरा वचन कभी अन्यथा नहीं एवं असत्य नहीं है॥ २४॥

हे महाभाग! मैं जानता हूँ कि आप इस क्षेत्रके असंख्य विघ्नोंको बहुत भाँतिसे नष्ट करनेके लिये अनेक रूपोंसे यहाँ स्थित हैं॥ २५॥

हे निष्पाप! जहाँ-जहाँ आपके जो-जो रूप हैं, वहाँ-वहाँ उन-उनको कहूँगा; जिससे ये देवगण सुन लें॥ २६॥

पहले तो आप मुझसे कुछ दूर समीपमें ही दक्षिण दिशामें ढुंढिराज नामसे स्थित हैं; आप सब अर्थोंको सब ओरसे ढूँढ़कर सब भक्तोंको देते हैं॥ २७॥

अङ्गारवासरवतीमिह यैश्चतुर्थीं
सम्प्राप्य मोदकभरैः परिमोदवद्भिः।
पूजा व्यधायि विविधा तव गन्धमाल्यै-
स्तानत्र पुत्र विदधामि गणान् गणेश॥ २८॥
ये त्वामिह प्रतिचतुर्थि समर्चयन्ति
ढुण्ढे विगाढमतयः कृतिनस्त एव।
सर्वापदां शिरसि वामपदं निधाय
सम्यग्गजानन गजाननतां लभन्ते॥ २९॥
माघशुक्लचतुर्थ्यां तु नक्तव्रतपरायणाः।
ये त्वां ढुण्ढेऽर्चयिष्यन्ति तेऽर्च्याः स्युरसुरद्रुहाम्॥ ३०॥
विधाय वार्षिकीं यात्रां चतुर्थीं प्राप्य तापसीम्।
शुक्लां शुक्लतिलैर्बद्ध्वा प्राश्नीयाल्लड्डुकान् व्रती॥ ३१॥

हे गणेश! यहाँ मंगलवारकी चतुर्थीका योग प्राप्तकर जिन लोगोंने गन्ध, माल्य एवं सुगन्धसमेत मोदक (लड्डू)-समूहोंसे आपकी अनेक भाँतिकी पूजा की, उनको मैं गण बनाता हूँ॥ २८॥

हे ढुंढे, गजमुख! जो महान् बुद्धिवाले प्राणी यहाँ प्रत्येक चतुर्थीमें आपकी पूजा करेंगे; वे ही पुण्यवान् हैं और वे सब विपत्तियोंके सिरपर वामपद रखकर भलीभाँति गजमुखके भावको पाते हैं॥ २९॥

हे ढुंढे! नक्तव्रत (रात्रिमें भोजनका नियम)-में परायण जो लोग माघ शुक्ल चतुर्थीको आपकी पूजा करेंगे, वे देवोंके पूज्य होंगे॥ ३०॥

इस व्रतवाला मनुष्य माघकी शुक्ल चतुर्थीको प्राप्तकर एवं वार्षिकी यात्राको सम्पन्नकर श्वेत तिलोंसे लड्डू बाँधकर भोजन करे॥ ३१॥

कार्या यात्रा प्रयत्नेन क्षेत्रसिद्धिमभीप्सुभिः।
तस्यां चतुर्थ्यां त्वत्प्रीत्यै ढुण्ढे सर्वोपसर्गहृत्॥ ३२॥
तां यात्रां नात्र यः कुर्यान्नैवेद्यं तिललड्डुकैः।
उपसर्गसहस्रैस्तु स हन्तव्यो ममाज्ञया॥ ३३॥
होमं तिलाज्यद्रव्येण यः करिष्यति भक्तितः।
तस्यां चतुर्थ्यां मन्त्रज्ञस्तस्य मन्त्रः प्रसेत्स्यति॥ ३४॥
वैदिकोऽवैदिको वापि यो मन्त्रस्ते गजानन।
जप्तस्त्वत्सन्निधौ ढुण्ढे सिद्धिं दास्यति वाञ्छिताम्॥ ३५॥

ईश्वर उवाच

इमां स्तुतिं मम कृतिं यः पठिष्यति सन्मतिः।
न जातु तं तु विघ्नौघाः पीडयिष्यन्ति निश्चितम्॥ ३६॥

हे सर्वविघ्नविनाशक ढुंढे! आपकी प्रीतिके लिये चतुर्थीमें क्षेत्र-सिद्धिको चाहते हुए लोगोंको यत्नपूर्वक यात्रा करनी चाहिये॥ ३२॥

जो यहाँ उस यात्राको नहीं करता एवं तिलके लड्डुओंसे नैवेद्य नहीं लगाता, वह मेरी आज्ञासे हजारों विघ्नोंके द्वारा पीड़ित होगा॥ ३३॥

जो मंत्रज्ञ उस चतुर्थीमें लावा आदि द्रव्योंसे भक्तिपूर्वक हवन करेगा, उसका मन्त्र पूर्ण सिद्ध होगा॥ ३४॥

हे गजानन ढुंढे! आपके समीपमें जपा हुआ वैदिक एवं तान्त्रिक मन्त्र भी वाञ्छित सिद्धि प्रदान करेगा॥ ३५॥

ईश्वर बोले—यह निश्चय किया गया है कि जो उत्तम बुद्धिवाले लोग मेरी की हुई इस स्तुतिको पढ़ेंगे, उनको विघ्नसमूह कभी पीड़ित नहीं करेंगे॥ ३६॥

ढौण्ढीं स्तुतिमिमां पुण्यां यः पठेद् ढुण्ढिसन्निधौ।
सान्निध्यं तस्य सततं भजेयुः सर्वसिद्धयः॥ ३७॥
इमां स्तुतिं नरो जप्त्वा परं नियतमानसः।
मानसैरपि पापैस्तैर्नाभिभूयेत कर्हिचित्॥ ३८॥
पुत्रान्कलत्रं क्षेत्राणि वराश्वान्वरमन्दिरम्।
प्राप्नुयाच्च धनं धान्यं ढुण्ढिस्तोत्रं जपन्नरः॥ ३९॥
सर्वसम्पत्करं नाम स्तोत्रमेतन्मयेरितम्।
प्रजप्तव्यं प्रयत्नेन मुक्तिकामेन सर्वदा॥ ४०॥
जप्त्वा स्तोत्रमिदं पुण्यं क्वापि कार्ये गमिष्यतः।
पुंसः पुरः समेष्यन्ति नियतं सर्वसिद्धयः॥ ४१॥

॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे काशीखण्डे शिवकृतं सर्वसम्पत्करढुण्ढिविनायकस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

ढुंढिराजकी इस पुण्यमयी स्तुतिको जो उनके समीप पढ़ेगा, सब सिद्धियाँ उसके समीप सदा विराजमान रहेंगी॥ ३७॥

सावधान मनसे मनुष्य इस स्तुतिको पढ़कर मानसिक पापोंसे भी कभी तिरस्कृत नहीं होता॥ ३८॥

ढुंढिराजकी स्तुतिको जपता हुआ मनुष्य पुत्र, स्त्री, क्षेत्र, उत्तम घोड़ों, श्रेष्ठ घर, धन और धान्यको प्राप्त करता है॥ ३९॥

सर्वसंपत्कर नामक यह मेरा कहा हुआ स्तोत्र मुक्ति चाहनेवाले मनुष्यको यत्नपूर्वक सदैव जपना चाहिए॥ ४०॥

इस पुण्यमय स्तोत्रको पढ़कर कहीं भी कार्यके लिये जानेवाले पुरुषके आगे सब सिद्धियाँ नियमसे भलीभाँति आ जाती हैं॥ ४१॥

॥ इस प्रकार श्रीस्कन्दपुराणके अन्तर्गत काशीखण्डमें शिवकृत सर्वसम्पत्करढुण्ढि-विनायकस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीढुण्ढिभुजङ्गप्रयातस्तोत्रम्

उमाङ्गोद्भवं दन्तिवक्त्रं गणेशं
भुजे कङ्कणैः शोभितं धूम्रकेतुम्।
गले हारमुक्तावलीशोभितं तं
नमो ज्ञानरूपं गणेशं नमस्ते॥ १॥

गणेशैकदन्तं शुभं सर्वकार्ये
स्मरन्मन्मुखं ज्ञानदं सर्वसिद्धिम्।
मनश्चिन्तितं कार्यसिद्धिर्भवेत्तं
नमो बुद्धिकान्तं गणेशं नमस्ते॥ २॥

कुठारं धरन्तं कृतं विघ्नराजं
चतुर्भिर्मुखैरेकदन्तैकवर्णम् ।

भगवती उमाके अंगसे उत्पन्न, हाथीके मुखवाले, गणोंके स्वामी, भुजामें कंकणोंसे शोभित होनेवाले, धूम्रवर्णकी पताकावाले तथा गलेमें हार और मोतियोंकी मालासे सुशोभित ज्ञानस्वरूप उन गणेशको बारम्बार नमस्कार है॥ १॥

गणोंके स्वामी, एक दाँतवाले, सभी कार्योंमें शुभ करनेवाले, प्रारम्भमें स्मरण किये जानेवाले, ज्ञान और सभी प्रकारकी सिद्धि प्रदान करनेवाले उन भगवान् गणेशका मनसे चिन्तन करनेपर कार्यकी सिद्धि हो जाती है, ऐसे बुद्धिके स्वामी गणेशको बारम्बार नमस्कार है॥ २॥

कुठार धारण करनेवाले, विघ्नोंके स्वामी, चार मुखोंसे युक्त होनेपर भी एक दाँत और एक वर्णवाले इस प्रकारके देवस्वरूपको धारण

इदं देवरूपं गणं सिद्धिनाथं
नमो भालचन्द्रं गणेशं नमस्ते॥ ३॥
शिरःसिन्दुरं कुंकुमं देहवर्णं
शुभेभादिकं प्रीयते विघ्नराजम्।
महासङ्कटच्छेदने धूम्रकेतुं
नमो गौरिपुत्रं गणेशं नमस्ते॥ ४॥
यथा पातकं छेदितुं विष्णुनाम
तथा ध्यायतां शङ्करं पापनाशम्।
यथा पूजितं षण्मुखं शोकनाशं
नमो विघ्ननाशं गणेशं नमस्ते॥ ५॥
सदा सर्वदा ध्यायतामेकदन्तं
सदा पूजितं सिन्दुरारक्तपुष्पैः।

करनेवाले गणस्वरूप तथा सिद्धिके स्वामी भालचन्द्र गणेश आपको बारम्बार नमस्कार है॥ ३॥

जिनका सिर सिन्दूरसे सुशोभित है और जिनके देहकी आभा कुंकुमवर्णकी है, शुभ हाथी आदि जिस विघ्नराजकी प्रार्थना करते हैं, जो महान् संकटको दूर करनेमें धूमकेतु हैं, इस प्रकारके गौरीपुत्र गणेशको बारम्बार नमस्कार है॥ ४॥

जिस प्रकार पातकको काटनेमें विष्णुका नाम समर्थ है, उसी प्रकार ध्यान करनेवालोंका पापका नाश करनेमें भगवान् शंकर समर्थ हैं। जिस प्रकार पूजित होनेपर षण्मुख कार्तिकेय शोकका नाश करनेवाले हैं, उसी प्रकार विघ्नोंका नाश करनेवाले गणेशको बारम्बार नमस्कार है॥ ५॥

जो सदा-सर्वदा एकदन्तरूपसे ध्यान करनेयोग्य हैं, जो सदा सिन्दूर

सदा चर्चितं चन्दनैः कुङ्कुमाक्तं
नमो ज्ञानरूपं गणेशं नमस्ते ॥ ६ ॥
नमो गौरिदेहमलोत्पन्न तुभ्यं
नमो ज्ञानरूपं नमः सिद्धिपं तम्।
नमो ध्यायतामर्चतां बुद्धिदं तं
नमो गौर्यपत्यं गणेशं नमस्ते ॥ ७ ॥
भुजङ्गप्रयातं पठेद्यस्तु भक्त्या
प्रभाते नरस्तन्मयैकाग्रचित्तः।
क्षयं यान्ति विघ्ना दिशः शोभयन्तं
नमो ज्ञानरूपं गणेशं नमस्ते ॥ ८ ॥

॥ इति श्रीढुण्ढिभुजङ्गप्रयातस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

वर्णके लाल पुष्पोंसे पूजित हैं, जो सदा कुंकुमसे मिश्रित चन्दनसे चर्चित हैं, इस प्रकारके ज्ञानस्वरूप गणेशको बारम्बार नमस्कार है॥ ६॥

पार्वतीके शरीरके मैलसे उत्पन्न होनेवाले आपको नमस्कार है। ज्ञानस्वरूप आपको नमस्कार है, सिद्धियोंके पालन करनेवाले आपको नमस्कार है, जो ध्यान करनेवाले तथा अर्चन करनेवालोंको बुद्धि प्रदान करनेवाले हैं, उन गौरीके पुत्र गणेशको बारम्बार नमस्कार है॥ ७॥

जो मनुष्य भक्तिसे तन्मय होकर एकाग्रचित्तसे प्रभात-वेलामें इस भुजंगप्रयातस्तोत्रको पढ़ता है, उसके सभी प्रकारके विघ्न नष्ट हो जाते हैं। दिशाओंको सुशोभित करनेवाले ज्ञानरूप गणेशको बारम्बार नमस्कार है॥ ८॥

॥ इस प्रकार श्रीढुण्ढिभुजंगप्रयातस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

उत्पातनाशनगणेशस्तोत्रम्

नाथस्त्वमसि देवानां मनुष्योरगरक्षसाम्॥ १॥
यक्षगन्धर्वविप्राणां गजाश्वरथपक्षिणाम्।
भूतभव्यभविष्यस्य बुद्धीन्द्रियगणस्य च॥ २॥
हर्षस्य शोकदुःखस्य सुखस्य ज्ञानमोहयोः।
अर्थस्य कार्यजातस्य लाभहान्योस्तथैव च॥ ३॥
स्वर्गपाताललोकानां पृथिव्या जलधेरपि।
नक्षत्राणां ग्रहाणां च पिशाचानां च वीरुधाम्॥ ४॥
वृक्षाणां सरितां पुंसां स्त्रीणां बालजनस्य च।
उत्पत्तिस्थितिसंहारकारिणे ते नमो नमः॥ ५॥
पशूनां पतये तुभ्यं तत्त्वज्ञानप्रदायिने।
नमो विष्णुस्वरूपाय नमस्ते रुद्ररूपिणे॥ ६॥
नमस्ते ब्रह्मरूपाय नमोऽनन्तस्वरूपिणे।
मोक्षहेतो नमस्तुभ्यं नमो विघ्नहराय ते॥ ७॥

[हे प्रभो!]आप देवता, मनुष्य, नाग, राक्षस, यक्ष, गन्धर्व, विप्र, गज, अश्व, रथ, पक्षी, भूत, वर्तमान, भविष्य, बुद्धि, इन्द्रियसमूह, हर्ष, शोक, दुःख, सुख, ज्ञान, मोह, अर्थ, समस्त कार्य, लाभ, हानि, स्वर्ग तथा पाताल आदि लोक, पृथ्वी, समुद्र, नक्षत्र, ग्रह, पिशाच, वनस्पति, वृक्ष, नदी, पुरुष, स्त्री एवं बालक—इन सभीके स्वामी हैं। सृष्टि, पालन तथा संहार करनेवाले आप [गणेश]-को बार-बार नमस्कार है॥ १—५॥

[जीवरूपी] पशुओंके पति तथा तत्त्वज्ञान प्रदान करनेवाले आपको नमस्कार है। विष्णुस्वरूप तथा रुद्रस्वरूप आपको नमस्कार है॥ ६॥

ब्रह्मस्वरूप आपको नमस्कार है। अनन्तस्वरूप आपको नमस्कार है। हे मोक्षहेतो! आपको नमस्कार है। विघ्नोंका नाश करनेवाले आपको नमस्कार है॥ ७॥

नमोऽभक्तविनाशाय नमो भक्तप्रियाय च।
अधिदैवाधिभूतात्मंस्तापत्रयहराय ते॥ ८॥
सर्वोत्पातविघाताय नमो लीलास्वरूपिणे।
सर्वान्तर्यामिणे तुभ्यं सर्वाध्यक्षाय ते नमः॥ ९॥
अदित्या जठरोत्पन्न विनायक नमोऽस्तु ते।
परब्रह्मस्वरूपाय नमः कश्यपसूनवे॥ १०॥
अमेयमायान्वितविक्रमाय
मायाविने मायिकमोहनाय।
अमेयमायाहरणाय माया-
महाश्रयायास्तु नमो नमस्ते॥ ११॥
य इदं पठते स्तोत्रं त्रिसंध्योत्पातनाशनम्।
न भवन्ति महोत्पाता विघ्ना भूतभयानि च॥ १२॥

अभक्तोंका नाश करनेवाले आपको नमस्कार है तथा भक्तोंके लिये प्रिय आपको नमस्कार है॥ ८॥

आधिदैविक, आधिभौतिक तथा आध्यात्मिक—इन तीनों प्रकारके तापोंका हरण करनेवाले आपको नमस्कार है। समस्त उपद्रवोंका नाश करनेवाले तथा लीलास्वरूप आपको नमस्कार है। आप सर्वान्तर्यामीको नमस्कार है। आप सर्वाध्यक्षको नमस्कार है॥ ९॥

देवी अदितिके गर्भसे उत्पन्न हे विनायक! आपको नमस्कार है। आप परब्रह्मस्वरूप कश्यपपुत्रको नमस्कार है॥ १०॥

अपरिमित मायासे सम्पन्न पराक्रमवाले, मायास्वरूप, मायावियोंको भी मोहित कर देनेवाले, अपरिमेय मायाका हरण कर लेनेवाले तथा महामायाके आश्रयस्वरूप आपको बार-बार नमस्कार है॥ ११॥

जो [मनुष्य] तीनों सन्ध्याकालोंमें उपद्रवोंका नाश करनेवाले इस स्तोत्रका पाठ करता है, उसे महान् उत्पात, विघ्न तथा भूतोंके भय नहीं होते॥ १२॥

त्रिसंध्यं यः पठेत् स्तोत्रं सर्वान् कामानवाप्नुयात्।
विनायकः सदा तस्य रक्षणं कुरुतेऽनघ॥ १३॥

॥ इति श्रीगणेशपुराणे उत्पातनाशनगणेशस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

जो तीनों सन्ध्याओंमें इस स्तोत्रको पढ़ता है, वह समस्त वांछित फल प्राप्त करता है और हे अनघ! विनायक गणेश सदा उसकी रक्षा करते हैं॥ १३॥

॥ इस प्रकार श्रीगणेशपुराणमें उत्पातनाशनगणेशस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणेशनामाष्टकस्तोत्रम्

विष्णुरुवाच

गणेशमेकदन्तं च हेरम्बं विघ्ननायकम्।
लम्बोदरं शूर्पकर्णं गजवक्त्रं गुहाग्रजम्॥ १॥
नामाष्टार्थं च पुत्रस्य शृणु मातर्हरप्रिये।
स्तोत्राणां सारभूतं च सर्वविघ्नहरं परम्॥ २॥
ज्ञानार्थवाचको गश्च णश्च निर्वाणवाचकः।
तयोरीशं परं ब्रह्म गणेशं प्रणमाम्यहम्॥ ३॥

विष्णुजी [पार्वतीजीसे] बोले—हे माता! आपके पुत्रके 'गणेश, एकदन्त, हेरम्ब, विघ्ननायक, लम्बोदर, शूर्पकर्ण, गजवक्त्र और गुहाग्रज'—ये आठ नाम हैं—इन आठ नामोंका अर्थ सुनिये। हे शिवप्रिये! यह उत्तम (नामाष्टकस्तोत्र) सभी स्तोत्रोंका सारभूत और सम्पूर्ण विघ्नोंका निवारण करनेवाला है॥ १-२॥

'ग' ज्ञानार्थवाचक और 'ण' निर्वाणवाचक है। इन दोनों (ग+ण)-के जो ईश हैं, उन परब्रह्म 'गणेश'को मैं प्रणाम करता हूँ॥ ३॥

एकशब्दः प्रधानार्थो दन्तश्च बलवाचकः।
बलं प्रधानं सर्वस्मादेकदन्तं नमाम्यहम्॥ ४॥
दीनार्थवाचको हेश्च रम्बः पालकवाचकः।
दीनानां परिपालकं हेरम्बं प्रणमाम्यहम्॥ ५॥
विपत्तिवाचको विघ्नो नायकः खण्डनार्थकः।
विपत्खण्डनकारकं नमामि विघ्ननायकम्॥ ६॥
विष्णुदत्तैश्च नैवेद्यैर्यस्य लम्बोदरं पुरा।
पित्रा दत्तैश्च विविधैर्वन्दे लम्बोदरं च तम्॥ ७॥
शूर्पाकारौ च यत्कर्णौ विघ्नवारणकारणौ।
सम्पदौ ज्ञानरूपौ च शूर्पकर्णं नमाम्यहम्॥ ८॥
विष्णुप्रसादपुष्पं च यन्मूर्ध्नि मुनिदत्तकम्।
तद्गजेन्द्रवक्त्रयुक्तं गजवक्त्रं नमाम्यहम्॥ ९॥

'एक' शब्द प्रधानार्थक है और 'दन्त' बलवाचक है; अतः जिनका बल सबसे बढ़कर है, उन 'एकदन्त'को मैं नमस्कार करता हूँ॥ ४॥

'हे' दीनार्थवाचक और 'रम्ब' पालकका वाचक है; अतः दीनोंका पालन करनेवाले 'हेरम्ब'को मैं शीश नवाता हूँ॥ ५॥

'विघ्न' विपत्तिवाचक और 'नायक' खण्डनार्थक है; इस प्रकार जो विपत्तिके विनाशक हैं, उन 'विघ्ननायक'का मैं अभिवादन करता हूँ॥ ६॥

पूर्वकालमें विष्णुद्वारा दिये गये नैवेद्यों तथा पिताद्वारा समर्पित अनेक प्रकारके मिष्टान्नोंके खानेसे जिनका उदर लम्बा हो गया है, उन 'लम्बोदर'की मैं वन्दना करता हूँ॥ ७॥

जिनके कर्ण शूर्पाकार, विघ्न-निवारणके हेतु, सम्पदाके दाता और ज्ञानरूप हैं, उन 'शूर्पकर्ण'को मैं सिर झुकाता हूँ॥ ८॥

जिनके मस्तकपर मुनिद्वारा दिया गया विष्णुका प्रसादरूप पुष्प वर्तमान है और जो गजेन्द्रके मुखसे युक्त हैं, उन 'गजवक्त्र'को मैं नमस्कार करता हूँ॥ ९॥

गुहस्याग्रे च जातोऽयमाविर्भूतो हरालये।
वन्दे गुहाग्रजं देवं सर्वदेवाग्रपूजितम्॥ १०॥

× × × ×

एतन्नामाष्टकं स्तोत्रं नानार्थसंयुतं शुभम्।
त्रिसंध्यं यः पठेन्नित्यं स सुखी सर्वतो जयी॥ ११॥
ततो विघ्नाः पलायन्ते वैनतेयाद् यथोरगाः।
गणेश्वरप्रसादेन महाज्ञानी भवेद् ध्रुवम्॥ १२॥
पुत्रार्थी लभते पुत्रं भार्यार्थी विपुलां स्त्रियम्।
महाजडः कवीन्द्रश्च विद्यावांश्च भवेद् ध्रुवम्॥ १३॥

॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्तपुराणे गणपतिखण्डे श्रीगणेशनामाष्टकस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

जो गुह (स्कन्द)-से पहले जन्म लेकर शिव-भवनमें आविर्भूत हुए हैं तथा समस्त देवगणोंमें जिनकी अग्रपूजा होती है, उन 'गुहाग्रज'की मैं वन्दना करता हूँ॥ १०॥

इस 'नामाष्टकस्तोत्र'का जो नाना अर्थोंसे संयुक्त एवं शुभकारक है, जो नित्य तीनों संध्याओंके समय पाठ करता है, वह सुखी और सर्वत्र विजयी होता है॥ ११॥

उसके पाससे विघ्न उसी प्रकार भाग जाते हैं, जैसे गरुड़के निकटसे साँप। गणेश्वरकी कृपासे वह निश्चय ही महान् ज्ञानी हो जाता है॥ १२॥

पुत्रार्थीको पुत्र और भार्याकी कामनावालेको उत्तम स्त्री मिल जाती है तथा महामूर्ख निश्चय ही विद्वान् और श्रेष्ठ कवि हो जाता है॥ १३॥

॥ इस प्रकार श्रीब्रह्मवैवर्तपुराणके अन्तर्गत गणपतिखण्डमें श्रीगणेशनामाष्टकस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणेशाष्टावतारस्मरणम्

वक्रतुण्डावतारश्च देहानां ब्रह्मधारकः।
मत्सरासुरहन्ता स सिंहवाहनगः स्मृतः॥ १॥
एकदन्तावतारो वै देहिनां ब्रह्मधारकः।
मदासुरस्य हन्ता स आखुवाहनगः स्मृतः॥ २॥
महोदर इति ख्यातो ज्ञानब्रह्मप्रकाशकः।
मोहासुरस्य शत्रुर्वै आखुवाहनगः स्मृतः॥ ३॥
गजाननः स विज्ञेयः साङ्ख्येभ्यः सिद्धिदायकः।
लोभासुरप्रहर्ता वै आखुगश्च प्रकीर्तितः॥ ४॥
लम्बोदरावतारो वै क्रोधासुरनिबर्हणः।
शक्तिब्रह्माखुगः सद् यत् तस्य धारक उच्यते॥ ५॥

वक्रतुण्डावतार देह–ब्रह्मको धारण करनेवाला है, वह मत्सरासुरका संहारक तथा सिंहवाहनपर चलनेवाला माना गया है॥ १॥

एकदन्तावतार देह–ब्रह्मका धारक है, वह मदासुरका वध करनेवाला है, उसका वाहन मूषक बताया गया है॥ २॥

महोदर नामसे विख्यात अवतार ज्ञान–ब्रह्मका प्रकाशक है। उसे मोहासुरका विनाशक और मूषकवाहन बताया गया है॥ ३॥

जो **गजानन** नामक अवतार है, वह सांख्यब्रह्म–धारक है, उसको सांख्ययोगियोंके लिये सिद्धिदायक जानना चाहिये। उसे लोभासुरका संहारक और मूषकवाहन कहा गया है॥ ४॥

लम्बोदर नामक अवतार क्रोधासुरका उन्मूलन करनेवाला है; वह सत्स्वरूप जो शक्तिब्रह्म है, उसका धारक कहलाता है। वह भी मूषकवाहन ही है॥ ५॥

विकटो नाम विख्यातः कामासुरविदाहकः।
मयूरवाहनश्चायं सौरब्रह्मधरः स्मृतः॥ ६॥
विघ्नराजावतारश्च शेषवाहन उच्यते।
ममतासुरहन्ता स विष्णुब्रह्मेतिवाचकः॥ ७॥
धूम्रवर्णावतारश्चाभिमानासुरनाशकः।
आखुवाहन एवासौ शिवात्मा तु स उच्यते॥ ८॥

॥ इति श्रीमुद्गलपुराणे श्रीगणेशाष्टावतारस्मरणं सम्पूर्णम्॥

विकट नामसे प्रसिद्ध अवतार कामासुरका संहारक है, वह मयूरवाहन एवं सौरब्रह्मका धारक माना गया है॥ ६॥

विघ्नराज नामक जो अवतार है, उसके वाहन शेषनाग बताये जाते हैं, वह विष्णुब्रह्मका वाचक (धारक) तथा ममतासुरका विनाशक है॥ ७॥

धूम्रवर्ण नामक अवतार अभिमानासुरका नाश करनेवाला है, वह शिवब्रह्म स्वरूप है। उसे भी मूषकवाहन ही कहा जाता है॥ ८॥

॥ इस प्रकार श्रीमुद्गलपुराणमें श्रीगणेशाष्टावतारस्मरण सम्पूर्ण हुआ॥

सिन्दूरवर्णं द्विभुजं गणेशं लम्बोदरं पद्मदले निविष्टम्।
ब्रह्मादिदेवैः परिसेव्यमानं सिद्धैर्युतं तं प्रणमामि देवम्॥

'सच्चिदानन्दमय भगवान् गणेशकी अंगकान्ति सिन्दूरके समान है, उनके दो भुजाएँ हैं, वे लम्बोदर हैं और कमलदलपर विराजमान हैं। ब्रह्मा आदि देवता उनकी सेवामें लगे हैं तथा वे सिद्धसमुदायसे युक्त हैं, ऐसे श्रीगणपतिदेवको मैं प्रणाम करता हूँ।'

मनोरथसिद्धिप्रदगणेशस्तोत्रम्

स्कन्द उवाच

नमस्ते योगरूपाय सम्प्रज्ञातशरीरिणे।
असम्प्रज्ञातमूर्ध्ने ते तयोर्योगमयाय च॥ १॥
वामाङ्गे भ्रान्तिरूपा ते सिद्धिः सर्वप्रदा प्रभो।
भ्रान्तिधारकरूपा वै बुद्धिस्ते दक्षिणाङ्गके॥ २॥
मायासिद्धिस्तथा देवो मायिको बुद्धिसंज्ञितः।
तयोर्योगे गणेशान त्वं स्थितोऽसि नमोऽस्तु ते॥ ३॥
जगद्रूपो गकारश्च णकारो ब्रह्मवाचकः।
तयोर्योगे गणेशाय नाम तुभ्यं नमो नमः॥ ४॥

स्कन्द बोले—हे गणेश्वर! सम्प्रज्ञात समाधि आपका शरीर तथा असम्प्रज्ञात समाधि आपका मस्तक है। आप दोनोंके योगमय होनेके कारण योगस्वरूप हैं; आपको नमस्कार है॥ १॥

प्रभो! आपके वामांगमें भ्रान्तिरूपा सिद्धि विराजमान हैं, जो सब कुछ देनेवाली हैं तथा आपके दाहिने अंगमें भ्रान्तिधारक रूपवाली बुद्धिदेवी स्थित हैं। भ्रान्ति अथवा माया सिद्धि है और उसे धारण करनेवाले गणेशदेव मायिक हैं। बुद्धि संज्ञा भी उन्हींकी है। हे गणेश्वर! आप सिद्धि और बुद्धि—दोनोंके योगमें स्थित हैं; आपको बारम्बार नमस्कार है॥ २-३॥

गकार जगत्स्वरूप है और णकार ब्रह्मका वाचक है। उन दोनोंके योगमें विद्यमान आप गणेश-देवताको बारम्बार नमस्कार है॥ ४॥

चतुर्विधं जगत्सर्वं ब्रह्म तत्र तदात्मकम्।
हस्ताश्चत्वार एवं ते चतुर्भुज नमोऽस्तु ते॥ ५॥
स्वसंवेद्यं च यद्ब्रह्म तत्र खेलकरो भवान्।
तेन स्वानन्दवासी त्वं स्वानन्दपतये नमः॥ ६॥
द्वन्द्वं चरसि भक्तानां तेषां हृदि समास्थितः।
चौरवत्तेन तेऽभूद् वै मूषको वाहनं प्रभो॥ ७॥
जगति ब्रह्मणि स्थित्वा भोगान् भुङ्क्षे स्वयोगतः।
जगद्भिर्ब्रह्मभिस्तेन चेष्टितं ज्ञायते न च॥ ८॥
चौरवद्भोगकर्ता त्वं तेन ते वाहनं परम्।
मूषको मूषकारूढो हेरम्बाय नमो नमः॥ ९॥

जरायुज आदि भेदसे चार प्रकारका जो जगत् है, वह सब ब्रह्म है। जगत्में ब्रह्म ही उसके रूपमें भास रहा है। इस प्रकार चतुर्विध जगत् ही आपके चार हाथ हैं। हे चतुर्भुज! आपको नमस्कार है॥ ५॥

स्वसंवेद्य जो ब्रह्म है, उसमें आप खेलते या आनन्द लेते हैं; इसीलिये आप स्वानन्दवासी हैं। आप स्वानन्दपतिको नमस्कार है॥ ६॥

हे प्रभो! आप भक्तोंके हृदयमें रहकर उनके सुख-दुःख आदि द्वन्द्वोंको चोरकी भाँति चरते या चुराते हैं। इसीलिये मूषक (चूहा, चुरानेवाला) आपका वाहन है॥ ७॥

आप जगत्-रूप ब्रह्ममें स्थित रहकर भोगोंको भोगते हैं, तथापि अपने योगमें ही विराजते हैं; इसलिये ब्रह्मरूप जगत् आपकी चेष्टाको नहीं जान पाता॥ ८॥

आप चौरकी भाँति भोगकर्ता हैं, इसलिये आपका उत्कृष्ट वाहन मूषक है। आप मूषकपर आरूढ़ हैं। आप हेरम्बको बारम्बार नमस्कार है॥ ९॥

किं स्तौमि त्वां गणाधीश योगशान्तिधरं परम्।
वेदादयो ययुः शान्तिमतो देवं नमाम्यहम्॥ १०॥
इति स्तोत्रं समाकर्ण्य गणेशस्तमुवाच ह।
वरं वृणु महाभाग दास्यामि दुर्लभं ह्यपि॥ ११॥
त्वया कृतमिदं स्तोत्रं योगशान्तिप्रदं भवेत्।
मयि भक्तिकरं स्कन्द सर्वसिद्धिप्रदं तथा॥ १२॥
यं यमिच्छसि तं तं वै दास्यामि स्तोत्रयन्त्रितः।
पठते शृण्वते नित्यं कार्तिकेय विशेषतः॥ १३॥

॥ इति श्रीमुद्गलपुराणे मनोरथसिद्धिप्रदगणेशस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

गणाधीश! आप योगशान्तिधारी उत्कृष्ट देवता हैं, मैं आपकी क्या स्तुति कर सकता हूँ! आपकी स्तुति करनेमें तो वेद आदि भी शान्ति (मौन) धारण कर लेते हैं, अतः मैं आप गणेशदेवताको नमस्कार करता हूँ॥ १०॥

यह स्तोत्र सुनकर गणेशजीने स्कन्दसे कहा—हे महाभाग! वर माँगो। वह दुर्लभ होनेपर भी मैं तुम्हें दूँगा॥ ११॥

हे स्कन्द! तुम्हारे द्वारा किया गया यह स्तोत्र योगशान्तिदाता, मुझमें भक्ति उत्पन्न करनेवाला तथा सम्पूर्ण सिद्धियोंको देनेवाला होगा॥ १२॥

हे कार्तिकेय! तुम जो-जो चाहोगे, वह-वह वस्तु तुम्हारे स्तोत्रमें बँधकर मैं निश्चय ही देता रहूँगा। विशेषतः उन्हें, जो प्रतिदिन इसका पाठ और श्रवण करते होंगे, मैं मनोवांछित वस्तु दूँगा॥ १३॥

॥ इस प्रकार श्रीमुद्गलपुराणमें मनोरथसिद्धिप्रद-
गणेशस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणपतिस्तोत्रम्

ॐ नमो विघ्नराजाय सर्वसौख्यप्रदायिने।
दुष्टारिष्टविनाशाय पराय परमात्मने॥ १॥
लम्बोदरं महावीर्यं नागयज्ञोपशोभितम्।
अर्धचन्द्रधरं देवं विघ्नव्यूहविनाशनम्॥ २॥
ॐ ह्राँ ह्रीं ह्रूँ ह्रैं ह्रौं ह्रः हेरम्बाय नमो नमः।
सर्वसिद्धिप्रदोऽसि त्वं सिद्धिबुद्धिप्रदो भव॥ ३॥
चिन्तितार्थप्रदस्त्वं हि सततं मोदकप्रियः।
सिन्दूरारुणवस्त्रैश्च पूजितो वरदायकः॥ ४॥
इदं गणपतिस्तोत्रं यः पठेद् भक्तिमान् नरः।
तस्य देहं च गेहं च स्वयं लक्ष्मीर्न मुञ्चति॥ ५॥

॥ इति श्रीगणपतिस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

सम्पूर्ण सौख्य प्रदान करनेवाले सच्चिदानन्दस्वरूप विघ्नराज गणेशको नमस्कार है। जो दुष्ट अरिष्ट ग्रहोंका नाश करनेवाले परात्पर परमात्मा हैं, उन गणपतिको नमस्कार है॥ १॥

जो महापराक्रमी, लम्बोदर, सर्पमय यज्ञोपवीतसे सुशोभित, अर्धचन्द्रधारी और विघ्न-समूहका विनाश करनेवाले हैं, उन गणपतिदेवकी मैं वन्दना करता हूँ॥ २॥

ॐ ह्राँ ह्रीं ह्रूँ ह्रैं ह्रौं ह्रः हेरम्बको बार-बार नमस्कार है। [हे भगवन्!] आप सब सिद्धियोंके दाता हैं, आप हमारे लिये सिद्धिबुद्धिदायक हों॥ ३॥

आपको सदा ही मोदक (लड्डू) प्रिय है। आप मनके द्वारा चिन्तित अर्थको देनेवाले हैं। सिन्दूर और लाल वस्त्रसे पूजित होकर आप सदा वर प्रदान करते हैं॥ ४॥

जो मनुष्य भक्तिभावसे युक्त हो इस गणपतिस्तोत्रका पाठ करता है, स्वयं लक्ष्मी उसके देह-गेहको नहीं छोड़तीं॥ ५॥

॥ इस प्रकार श्रीगणपतिस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

सन्तानगणपतिस्तोत्रम्

नमोऽस्तु गणनाथाय सिद्धिबुद्धियुताय च।
सर्वप्रदाय देवाय पुत्रवृद्धिप्रदाय च॥ १॥
गुरूदराय गुरवे गोप्त्रे गुह्यासिताय ते।
गोप्याय गोपिताशेषभुवनाय चिदात्मने॥ २॥
विश्वमूलाय भव्याय विश्वसृष्टिकराय ते।
नमो नमस्ते सत्याय सत्यपूर्णाय शुण्डिने॥ ३॥
एकदन्ताय शुद्धाय सुमुखाय नमो नमः।
प्रपन्नजनपालाय प्रणतार्तिविनाशिने॥ ४॥

सिद्धि-बुद्धिसहित उन गणनाथको नमस्कार है, जो पुत्रवृद्धि प्रदान करनेवाले तथा सब कुछ देनेवाले देवता हैं॥ १॥

जो भारी पेटवाले (लम्बोदर), गुरु (ज्ञानदाता), गोप्ता (रक्षक), गुह्य (गूढ़स्वरूप) तथा सब ओरसे गौर हैं; जिनका स्वरूप और तत्त्व गोपनीय है तथा जो समस्त भुवनोंके रक्षक हैं, उन चिदात्मा आप गणपतिको नमस्कार है॥ २॥

जो विश्वके मूल कारण, कल्याणस्वरूप, संसारकी सृष्टि करनेवाले, सत्यरूप, सत्यपूर्ण तथा शुण्डधारी हैं, उन आप गणेश्वरको बारम्बार नमस्कार है॥ ३॥

जिनके एक दाँत और सुन्दर मुख है; जो शरणागत भक्तजनोंके रक्षक तथा प्रणतजनोंकी पीड़ाका नाश करनेवाले हैं, उन शुद्धस्वरूप आप गणपतिको बारम्बार नमस्कार है॥ ४॥

शरणं भव देवेश सन्ततिं सुदृढां कुरु।
भविष्यन्ति च ये पुत्रा मत्कुले गणनायक॥ ५॥
ते सर्वे तव पूजार्थं निरताः स्युर्वरो मतः।
पुत्रप्रदमिदं स्तोत्रं सर्वसिद्धिप्रदायकम्॥ ६॥

॥ इति सन्तानगणपतिस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

हे देवेश्वर! आप मेरे लिये शरणदाता हों। मेरी सन्तान-परम्पराको सुदृढ़ करें। हे गणनायक! मेरे कुलमें जो पुत्र हों, वे सब आपकी पूजाके लिये सदा तत्पर हों—यह वर प्राप्त करना मुझे इष्ट है। यह पुत्रप्रदायक स्तोत्र समस्त सिद्धियोंको देनेवाला है॥ ५-६॥

॥ इस प्रकार सन्तानगणपतिस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

गणेशसूक्तिः

गौरीश्रवःकेतकपत्रभङ्गमाकृष्य हस्तेन ददन्मुखाग्रे।
विघ्नं मुहूर्ताकलितद्वितीयदन्तप्ररोहो हरतु द्विपास्यः॥

[मुहूर्तचिन्तामणि]

पार्वतीजीके कानमें पहने हुए केतकपत्रको सूँडसे खींचकर मुखके अग्रभागमें लगाते समय क्षणभरके लिये जिनके मुखसे द्वितीय दाँतका अंकुर-सा निकलता जान पड़ा, वे भगवान् गजानन मेरे विघ्नको हर लें।

श्रीगणाधीशस्तोत्रम्

श्रीशक्तिशिवावूचतुः

नमस्ते गणनाथाय गणानां पतये नमः।
भक्तिप्रियाय देवेश भक्तेभ्यः सुखदायक॥ १॥
स्वानन्दवासिने तुभ्यं सिद्धिबुद्धिवराय च।
नाभिशेषाय देवाय ढुण्ढिराजाय ते नमः॥ २॥
वरदाभयहस्ताय नमः परशुधारिणे।
नमस्ते सृणिहस्ताय नाभिशेषाय ते नमः॥ ३॥
अनामयाय सर्वाय सर्वपूज्याय ते नमः।
सगुणाय नमस्तुभ्यं ब्रह्मणे निर्गुणाय च॥ ४॥
ब्रह्मभ्यो ब्रह्मदात्रे च गजानन नमोऽस्तु ते।
आदिपूज्याय ज्येष्ठाय ज्येष्ठराजाय ते नमः॥ ५॥

श्रीशक्ति और शिव बोले—भक्तोंको सुख देनेवाले हे देवेश्वर! आप भक्तिप्रिय हैं तथा गणोंके अधिपति हैं; आप गणनाथको नमस्कार है॥ १॥

आप स्वानन्दलोकके वासी और सिद्धि-बुद्धिके प्राणवल्लभ हैं। आपकी नाभिमें भूषणरूपसे शेषनाग विराजते हैं; आप ढुण्ढिराजदेवको नमस्कार है॥ २॥

आपके हाथोंमें वरद और अभयकी मुद्राएँ हैं। आप परशु धारण करते हैं। आपके हाथमें अंकुश शोभा पाता है और नाभिमें नागराज; आपको नमस्कार है॥ ३॥

आप रोगरहित, सर्वस्वरूप और सबके पूजनीय हैं; आपको नमस्कार है। आप ही सगुण और निर्गुण ब्रह्म हैं; आपको नमस्कार है॥ ४॥

आप ब्राह्मणोंको ब्रह्म (वेद एवं ब्रह्म-तत्त्वका ज्ञान) देते हैं; हे गजानन! आपको नमस्कार है। आप प्रथम पूजनीय, ज्येष्ठ (कुमार कार्तिकेयके बड़े भाई) और ज्येष्ठराज हैं, आपको नमस्कार है॥ ५॥

मात्रे पित्रे च सर्वेषां हेरम्बाय नमो नमः।
अनादये च विघ्नेश विघ्नकर्त्रे नमो नमः॥ ६ ॥
विघ्नहर्त्रे स्वभक्तानां लम्बोदर नमोऽस्तु ते।
त्वदीयभक्तियोगेन योगीशाः शान्तिमागताः॥ ७ ॥
किं स्तुवो योगरूपं तं प्रणमावश्च विघ्नपम्।
तेन तुष्टो भव स्वामिन्नित्युक्त्वा तं प्रणेमतुः।
तावुत्थाय गणाधीश उवाच तौ महेश्वरौ॥ ८ ॥

श्रीगणेश उवाच

भवत्कृतमिदं स्तोत्रं मम भक्तिविवर्धनम्॥ ९ ॥
भविष्यति च सौख्यस्य पठते शृण्वते प्रदम्।
भुक्तिमुक्तिप्रदं चैव पुत्रपौत्रादिकं तथा।
धनधान्यादिकं सर्वं लभते तेन निश्चितम्॥ १०॥

॥ इति श्रीशक्तिशिवकृतं श्रीगणाधीशस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

सबके माता और पिता आप हेरम्बको बारम्बार नमस्कार है। हे विघ्नेश्वर! आप अनादि और विघ्नोंके भी जनक हैं; आपको बार-बार नमस्कार है॥ ६॥

हे लम्बोदर! आप अपने भक्तोंका विघ्न हरण करनेवाले हैं; आपको नमस्कार है। योगीश्वरगण आपके भक्तियोगसे शान्तिको प्राप्त हुए हैं॥ ७॥

योगस्वरूप आपकी हम दोनों क्या स्तुति करें। आप विघ्नराजको हम दोनों प्रणाम करते हैं। हे स्वामिन्! इस प्रणाममात्रसे आप सन्तुष्ट हों। ऐसा कहकर शिवा-शिवने गणेशजीको प्रणाम किया। तब उन दोनोंको उठाकर गणाधीशने कहा॥ ८॥

श्रीगणेश बोले—आप दोनोंद्वारा किया गया यह स्तवन मेरी भक्तिको बढ़ानेवाला है। जो इसका पठन और श्रवण करेगा, उसके लिये यह सौख्यप्रद होगा। इसके अतिरिक्त यह भोग और मोक्ष तथा पुत्र और पौत्र आदिको भी देनेवाला होगा। मनुष्य इस स्तोत्रके द्वारा धन-धान्य आदि सभी वस्तुएँ निश्चितरूपसे प्राप्त कर लेता है॥ ९-१०॥

॥ इस प्रकार श्रीशक्तिशिवकृत श्रीगणाधीशस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणनायकाष्टकम्

एकदन्तं महाकायं तप्तकाञ्चनसन्निभम्।
लम्बोदरं विशालाक्षं वन्देऽहं गणनायकम्॥ १॥
मौञ्जीकृष्णाजिनधरं नागयज्ञोपवीतिनम्।
बालेन्दुशकलं मौलौ वन्देऽहं गणनायकम्॥ २॥
चित्ररत्नविचित्राङ्गं चित्रमालाविभूषितम्।
कायरूपधरं देवं वन्देऽहं गणनायकम्॥ ३॥
गजवक्त्रं सुरश्रेष्ठं कर्णचामरभूषितम्।
पाशाङ्कुशधरं देवं वन्देऽहं गणनायकम्॥ ४॥

एक दाँतवाले, महान् शरीरवाले, तपाये गये सुवर्णके समान कान्तिवाले, लम्बे पेटवाले और बड़ी-बड़ी आँखोंवाले गणनायक गणेशकी मैं वन्दना करता हूँ॥ १॥

मुंजकी मेखला एवं कृष्णमृगचर्मको धारण करनेवाले तथा नागका यज्ञोपवीत पहननेवाले और सिरपर बालचन्द्रकलाको धारण करनेवाले गणनायक गणेशकी मैं वन्दना करता हूँ॥ २॥

विचित्ररत्नोंसे चित्रित अंगोंवाले, विचित्र मालाओंसे विभूषित तथा शरीररूप धारण करनेवाले उन भगवान् गणनायक गणेशकी मैं वन्दना करता हूँ॥ ३॥

हाथीके मुखवाले, देवताओंमें श्रेष्ठ, कर्णरूपी चामरोंसे विभूषित तथा पाश एवं अंकुशको धारण करनेवाले भगवान् गणनायक गणेशकी मैं वन्दना करता हूँ॥ ४॥

मूषकोत्तममारुह्य देवासुरमहाहवे।
योद्धुकामं महावीर्यं वन्देऽहं गणनायकम्॥ ५॥
यक्षकिन्नरगन्धर्वसिद्धविद्याधरैस्सदा।
स्तूयमानं महाबाहुं वन्देऽहं गणनायकम्॥ ६॥
अम्बिकाहृदयानन्दं मातृभिः परिवेष्टितम्।
भक्तप्रियं मदोन्मत्तं वन्देऽहं गणनायकम्॥ ७॥
सर्वविघ्नहरं देवं सर्वविघ्नविवर्जितम्।
सर्वसिद्धिप्रदातारं वन्देऽहं गणनायकम्॥ ८॥
गणाष्टकमिदं पुण्यं यः पठेत्सततं नरः।
सिद्ध्यन्ति सर्वकार्याणि विद्यावान् धनवान् भवेत्॥ ९॥

॥ इति श्रीगणनायकाष्टकं सम्पूर्णम्॥

श्रेष्ठ मूषकपर सवार होकर देवासुरमहासंग्राममें युद्धकी इच्छा करनेवाले महान् बलशाली गणनायक गणेशकी मैं वन्दना करता हूँ॥ ५॥

यक्ष, किन्नर, गन्धर्व, सिद्ध तथा विद्याधरोंद्वारा सदा स्तुति किये जाते हुए महाबाहु गणनायक गणेशकी मैं वन्दना करता हूँ॥ ६॥

भगवती पार्वतीके हृदयको आनन्द देनेवाले, मातृकाओंसे आवृत, भक्तोंके प्रिय, मदसे उन्मत्तकी तरह बने हुए गणनायक गणेशकी मैं वन्दना करता हूँ॥ ७॥

सभी प्रकारके विघ्नोंका हरण करनेवाले, सभी प्रकारके विघ्नोंसे रहित तथा सभी प्रकारकी सिद्धियोंको देनेवाले भगवान् गणनायक गणेशकी मैं वन्दना करता हूँ॥ ८॥

जो मनुष्य इस पुण्यदायक गणाष्टकको सर्वदा पढ़ता है, उसके सभी कार्य सिद्ध होते हैं तथा वह विद्यावान् एवं धनवान् हो जाता है॥ ८॥

॥ इस प्रकार श्रीगणनायकाष्टक सम्पूर्ण हुआ॥

चिन्तामणिषट्पदी

द्विरदवदन विषमरद वरद जयेशान शान्तवरसदन।
सदनवसादन सादनमन्तरायस्य रायस्य॥ १॥

इन्दुकलकलितालिक सालिकशुम्भत्कपोलपालियुग।
विकटस्फुटकटधाराधारोऽस्य प्रपञ्चस्य॥ २॥

परपरशुपाणिपाणे पणितपणायेः पणायितोऽसि यतः।
आरुह्य वज्रदन्तं विदधासि विपदन्तम्॥ ३॥

लम्बोदर दूर्वासन शयधृतसामोदमोदकाशनक।
शनकैरवलोकय मां यमान्तरायापहारिदृशा॥ ४॥

आनन्दतुन्दिलाखिलवृन्दारकवृन्दवन्दिताङ्घ्रियुग।
सुराप्रदण्डरसालो नागराजभालोऽतिभासि विभो॥ ५॥

हाथीके मुखवाले, एकदन्त, वरदायी, ईशान, परमशान्ति एवं समृद्धिके आश्रय, सज्जनोंके क्लेशहर्ता और विघ्नविनाशक हे गणपति! आपकी जय हो॥ १॥

चन्द्रकलासे सुशोभित भालवाले एवं दोनों गण्डस्थलसे देदीप्यमान आप इस विकट उलझनोंसे भरे संसार-प्रपंचके आधार हैं॥ २॥

हे अंकुश और परशुको हाथमें धारण करनेवाले! सम्पत्तिप्रदाता तथा सर्ववन्द्य आप मूषकपर आरूढ़ होकर भक्तोंकी विपत्तियोंका नाश करते हैं॥ ३॥

हे लम्बोदर! हे दूर्वाके आसनपर विराजमान! हे प्रसन्नतापूर्वक लड्डुओंका भोग लगानेवाले आप कृपापूर्वक अपनी संकटनाशिनी दृष्टि मुझपर डालिये॥ ४॥

आनन्दसे भरे हुए देवगणोंसे पूजित चरणयुगलवाले हे विभो! जलक्रीड़ासे स्निग्ध शुण्ड और गजमस्तकसे आप सुशोभित हैं॥ ५॥

अगणेयगुणेशात्मज चिन्तकचिन्तामणे गणेशान।
स्वचरणशरणं करुणावरुणालय पाहि मां दीनम्॥ ६॥
रुचिरवचोमृतरावोन्नीता नीता दिवस्तुतिः स्फीता।
इति षट्पदी मदीया गणपतिपादाम्बुजे विशतु॥ ७॥

॥ इति चिन्तामणिषट्पदी सम्पूर्णा॥

हे गणेश! हे अगणित गुणोंके भण्डार! हे शिवपुत्र! हे भक्तोंके चिन्तामणि! हे करुणासागर! अपने चरणोंकी शरणमें आये मुझ दीनकी आप रक्षा करें॥ ६॥

सुन्दर पदोंसे निर्मित, मधुर ध्वनिसे सम्पन्न तथा आपके गुणगानसे पवित्र मेरी यह षट्पदी भगवान् गणपतिके चरणारविन्दमें सुशोभित हो॥ ७॥

॥ इस प्रकार चिन्तामणिषट्पदी सम्पूर्ण हुई॥

वैदिक गणेश-स्तवन

गणानां त्वा गणपतिं हवामहे कविं कवीनामुपमश्रवस्तमम्।
ज्येष्ठराजं ब्रह्मणां ब्रह्मणस्पत आ नः शृण्वन्नूतिभिः सीद सादनम्॥

[ऋक्० २।२३।१]

नि षु सीद गणपते गणेषु त्वामाहुर्विप्रतमं कवीनाम्।
न ऋते त्वत्क्रियते किं चनारे महामर्कं मघवञ्चित्रमर्च॥

[ऋक्० १०।११२।९]

हे अपने गणोंमें गणपति (देव), क्रान्तदर्शियोंमें (कवियोंमें) श्रेष्ठ कवि, शिवा-शिवके प्रिय ज्येष्ठ पुत्र, अतिशय भोग और सुख आदिके दाता, हम आपका आवाहन करते हैं। हमारी स्तुतियोंको सुनते हुए पालनकर्ताके रूपमें आप इस सदनमें आसीन हों।

हे गणपते! आप स्तुति करनेवाले हमलोगोंके मध्यमें भली प्रकार स्थित होइये। आपको क्रान्तदर्शी कवियोंमें अतिशय बुद्धिमान्—सर्वज्ञ कहा जाता है। आपके बिना कोई भी शुभाशुभ कार्य आरम्भ नहीं किया जाता। (इसलिये) हे भगवन् (मघवन्)! ऋद्धि-सिद्धिके अधिष्ठाता देव! हमारी इस पूजनीय प्रार्थनाको स्वीकार कीजिये।

गणेशगीतम्

जय भूधर-कुलनायक-तनया-प्रिय-सूनो।
गण-नायक, सुख-दायक, धृत-मोदक देव॥ १॥
अघ-शोषण, शशि-भूषण, नत-पोषण, दीने।
करुणा-मयमयि पातय मयि वीक्षणमीश॥ २॥
प्रणवात्मक, तिमिरापह, गज-वक्त्र, गणेश।
कुरु मङ्गलमव मामति-बहु-विह्वलमीश॥ ३॥
त्रिपुरान्तक-बहुनन्दित-निजविक्रम, धीर।
निखिलार्चित, निरुपद्रव-फलदान-धुरीण॥ ४॥
दलितार्गल-सुगमां मम पदवीं कुरु सिद्धेः।
शमयाखिल-दुरितानि च कृपया गणनाथ॥ ५॥

॥ इति श्रीमहालिङ्गकविकृतं गणेशगीतं सम्पूर्णम्॥

पर्वतराजपुत्री पार्वतीके प्रिय पुत्र, गणनायक, सुखदायक, मोदक हाथमें लिये भगवान् गणपतिकी जय हो॥ १॥

पापनाशक, शशिभूषण, भक्तोंके पोषक, हे प्रभु! मुझ दीनपर अपनी कृपादृष्टि करें॥ २॥

ॐकारस्वरूप, अज्ञानान्धकारके नाशक, गजानन, हे भगवान्! गणपति मुझ दीनकी रक्षा और कल्याण करें॥ ३॥

त्रिपुरासुरका नाश करनेवाले, अपने पराक्रमसे सभीको प्रसन्न करनेवाले, सबसे पूजित, मंगलमय वरदान देनेमें अग्रणी हे गणनाथ! आप मेरी कार्यसिद्धिके विघ्नोंका नाश करके, मेरे पापोंका संहार करके कृपापूर्वक मुझे सिद्धि प्रदान करें॥ ४-५॥

॥ श्रीमहालिंगकविरचित गणेशगीत सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीउच्छिष्टगणेशस्तवराजः

नमामि देवं सकलार्थदं तं सुवर्णवर्णं भुजगोपवीतम्।
गजाननं भास्करमेकदन्तं लम्बोदरं वारिभवासनं च॥ १॥
केयूरिणं हारकिरीटजुष्टं चतुर्भुजं पाशवराभयानि।
सृणिं वहन्तं गणपं त्रिनेत्रं सचामरस्त्रीयुगलेन युक्तम्॥ २॥
षडक्षरात्मानमनल्पभूषं मुनीश्वरैर्भार्गवपूर्वकैश्च।
संसेवितं देवमनाथकल्पं रूपं मनोज्ञं शरणं प्रपद्ये॥ ३॥
वेदान्तवेद्यं जगतामधीशं देवादिवन्द्यं सुकृतैकगम्यम्।
स्तम्बेरमास्यं नवचन्द्रचूडं विनायकं तं शरणं प्रपद्ये॥ ४॥

मैं उन भगवान् गजाननकी वन्दना करता हूँ, जो समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाले हैं, सुवर्ण तथा सूर्यके समान देदीप्यमान कान्तिसे चमक रहे हैं, सर्पका यज्ञोपवीत धारण करते हैं, एकदन्त हैं, लम्बोदर हैं तथा कमलके आसनपर विराजमान हैं॥ १॥

मैं उन भगवान् गणपतिकी वन्दना करता हूँ, जो केयूर-हार-किरीट आदि आभूषणोंसे सुसज्जित हैं, चतुर्भुज हैं और अपने चार हाथोंमें पाश, अंकुश-वर और अभय मुद्राको धारण करते हैं, जो तीन नेत्रोंवाले हैं, जिन्हें दो स्त्रियाँ चँवर डुलाती रहती हैं॥ २॥

मैं उन सुन्दरस्वरूपवाले, दीनप्रतिपालक भगवान् गणपतिकी शरण ग्रहण करता हूँ, जो षडक्षर मन्त्र (**गं गणपतये**)-स्वरूप हैं, अनेक आभूषणोंसे सुसज्जित हैं तथा भार्गव आदि श्रेष्ठ मुनिश्वर जिनकी सेवामें संलग्न रहते हैं॥ ३॥

मैं उन भगवान् विनायककी शरण ग्रहण करता हूँ, जो वेदान्तमें वर्णित परब्रह्म हैं, त्रिभुवनके अधिपति हैं, देवता-सिद्धादिसे पूजित हैं, एकमात्र पुण्यसे ही प्राप्त होते हैं और जिन गजाननके भालपर द्वितीयाकी चन्द्ररेखा सुशोभित रहती है॥ ४॥

भवाख्यदावानलदह्यमानं भक्तं स्वकीयं परिषिञ्चते यः।
गण्डस्रुताम्भोभिरनन्यतुल्यं वन्दे गणेशं च तमोऽरिनेत्रम्॥ ५॥
शिवस्य मौलाववलोक्य चन्द्रं सुशुण्डया मुग्धतया स्वकीयम्।
भग्नं विषाणं परिभाव्य चित्ते आकृष्टचन्द्रो गणपोऽवतान्नः॥ ६॥
पितुर्जटाजूटतटे विलोक्य भागीरथीं तत्र कुतूहलेन।
विहर्तुकामः स महीध्रपुत्र्या निवारितः पातु सदा गजास्यः॥ ७॥
लम्बोदरो देवकुमारसङ्घैः क्रीडन् कुमारं जितवान्निजेन।
करेण चोत्तोल्य ननर्त रम्यं दन्तावलास्यो भयतः स पायात्॥ ८॥

मैं उन भगवान् गणेशकी वन्दना करता हूँ, जो संसारकी दुःख-ज्वालामें जलते हुए अपने भक्तको स्वकीय मस्तकसे बहते हुए जलकी शीतलधारासे शान्ति प्रदान करते हैं, जिनकी महिमा अतुलनीय है और जिनके नेत्र अज्ञानरूपी अन्धकारके लिये शत्रुस्वरूप (प्रकाशस्वरूप) हैं॥ ५॥

चन्द्रमाकी ओर आकृष्ट हुए वे भगवान् गणपति हमारी रक्षा करें, जो अपने टूटे हुए एक दाँतको मनमें याद करते हुए (लीलापूर्वक) भगवान् शिवके मस्तकपर स्थित चन्द्रकलाको देखकर अपनी मोहक सूँडसे उसे खींचना चाहते हैं॥ ६॥

पिता भगवान् शंकरकी जटाओंमें स्थित गंगाको देखकर कुतूहलपूर्वक उसमें विहार करनेकी इच्छावाले वे गजानन हमारी सदा रक्षा करें, जिन्हें हिमालयपुत्री माता पार्वतीने ऐसा करनेसे रोक दिया था॥ ७॥

वे लम्बोदर हमारी समस्त भयसे रक्षा करें, जो देवबालकोंके साथ खेलते हुए कुमार षडाननको खेलमें हराकर अपनी सूँड उठाकर दाँत दिखाते हुए सुन्दर नृत्य करने लगते हैं॥ ८॥

आगत्य योच्चैर्हरिनाभिपद्मं ददर्श तत्राशु करेण तच्च।
उद्धर्तुमिच्छन्विधिचाटुवाक्यं श्रुत्वा मुमोचावतु नो गणेशः॥ ९ ॥
निरन्तरं संस्कृतदानपट्टे लग्नां तु गुंजद् भ्रमरावलिं वै।
तां श्रोत्रतालैरपसारयन्तं स्मरेद् गजास्यं निजहृत्सरोजे॥ १०॥
विश्वेशमौलिस्थितजह्नुकन्याजलं गृहीत्वा निजपुष्करेण।
हरं सलीलं पितरं स्वकीयं प्रपूजयन्हस्तिमुखः स पायात्॥ ११॥
स्तम्बेरमास्यं घुसृणाङ्गरागं सिन्दूरपूरारुणकान्तकुम्भम्।
कुचन्दनाश्लिष्टकरं गणेशं ध्यायेत्स्वचित्ते सकलेष्टदं तम्॥ १२॥

वे गणेश हमारी रक्षा करें, जो भगवान् विष्णुके नाभिमें कमलको देखकर शीघ्रतापूर्वक वहाँ आकर अपनी सूँडसे उसे उखाड़नेकी इच्छा करते हैं किंतु ब्रह्माकी प्रशंसापूर्ण बात सुनकर उस लीलासे विरत हो जाते हैं अर्थात् उस नाभिकमलको छोड़ देते हैं॥ ९॥

मैं अपने हृदयकमलमें उन गजाननका स्मरण करता हूँ, जो अपने श्रेष्ठ गण्डस्थलसे चूते हुए मदजलपर गूँजती हुई भँवरोंकी पंक्तिको अपने कानकी फटकारसे उड़ाते रहते हैं॥ १०॥

भगवान् शंकरकी जटाओंमें स्थित जह्नुपुत्री गंगाके जलको अपनी सूँडमें लेकर अपने पिता शिवशंकरपर लीलापूर्वक डालकर उनकी पूजा करनेवाले वे गजानन हमारी रक्षा करें॥ ११॥

जिनका मुख हाथीके समान है, जिनके शरीरपर केशरका अंगराग सुशोभित है, मस्तकपर अरुण वर्णवाले सिन्दूरका लेप शोभायमान है और जिनकी सूँड कुचन्दन (रक्तचन्दन)-से लिप्त है, समस्त मनो-कामनाको देनेवाले उन भगवान् गणेशका अपने हृदयमें ध्यान करना चाहिये॥ १२॥

स भीष्ममातुर्निजपुष्करेण जलं समादाय कुचौ स्वमातुः।
प्रक्षालयामास षडास्यपीतौ स्वार्थं मुदेऽसौ कलभाननोऽस्तु॥ १३॥
तं वामनाङ्गं शिशुभावमाप्तं केनापि सत्कारणतो धरित्र्याम्।
वक्तारमाद्यं निगमादिकानां लोकैकवन्द्यं प्रणमामि विघ्नम्॥ १४॥
आलिङ्गितं चारुरुचा मृगाक्ष्या सम्भोगलोलं मदविह्वलाङ्गम्।
विघ्नौघविध्वंसनसक्तमेकं नमामि कान्तं द्विरदाननं तम्॥ १५॥
हेरम्ब उद्यद्रविकोटिकान्तः पञ्चाननेनापि विचुम्बितास्यः।
मुनीन्सुरान्भक्तजनांश्च सर्वान् स पातु रथ्यासु सदा गजास्यः॥ १६॥
द्वैपायनोक्तं सुविचार्य येन स्वदन्तकोट्या निखिलं लिखित्वा।
दत्तं पुराणं सुतमिन्दुमौलेस्तमग्र्यरूपं मनसा स्मरामि॥ १७॥

षडानन कार्तिकेयद्वारा पिये गये अपनी माताके स्तनयुगलको स्वयं पीनेसे पूर्व जो अपनी सूँडमें भीष्मजननी गंगाका जल लेकर (जूठा समझकर) उसे धो लेते हैं, वे गजानन हमें प्रसन्नता प्रदान करें॥ १३॥

जो छोटे शरीरवाले हैं, किसी पुण्यके प्रभावसे इस धरित्रीपर शिशुके रूपमें प्रकट हुए हैं, वेदादि शास्त्रोंके आदिप्रवक्ता हैं तथा समस्त लोकोंके एकमात्र वन्दनीय हैं, उन विघ्नेश्वरको नमस्कार है॥ १४॥

उन अद्वितीय कान्तस्वरूप भगवान् गजाननकी मैं वन्दना करता हूँ, जिनके सौन्दर्यसे मुग्ध मृगाक्षी देवसुन्दरियाँ उनके मदपूरित श्रीअंगोंका आलिंगन करती हैं और जो विघ्न-समूहोंको नष्ट करनेमें दत्तचित्त हैं॥ १५॥

वे भगवान् गजानन मुनियों, देवों और भक्तोंकी मार्ग आदिमें सर्वत्र सदा रक्षा करें, जिनका गजमुख कोटि-सूर्यप्रभासे आलोकित है और भगवान् पंचानन शिव जिनके मुखका स्नेहपूर्वक चुम्बन करते हैं॥ १६॥

जिन्होंने महर्षि व्यासद्वारा कहे गये पुराणको भलीभाँति विचार करके अपने दाँतकी नोकसे पूर्णरूपसे लिखकर प्रदान किया, उन शशिशेखर भगवान् शिवके पुत्र, आदिरूप गणेशका मैं चित्तमें स्मरण करता हूँ॥ १७॥

क्रीडाप्रवृत्ते जलधाविभास्ये वेलाजलेऽथाम्बुपतिः प्रभीतः।
विचिन्त्य कस्येति सुरास्तदा तं विश्वेश्वरं वाग्भिरभिष्टुवन्ति॥ १८॥
वाचां निमित्तं ह्यनिमित्तमाद्यं पदं त्रिलोक्यां निखिलस्तुतीनाम्।
सर्वैश्च वन्द्यो न च तस्य वन्द्यः स्थाणोः परं रूपमसौ स पायात्॥ १९॥
इमां स्तुतिं यः पठतीह भक्त्या समाहितप्रीतिरतीव शुद्धः।
संसेव्यते चेन्दिरया नितान्तं दारिद्र्यसङ्घं स विदारयेन्नः॥ २०॥

॥ इति श्रीरुद्रयामलतन्त्रे हरगौरीसंवादे श्रीउच्छिष्टगणेशस्तवराजः सम्पूर्णः॥

समुद्रतटपर खेलते हुए जिन गजमुखकी परछाईंको जलमें देखकर समुद्र भयभीत हो गया और चिन्तित होकर पूछने लगा कि यह किसकी परछाईं है, तब देवता स्तोत्रोंद्वारा उन विश्वेश्वर गणेशकी स्तुति करने लगे॥ १८॥

जो समस्त ज्ञानके मूल कारण हैं, जिनका कोई कारण नहीं है, त्रिलोकीकी समस्त स्तुतियोंमें जिनकी प्रथम वन्दना होती है, जो सभीके वन्द्य हैं, जिनका कोई वन्द्य नहीं है और जो स्थाणुरूप भगवान् शंकरके ही अपर रूप हैं, वे भगवान् गणेश हमारी रक्षा करें॥ १९॥

जो शुद्ध चित्तसे भक्तिपूर्वक समाहित होकर अत्यन्त प्रेमसे इस स्तोत्रका पाठ करता है, उसके यहाँ लक्ष्मी सदा निवास करती हैं। वे गणेश हमारे द्रारिद्र्य-समूहका विनाश करें॥ २०॥

॥ इस प्रकार श्रीरुद्रयामलतन्त्रके अन्तर्गत हर-गौरीसंवादमें श्रीउच्छिष्टगणेशस्तवराज सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीहरिद्रागणेशकवचम्

ईश्वर उवाच

शृणु वक्ष्यामि कवचं सर्वसिद्धिकरं प्रिये।
पठित्वा पाठयित्वा च मुच्यते सर्वसङ्कटात्॥ १॥
अज्ञात्वा कवचं देवि गणेशस्य मनुं जपेत्।
सिद्धिर्न जायते तस्य कल्पकोटिशतैरपि॥ २॥
ॐ आमोदश्च शिरः पातु प्रमोदश्च शिखोपरि।
संमोदो भ्रूयुगे पातु भ्रूमध्ये च गणाधिपः॥ ३॥
गणक्रीडो नेत्रयुगं नासायां गणनायकः।
गणक्रीडान्वितः पातु वदने सर्वसिद्धये॥ ४॥
जिह्वायां सुमुखः पातु ग्रीवायां दुर्मुखः सदा।
विघ्नेशो हृदये पातु विघ्ननाथश्च वक्षसि॥ ५॥

ईश्वरने [पार्वतीसे] कहा—हे प्रिये! मैं सभी सिद्धियोंको देनेवाले कवचका वर्णन करता हूँ, तुम सुनो। इसके पाठ करने-करानेवालेके सभी संकट दूर हो जाते हैं॥ १॥

जो इस कवचका ज्ञान प्राप्त किये बिना ही गणेश-मन्त्रका जप करता है, उसे अनेक (करोड़ों) कल्पोंमें भी सिद्धि नहीं प्राप्त होती॥ २॥

ॐ आमोद मेरे सिरकी रक्षा करें, प्रमोद मूर्द्धदेशकी रक्षा करें, संमोद दोनों भौहोंकी रक्षा करें और गणाधिप भ्रूमध्यकी रक्षा करें॥ ३॥

गणक्रीड दोनों नेत्र, गणनायक नासिका, गणक्रीडान्वित मुखमण्डलकी रक्षा करें, जिससे मुझे सर्वसिद्धि प्राप्त हो सके॥ ४॥

सुमुख मेरी जीभकी, दुर्मुख ग्रीवाकी, विघ्नेश हृदयकी और विघ्ननाथ वक्षःस्थलकी सदा रक्षा करें॥ ५॥

गणानां नायकः पातु बाहुयुग्मं सदा मम।
विघ्नकर्ता च ह्युदरे विघ्नहर्ता च लिङ्गके॥ ६॥
गजवक्त्रः कटीदेशे एकदन्तो नितम्बके।
लम्बोदरः सदा पातु गुह्यदेशे ममारुणः॥ ७॥
व्यालयज्ञोपवीती मां पातु पादयुगे सदा।
जापकः सर्वदा पातु जानुजङ्घे गणाधिपः॥ ८॥
हरिद्रः सर्वदा पातु सर्वाङ्गे गणनायकः।
य इदं प्रपठेन्नित्यं गणेशस्य महेश्वरि॥ ९॥
कवचं सर्वसिद्धाख्यं सर्वविघ्नविनाशनम्।
सर्वसिद्धिकरं साक्षात्सर्वपापविमोचनम्॥ १०॥
सर्वसम्पत्प्रदं साक्षात्सर्वपापविमोक्षणम्।
सर्वसम्पत्प्रदं साक्षात्सर्वशत्रुक्षयङ्करम्॥ ११॥
ग्रहपीडा ज्वरा रोगा ये चान्ये गुह्यकादयः।
पठनाद्धारणादेव नाशमायान्ति तत्क्षणात्॥ १२॥

गणनायक मेरी दोनों भुजाओंकी सदा रक्षा करें, विघ्नकर्ता मेरे उदरकी और विघ्नहर्ता लिंगकी रक्षा करें॥ ६॥

गजवक्त्र कटिप्रदेशकी, एकदन्त नितम्बकी तथा लम्बोदर और अरुण मेरे गुप्तांगोंकी सदा रक्षा करें॥ ७॥

व्यालयज्ञोपवीती मेरे दोनों पैरोंकी तथा जापक और गणाधिप मेरे घुटनों और जंघोंकी रक्षा करें॥ ८॥

गणनायक हरिद्रागणपति मेरे सर्वांगकी सदा रक्षा करें। हे महेश्वरि! यह सर्वसिद्ध नामक कवच सभी विघ्नोंका नाशक और सर्वसिद्धिदायक है। जो इसका नित्य पाठ करता है, उसके सारे पाप नष्ट हो जाते हैं॥ ९-१०॥

यह कवच सभी सम्पत्तियोंको प्रदान करनेवाला, सभी पापोंसे मुक्त करनेवाला और सभी शत्रुओंका नाश करनेवाला है॥ ११॥

ग्रह-पीडा, ज्वरादि रोग और अन्य प्रेत-पिशाचादि सम्बन्धी कष्ट इसके पाठ और धारण करनेसे तत्क्षण दूर हो जाते हैं॥ १२॥

धनधान्यकरं देवि कवचं सुरपूजितम्।
समं नास्ति महेशानि त्रैलोक्ये कवचस्य च॥ १३॥
हारिद्रस्य महेशानि कवचस्य च भूतले।
किमन्यैरसदालापैर्यत्रायुर्व्ययतामियात् ॥ १४॥

॥ इति श्रीविश्वसारतन्त्रे श्रीहरिद्रागणेशकवचं सम्पूर्णम् ॥

हे देवि! यह कवच देवताओंद्वारा पूजित और धनधान्यको प्रदान करनेवाला है। हे महेश्वरि! इस हरिद्रागणपतिकवचके समान [प्रभावकारी] इस धरातलपर अथवा त्रिलोकीमें अन्य कुछ भी नहीं है। अतः अन्य असत् वार्तामें आयु नष्ट करनेसे क्या लाभ है?॥ १३-१४॥

॥ इस प्रकार श्रीविश्वसारतन्त्रमें श्रीहरिद्रागणेशकवच सम्पूर्ण हुआ॥

पञ्चश्लोकिगणेशपुराणम्

श्रीविघ्नेशपुराणसारमुदितं व्यासाय धात्रा पुरा
तत्खण्डं प्रथमं महागणपतेश्चोपासनाख्यं यथा।
संहर्तुं त्रिपुरं शिवेन गणपस्यादौ कृतं पूजनं
कर्तुं सृष्टिमिमां स्तुतः स विधिना व्यासेन बुद्ध्याप्तये॥ १॥

पूर्वकालमें ब्रह्माजीने व्यासजीको श्रीविघ्नेश (गणेश)-पुराणका सारतत्त्व बताया था। यह महागणपतिका उपासनासंज्ञक प्रथम खण्ड है। भगवान् शिवने पहले त्रिपुरका संहार करनेके लिये गणपतिका पूजन किया। फिर ब्रह्माजीने इस सृष्टिकी रचना करनेके लिये उनकी विधिवत् स्तुति की। तत्पश्चात् व्यासजीने बुद्धिकी प्राप्तिके लिये उनका स्तवन किया॥ १॥

सङ्कष्ट्याश्च विनायकस्य च मनोः स्थानस्य तीर्थस्य वै
दूर्वाणां महिमेति भक्तिचरितं तत्पार्थिवस्यार्चनम्।
तेभ्यो यैर्यदभीप्सितं गणपतिस्तत्तत्प्रतुष्टो ददौ
ताः सर्वा न समर्थ एव कथितुं ब्रह्मा कुतो मानवः॥ २॥
क्रीडाकाण्डमथो वदे कृतयुगे श्वेतच्छविः काश्यपः
सिंहाङ्कः स विनायको दशभुजो भूत्वाथ काशीं ययौ।
हत्वा तत्र नरान्तकं तदनुजं देवान्तकं दानवं
त्रेतायां शिवनन्दनो रसभुजो जातो मयूरध्वजः॥ ३॥
हत्वा तं कमलासुरं च सगणं सिन्धुं महादैत्यपं
पश्चात् सिद्धिमती सुते कमलजस्तस्मै च ज्ञानं ददौ।

संकष्टीदेवीकी, गणेशकी, उनके मन्त्रकी, स्थानकी, तीर्थकी और दूर्वाकी महिमा यह भक्तिचरित है। उनके पार्थिव-विग्रहका पूजन भी भक्तिचर्या ही है। उन भक्तिचर्या करनेवाले पुरुषोंमेंसे जिन-जिनने जिस-जिस वस्तुको पानेकी इच्छा की, सन्तुष्ट हुए गणपतिने वह-वह वस्तु उन्हें दी। उन सबका वर्णन करनेमें ब्रह्माजी भी समर्थ नहीं हैं, फिर मनुष्यकी तो बात ही क्या है!॥ २॥

अब क्रीडाकाण्डका वर्णन करता हूँ। सत्ययुगमें दस भुजाओंसे युक्त श्वेत कान्तिमान् कश्यपपुत्र सिंहध्वज महोत्कट विनायक काशीमें गये। वहाँ नरान्तक और उसके छोटे भाई देवान्तक नामक दानवको मारकर त्रेतामें वे षड्बाहु शिवनन्दन मयूरध्वजके रूपमें प्रकट हुए॥ ३॥

उन्होंने कमलासुरको तथा महादैत्यपति सिन्धुको उसके गणोंसहित मार डाला। तत्पश्चात् ब्रह्माजीने सिद्धि और बुद्धि नामक दो कन्याएँ उन्हें

द्वापरे तु गजाननो युगभुजो गौरीसुतः सिन्दुरं
सम्मर्द्य स्वकरेण तं निजमुखे चाखुध्वजो लिप्तवान्॥ ४॥
गीताया उपदेश एव हि कृतो राज्ञे वरेण्याय वै
तुष्टायाथ च धूम्रकेतुरभिधो विप्रः सधर्मर्धिकः।
अश्वाङ्को द्विभुजो सितो गणपतिर्म्लेच्छान्तकः स्वर्णदः
क्रीडाकाण्डमिदं गणस्य हरिणा प्रोक्तं विधात्रे पुरा॥ ५॥
एतच्छ्लोकसुपञ्चकं प्रतिदिनं भक्त्या पठेद्यः पुमान्
निर्वाणं परमं व्रजेत् स सकलान् भुक्त्वा सुभोगानपि।

॥ इति श्रीपञ्चश्लोकिगणेशपुराणं सम्पूर्णम्॥

दीं और ज्ञान भी प्रदान किया। द्वापरयुगमें गौरीपुत्र गजानन दो भुजाओंसे युक्त हुए। उन्होंने अपने हाथसे सिन्दूरासुरका मर्दन करके उसे अपने मुखपर पोत लिया। उनकी ध्वजामें मूषकका चिह्न था॥ ४॥

उन्होंने सन्तुष्ट राजा वरेण्यको गणेश-गीताका उपदेश किया। फिर [कलियुगमें] वे धूम्रकेतु नामसे प्रसिद्ध धर्मयुक्त धनवाले ब्राह्मण होंगे। उस समय उनके ध्वजका चिह्न अश्व होगा। उनके दो भुजाएँ होंगी। वे गौरवर्णके गणपति म्लेच्छोंका अन्त करनेवाले और सुवर्णके दाता होंगे। गणपतिके इस क्रीडाकाण्डका वर्णन पूर्वकालमें भगवान् विष्णुने ब्रह्माजीसे किया था॥ ५॥

जो मनुष्य प्रतिदिन भक्तिभावसे इन पाँच श्लोकोंका पाठ करेगा, वह समस्त उत्तम भोगोंका उपभोग करके अन्तमें परम निर्वाण (मोक्ष)-को प्राप्त होगा।

॥ इस प्रकार श्रीपंचश्लोकी गणेशपुराण सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणेशस्तुतिः

विष्णुरुवाच

ईश त्वां स्तोतुमिच्छामि ब्रह्मज्योतिः सनातनम्।
निरूपितुमशक्तोऽहमनुरूपमनीहकम् ॥ १ ॥
प्रवरं सर्वदेवानां सिद्धानां योगिनां गुरुम्।
सर्वस्वरूपं सर्वेशं ज्ञानराशिस्वरूपिणम् ॥ २ ॥
अव्यक्तमक्षरं नित्यं सत्यमात्मस्वरूपिणम्।
वायुतुल्यातिनिर्लिप्तं चाक्षतं सर्वसाक्षिणम् ॥ ३ ॥
संसारार्णवपारे च मायापोते सुदुर्लभे।
कर्णधारस्वरूपं च भक्तानुग्रहकारकम् ॥ ४ ॥
वरं वरेण्यं वरदं वरदानामपीश्वरम्।
सिद्धं सिद्धिस्वरूपं च सिद्धिदं सिद्धिसाधनम् ॥ ५ ॥
ध्यानातिरिक्तं ध्येयं च ध्यानासाध्यं च धार्मिकम्।
धर्मस्वरूपं धर्मज्ञं धर्माधर्मफलप्रदम् ॥ ६ ॥

भगवान् विष्णु बोले—हे ईश! मैं सनातन ब्रह्मज्योति-स्वरूप आपका स्तवन करना चाहता हूँ; परंतु आपके अनुरूप निरूपण करनेमें मैं सर्वथा असमर्थ हूँ; क्योंकि आप इच्छारहित, सम्पूर्ण देवोंमें श्रेष्ठ, सिद्धों और योगियोंके गुरु, सर्वस्वरूप, सर्वेश्वर, ज्ञानराशिस्वरूप, अव्यक्त, अविनाशी, नित्य, सत्य, आत्मस्वरूप, वायुके समान अत्यन्त निर्लेप, क्षतरहित, सबके साक्षी, संसार-सागरसे पार होनेके लिये परम दुर्लभ मायारूपी नौकाके कर्णधारस्वरूप, भक्तोंपर अनुग्रह करनेवाले, श्रेष्ठ, वरणीय, वरदाता, वरदानियोंके भी ईश्वर, सिद्ध, सिद्धिस्वरूप, सिद्धिदाता, सिद्धिके साधन, ध्यानातीत, ध्येय, ध्यानद्वारा असाध्य, धार्मिक, धर्मस्वरूप, धर्मके ज्ञाता, धर्म और अधर्मका फल प्रदान करनेवाले,

बीजं संसारवृक्षाणामङ्कुरं च तदाश्रयम्।
स्त्रीपुंनपुंसकानां च रूपमेतदतीन्द्रियम्॥ ७ ॥
सर्वाद्यमग्रपूज्यं च सर्वपूज्यं गुणार्णवम्।
स्वेच्छया सगुणं ब्रह्म निर्गुणं चापि स्वेच्छया॥ ८ ॥
स्वयं प्रकृतिरूपं च प्राकृतं प्रकृतेः परम्।
त्वां स्तोतुमक्षमोऽनन्तः सहस्त्रवदनेन च॥ ९ ॥
न क्षमः पञ्चवक्त्रश्च न क्षमश्चतुराननः।
सरस्वती न शक्ता च न शक्तोऽहं तव स्तुतौ।
न शक्ताश्च चतुर्वेदाः के वा ते वेदवादिनः॥ १० ॥
इदं विष्णुकृतं स्तोत्रं गणेशस्य च यः पठेत्।
सायं प्रातश्च मध्याह्ने भक्तियुक्तः समाहितः॥ ११ ॥
तद्विघ्ननिघ्नं कुरुते विघ्नेशः सततं मुने।
वर्द्धते सर्वकल्याणं कल्याणजनकः सदा॥ १२ ॥

संसार-वृक्षके बीज, अंकुर और उसके आश्रय, स्त्री-पुरुष और नपुंसकके स्वरूपमें विराजमान तथा उनकी इन्द्रियोंसे परे, सबके आदि, अग्रपूज्य, सर्वपूज्य, गुणके सागर, स्वेच्छासे निर्गुण ब्रह्म तथा स्वेच्छासे ही सगुण ब्रह्मका रूप धारण करनेवाले, स्वयं प्रकृतिरूप और प्रकृतिसे परे प्राकृतरूप हैं। शेष अपने सहस्रों मुखोंसे भी आपकी स्तुति करनेमें असमर्थ हैं। आपके स्तवनमें न पंचमुख महेश्वर समर्थ हैं, न चतुर्मुख ब्रह्मा ही, न सरस्वती और न मैं ही आपका स्तवन कर सकता हूँ। और जब चारों वेदोंकी ही शक्ति नहीं है, तो फिर उन वेदवादियोंकी क्या गणना!॥ १-१०॥

जो मनुष्य एकाग्रचित्त हो भक्तिभावसे प्रातः, मध्याह्न और सायंकाल इस विष्णुकृत गणेशस्तोत्रका सतत पाठ करता है, विघ्नेश्वर उसके समस्त विघ्नोंका विनाश कर देते हैं, सदा उसके सब कल्याणोंकी वृद्धि होती

स्थिरा भवेद् गृहे लक्ष्मीः पुत्रपौत्रविवर्धिनी।
सर्वैश्वर्यमिह प्राप्य ह्यन्ते विष्णुपदं लभेत्॥ १३॥
फलं चापि च तीर्थानां यज्ञानां यद्भवेद् ध्रुवम्।
महतां सर्वदानानां श्रीगणेशप्रसादतः॥ १४॥

॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्तपुराणे गणपतिखण्डे श्रीविष्णुकृता श्रीगणेशस्तुतिः सम्पूर्णा॥

है और वह स्वयं कल्याणजनक हो जाता है। उसके घरमें पुत्र-पौत्रको बढ़ानेवाली लक्ष्मी स्थिररूपसे वास करती हैं और वह इस लोकमें सम्पूर्ण ऐश्वर्योंका भागी होकर अन्तमें विष्णुपदको प्राप्त हो जाता है। तीर्थों, यज्ञों और सम्पूर्ण महादानोंसे जो फल मिलता है, वह उसे श्रीगणेशकी कृपासे प्राप्त हो जाता है—यह ध्रुव सत्य है॥ ११—१४॥

॥ इस प्रकार श्रीब्रह्मवैवर्तपुराणके अन्तर्गत गणपतिखण्डमें श्रीविष्णुकृत श्रीगणेशस्तुति सम्पूर्ण हुई॥

‘जोहत गजानन कौ आनन सदा रहैं!’

इंद्र रहैं ध्यावत मनावत मुनिंद्र रहैं,
गावत कबिंद्र गुन दिन-छनदा रहैं।
कहै ‘रतनाकर’ त्यौं सिद्धि चौंर ढारति औ,
आरति उतारति समृद्धि-प्रमदा रहैं॥
दै दै मुख मोदक बिनोद सौं लड़ावत ही,
मोद-मढ़ी कमला उमा औ वरदा रहैं।
चारु चतुरानन, पँचानन, षडानन हूँ,
जोहत गजानन कौ आनन सदा रहैं॥

—कविवर रत्नाकर

श्रीचन्द्रकृता गजाननस्तुतिः

नमामि देवं द्विरदाननं तं यः सर्वविघ्नं हरते जनानाम्।
धर्मार्थकामांस्तनुतेऽखिलानां तस्मै नमो विघ्नविनाशनाय॥ १॥
कृपानिधे ब्रह्ममयाय देव विश्वात्मने विश्वविधानदक्ष।
विश्वस्य बीजाय जगन्मयाय त्रैलोक्यसंहारकृते नमस्ते॥ २॥
त्रयीमयायाखिलबुद्धिदात्रे बुद्धिप्रदीपाय सुराधिपाय।
नित्याय सत्याय च नित्यबुद्धे नित्यं निरीहाय नमोऽस्तु नित्यम्॥ ३॥

॥ इति श्रीगणेशपुराणे श्रीचन्द्रकृता गजाननस्तुतिः सम्पूर्णा॥

मैं उन गजाननदेवको नमस्कार करता हूँ, जो लोगोंके समस्त विघ्नोंका अपहरण करते हैं। जो सबके लिये धर्म, अर्थ और कामका विस्तार करते हैं, उन विघ्नविनाशन गणेशको नमस्कार है॥ १॥

हे कृपानिधे! हे देव! हे विश्वकी रचना करनेमें कुशल! आप विश्वरूप, ब्रह्ममय तथा विश्वके बीज हैं; जगत् आपका स्वरूप है। आप ही तीनों लोकोंका संहार करनेवाले हैं; आपको नमस्कार है॥ २॥

तीनों वेद आपके ही स्वरूप—आपके ही तत्त्वके प्रतिपादक हैं, आप सम्पूर्ण बुद्धियोंके दाता, बुद्धिके प्रकाशक और देवताओंके अधिपति हैं। हे नित्यबोधस्वरूप! आप नित्य, सत्य और निरीह हैं; आपको सदा-सर्वदा नमस्कार है॥ ३॥

॥ इस प्रकार श्रीगणेशपुराणमें श्रीचन्द्रकृत गजाननस्तुति सम्पूर्ण हुई॥

श्रीगणपतिवन्दना

एकदन्तं महाकायं तप्तकाञ्चनसन्निभम्।
लम्बोदरं विशालाक्षं वन्देऽहं गणनायकम्॥ १॥
मुञ्जकृष्णाजिनधरं नागयज्ञोपवीतिनम्।
बालेन्दुकलिकामौलिं वन्देऽहं गणनायकम्॥ २॥
चित्ररत्नविचित्राङ्गं चित्रमालाविभूषणम्।
कामरूपधरं देवं वन्देऽहं गणनायकम्॥ ३॥
गजवक्त्रं सुरश्रेष्ठं चारुकर्णविभूषितम्।
पाशाङ्कुशधरं देवं वन्देऽहं गणनायकम्॥ ४॥

॥ इति श्रीपद्मपुराणे सृष्टिखण्डे महर्षिव्यासकृता श्रीगणपतिवन्दना सम्पूर्णा॥

मैं विशालकाय, तपाये हुए स्वर्ण-सदृश प्रकाशवाले, लम्बोदर, बड़ी-बड़ी आँखोंवाले श्रीएकदन्त गणनायककी वन्दना करता हूँ॥ १॥

जिन्होंने मौंजीमेखला, कृष्ण-मृगचर्म तथा नाग-यज्ञोपवीत धारण कर रखे हैं, जिनके मौलिदेशमें बालचन्द्र सुशोभित हो रहा है, मैं उन गणनायककी वन्दना करता हूँ॥ २॥

जिन्होंने अपने शरीरको विविध रत्नोंसे अलंकृत किया है, अद्भुत माला धारण की है, जो स्वेच्छासे अनेक रूपोंमें अभिव्यक्त होते हैं, उन गणनायककी मैं वन्दना करता हूँ॥ ३॥

जिनका मुख हाथीके मुखके समान है, जो सर्वदेवोंमें श्रेष्ठ हैं, सुन्दर कानोंसे विभूषित हैं, उन पाश और अंकुश धारण करनेवाले श्रीगणपतिदेवकी मैं वन्दना करता हूँ॥ ४॥

॥ इस प्रकार श्रीपद्मपुराणके अन्तर्गत सृष्टिखण्डमें महर्षि व्यासकृत श्रीगणपतिवन्दना सम्पूर्ण हुई॥

विघ्ननाशकगणेशस्तोत्रम्

श्रीराधिका उवाच

परं धाम परं ब्रह्म परेशं परमीश्वरम्।
विघ्ननिघ्नकरं शान्तं पुष्टं कान्तमनन्तकम्॥ १॥
सुरासुरेन्द्रैः सिद्धेन्द्रैः स्तुतं स्तौमि परात्परम्।
सुरपद्मदिनेशं च गणेशं मङ्गलायनम्॥ २॥
इदं स्तोत्रं महापुण्यं विघ्नशोकहरं परम्।
यः पठेत् प्रातरुत्थाय सर्वविघ्नात् प्रमुच्यते॥ ३॥

॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्तपुराणे श्रीकृष्णजन्मखण्डे विघ्ननाशक-गणेशस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

श्रीराधिकाने कहा—जो परम धाम, परब्रह्म, परेश, परम ईश्वर, विघ्नोंके विनाशक, शान्त, पुष्ट, मनोहर और अनन्त हैं; प्रधान-प्रधान सुर, असुर और सिद्ध जिनका स्तवन करते हैं; जो देवरूपी कमलके लिये सूर्य और मंगलोंके आश्रय-स्थान हैं, उन परात्पर गणेशकी मैं स्तुति करती हूँ॥ १-२॥

यह उत्तम स्तोत्र महान् पुण्यमय तथा विघ्न और शोकको हरनेवाला है। जो प्रात:काल उठकर इस स्तोत्रका पाठ करता है, वह सम्पूर्ण विघ्नोंसे विमुक्त हो जाता है॥ ३॥

॥ इस प्रकार श्रीब्रह्मवैवर्तपुराणके अन्तर्गत श्रीकृष्णजन्मखण्डमें विघ्ननाशकगणेशस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

गणपतिस्तोत्रम्

द्विरदानन विघ्नकाननज्वलन त्वं प्रमथेशनन्दन।
मदनप्रतिमाखुवाहन ज्वलनाभासितपिङ्गलोचन॥ १॥
अहिबन्धन रक्तचन्दनप्रिय दूर्वांकुरभारपूजन।
शशिभूषण भक्तपालन ज्वलनाक्षावनिजान्निजावन॥ २॥
विविधामरमर्त्यनायकः प्रथितस्त्वं भुवने विनायकः।
तव कोऽपि हि नैव नायकस्तत एव त्वमजो विनायकः॥ ३॥
बलिनिग्रह ईश केशवस्त्रिपुराख्यासुरनिग्रहे शिवः।
जगदुद्भवनेऽब्जसम्भवः सकलाञ्जेतुमहो मनोभवः॥ ४॥

हाथीके समान मुखवाले! विघ्नरूपी वनके लिये अग्नितुल्य, प्रमथगणोंके स्वामी भगवान् शिवके पुत्र! कामदेवके समान स्वरूपवाले! मूषकपर सवारी करनेवाले! जलती हुई अग्निके समान पीले नेत्रवाले! आप मेरी रक्षा करें॥ १॥

सर्पका बन्धन धारण करनेवाले! रक्तचन्दनप्रिय! दूर्वांकुरसमूहसे पूजित होनेवाले! चन्द्रमाको आभूषणके रूपमें धारण करनेवाले! भक्तोंका पालन करनेवाले! अग्निसदृश नेत्रवाले हे गणेश! आप अपने भक्तोंकी रक्षा कीजिये॥ २॥

आप अनेक देवताओं तथा मनुष्योंके नायक हैं, इसलिये सम्पूर्ण विश्वमें आपके विनायक नामकी प्रसिद्धि है। आपका कोई भी नायक नहीं है, अतएव आप अजन्मा हैं और विनायक हैं॥ ३॥

हे ईश्वर! आपने [दैत्यराज] बलिका निग्रह करनेके लिये [वामनरूप] भगवान् विष्णुका रूप धारण किया, त्रिपुर नामक असुरका संहार करनेके लिये शिवका रूप धारण किया, जगत्‌की सृष्टि करनेके लिये आपने कमलोद्भव ब्रह्माका रूप धारण किया और सम्पूर्ण संसारको जीतनेके लिये अहो! आपने कामदेवका रूप धारण किया॥ ४॥

महिषासुरनिग्रहे शिवा भवमुक्त्यै मुनयो धुताशिवाः।
यमपूजयदिष्टसिद्धये वरदो मे भव चेष्टसिद्धये॥ ५॥
गजकर्णक मूषकस्थिते वरदे त्वय्यभये हृदि स्थिते।
जयलाभरमेष्टसम्पदः खलु सर्वत्र कुतो वदापदः॥ ६॥
सङ्कल्पितं कार्यमविघ्नमीश द्राक्सिद्धिमायातु ममाखिलेश।
पापत्रयं मे हर सन्मतीश तापत्रयं मे जहि शान्त्यधीश॥ ७॥
गणाधीशोऽधीशो हरिहरविधीशोऽभयकरो
गुणाधीशो धीशो विजयतु उमाहृत्सुखकरः।

महिषासुरके मर्दनकालमें आपने भगवान् शिवकी महाशक्ति बन दुर्गाका रूप धारण किया। संसारको मुक्ति देनेके लिये तथा समस्त अमंगलोंको दूर करनेके लिये आपने ही अमलाशय मुनियोंका रूप बनाया। इष्टसिद्धिके लिये जिनकी पूजा की जाती है, वे वर देनेवाले विनायकभगवान् मेरा मनोरथ पूर्ण करें॥ ५॥

हे हाथीके समान कानवाले! मूषकपर विराजमान, वरदायक तथा अभय प्रदान करनेवाले आप गणेशके भक्त-हृदयमें स्थित रहनेपर सर्वत्र जय, लाभ, लक्ष्मी तथा वांछित सम्पदाएँ अवश्य विद्यमान रहती हैं; बताइये, फिर वहाँ आपदाएँ कहाँसे रह सकती हैं?॥ ६॥

हे ईश! हे अखिलेश! मेरा संकल्पित कार्य अतिशीघ्र सिद्धिको प्राप्त हो। हे बुद्धिमानोंके स्वामी! आप मेरे [कायिक, वाचिक, मानसिक] तीनों प्रकारके पापोंका हरण करें। हे शान्तिके स्वामी! आप मेरे [दैहिक, दैविक, भौतिक] तीनों प्रकारके तापोंका हरण करें॥ ७॥

गणोंके स्वामी, सबके अधीश्वर, ब्रह्मा-विष्णु-महेशके अधिपति, अभय प्रदान करनेवाले, गुणोंके अधीश, बुद्धिके स्वामी तथा पार्वतीके हृदयमें

बुधाधीशोऽनीशो निजभजकविघ्नौघहरणो
मुदाधीशोऽपीशो यशस उभयर्धेश्च शरणम्॥ ८॥

॥ इति श्रीवासुदेवानन्दसरस्वतीविरचितं गणपतिस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

आनन्द उत्पन्न करनेवाले [गणेश]-की जय हो। बुद्धिमानोंके अधिपति, अनीश्वर, अपने भक्तोंके विघ्नसमूहोंका हरण करनेवाले, आनन्दके अधीश्वर तथा यश और ऋद्धि—दोनोंके स्वामी गणेशजीकी मैं शरण ग्रहण करता हूँ॥ ८॥

॥ इति श्रीवासुदेवानन्दसरस्वतीविरचित गणपतिस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

गणपतिस्तोत्रम्

निर्विघ्नार्थं हरीशाद्या देवा अपि भजन्ति यम्।
मर्त्यैः स वक्रतुण्डोऽर्च्य इति गाणेशसम्मतम्॥ १॥
जगत्सृष्ट्यादिहेतुः सा वरा श्रुत्युक्तदेवता।
गणानां त्वेति मन्त्रेण स्तुतो गृत्समदर्षिणा॥ २॥
इत्युक्तं तत्पुराणेऽतो गणेशो ब्रह्मणस्पतिः।
महाकविर्ज्येष्ठराजः श्रूयते मन्त्रकृच्च सः॥ ३॥

विघ्नोंके नाशके लिये जिनकी सेवा विष्णु तथा महेश्वर आदि देवता भी करते रहते हैं, उन वक्रतुण्डकी पूजा मरणधर्मी जीवोंको करनी चाहिये, ऐसा गणपति-सम्प्रदायके लोगोंका कहना है॥ १॥

जगत् की स्थिति, पालन एवं संहारहेतु श्रुतियोंके द्वारा प्रतिपादित श्रेष्ठ देवता श्रीगणेश हैं, '**गणानां त्वा**'—इस वैदिक मन्त्रके द्वारा गृत्समद ऋषिने उनकी स्तुति की है॥ २॥

गणेशपुराणमें उन गणेशजीको ब्रह्मणस्पति नामसे कहा गया है, वे महाकवि, ज्येष्ठराज तथा मन्त्रकृत् आदि नामोंसे भी सम्बोधित किये जाते

मन्त्रं वदत्युक्थमेष प्रनूनं ब्रह्मणस्पतिः।
यस्मिन्निन्द्रादयः सर्वे देवा ओकांसि चक्रिरे॥ ४॥
स प्रभुः सर्वतः पाता यो रेवान्यो अमीवहा।
अतोऽर्च्योऽसौ यश्चतुरो वसुवित्पुष्टिवर्धनः॥ ५॥
वक्रतुण्डोऽपि सुमुखः साधो गन्तापि चोर्ध्वगः।
येऽमुं नार्चन्ति ते विघ्नैः पराभूता भवन्ति हि॥ ६॥
ये दूर्वांकुरलाजाद्यैः पूजयन्ति शिवात्मजम्।
ऐहिकामुष्मिकान् भोगान् भुक्त्वा मुक्तिं व्रजन्ति ते॥ ७॥

॥ इति श्रीवासुदेवानन्दसरस्वतीविरचितं गणपतिस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

हैं। ये ब्रह्मणस्पति सामवेदके मन्त्रका यथार्थ रूपमें गान करते हैं, जिसमें इन्द्र आदि सभी देवताओंने आश्रय ग्रहण किया॥ ३-४॥

वे गणनाथ ही एकमात्र सबके प्रभु हैं, सभी जीवोंके संरक्षक हैं, सभीका सब तरहसे कल्याण करनेवाले हैं, सभीके योगक्षेमका वहन करनेवाले हैं, प्रवीण हैं, ऐश्वर्यसम्पन्न हैं, पुष्टिकी वृद्धि करनेवाले हैं, अतः वे पूजनीय हैं॥ ५॥

गणपति वक्रतुण्डवाले होनेपर भी सुन्दर मुखवाले हैं। उनका तुण्ड नीचेकी ओर गमन करता हुआ भी ऊपरकी ओर गति करता है। जो इनकी पूजा नहीं करते हैं, वे विघ्नोंके बन्धनमें पड़कर दुःख भोगते हैं॥ ६॥

जो [श्रद्धावान् पुरुष] दूर्वांकुर, लावा आदि उपचारोंसे शिवसुत गणेशकी पूजा करते हैं, वे लौकिक तथा पारलौकिक सुखोंको भोगकर मुक्ति प्राप्त करते हैं॥ ७॥

॥ इस प्रकार श्रीवासुदेवानन्दसरस्वतीविरचित गणपतिस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणेशप्रार्थना

आनन्दरूप करुणाकर विश्वबन्धो
सन्तापचन्द्र भववारिधिभद्रसेतो।
हे विघ्नमृत्युदलनामृतसौख्यसिन्धो
श्रीमन् विनायक तवाङ्घ्रियुगं नताः स्मः ॥ १ ॥

यस्मिन्न जीवजगदादिकमोहजालं
यस्मिन्न जन्ममरणादिभयं समग्रम्।
यस्मिन् सुखैकघनभूम्नि न दुःखमीषत्
तद् ब्रह्म मङ्गलपदं तव संश्रयामः ॥ २ ॥

॥ इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य श्रीश्रीधरस्वामिकृता श्रीगणेशप्रार्थना सम्पूर्णा ॥

हे आनन्दस्वरूप श्रीमन् विनायक! आप करुणाकी निधि एवं सम्पूर्ण जगत्के बन्धु (अकारण हितैषी) हैं, शोकसंतापका शमन करनेके लिये परमाह्लादक चन्द्रमा हैं, भव-सागरसे पार होनेके लिये कल्याणकारी सेतु हैं तथा विघ्नरूपी मृत्युका नाश करनेके लिये अमृतमय सौख्यके सागर हैं; हम आपके युगल-चरणोंमें प्रणाम करते हैं ॥ १ ॥

जिसमें जीव-जगत् इत्यादि मोहजालका पूर्णतः अभाव है; जहाँ जन्म-मरण आदिका सारा भय सर्वथा है ही नहीं; जिस अद्वितीय आनन्दघन भूमामें किंचिन्मात्र भी दुःख नहीं है, उस ब्रह्मस्वरूप आपके मंगलमय चरणकी हम शरण लेते हैं ॥ २ ॥

॥ इस प्रकार श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य श्रीश्रीधरस्वामिकृत श्रीगणेशप्रार्थना सम्पूर्ण हुई ॥

श्रीमहागणपतिस्तोत्रम्

योगं योगविदां विधूतविविधव्यासङ्गशुद्धाशय-
प्रादुर्भूतसुधारसप्रसृमरध्यानास्पदाध्यासिनाम् ।
आनन्दप्लवमानबोधमधुरामोदच्छटामेदुरं
तं भूमानमुपास्महे परिणतं दन्तावलास्यात्मना ॥ १ ॥
तारश्रीपरशक्तिकामवसुधारूपानुगं यं विदु-
स्तस्मै स्यात्प्रणतिर्गणाधिपतये यो रागिणाऽभ्यर्थ्यते।
आमन्त्र्य प्रथमं वरेति वरदेत्यार्तेन सर्वं जनं
स्वामिन्मे वशमानयेति सततं स्वाहादिभिः पूजितः ॥ २ ॥
कल्लोलाञ्चलचुम्बिताम्बुदतताविक्षुद्रवाम्भोनिधौ
द्वीपे रत्नमये सुरद्रुमवनामोदैकमेदस्विनि।
मूले कल्पतरोर्महामणिमये पीठेऽक्षराम्भोरुहे
षट्कोणाकलितत्रिकोणरचनासत्कीर्णकेऽमुं भजे ॥ ३ ॥

सांसारिक विषय वासनाओंसे व्युपरत अमलात्मा योगियोंके ध्यान एवं विशुद्ध अन्तःकरणमें जो रसप्रवाहका संचार करते हैं, जो चिदानन्द-स्वरूप हैं एवं मधुरामोद घटाओंसे सदा युक्त रहते हैं, दन्त पंक्तियोंसे जिनके मुखमण्डलकी अपूर्व शोभा हो रही है—इस प्रकार भूमास्वरूप परमात्मा श्रीगणेशजीकी मैं सविधि शरण ग्रहण करता हूँ॥ १ ॥ जो प्रणव, श्रीं, ह्रीं, क्लीं, ग्लौं और गं इत्यादि सभी बीजस्वरूप हैं; अनुरागशील विद्वान् जिनकी उपासनामें सदा परायण रहते हैं; जो वर हैं और वरद भी हैं, सभी विघ्नोंके स्वामी हैं, वे स्वाहा आदिद्वारा पूजित गणपति सभी लोगोंको मेरे वशमें कर दें॥ २ ॥ इक्षुरससे पूर्ण समुद्रकी जो तरंगें मेघोंका चुम्बन करती हैं, उस समुद्रमें एक सुन्दर रसमय द्वीप है, उस द्वीपमें कल्प वृक्षोंका एक मनोहर वन है, उस वनमें पृथिवीके ऊपर षट्कोणके मध्यमें त्रिकोण है, उस त्रिकोणके मध्यमें एक सुन्दर मणिमय पीठ बना हुआ है, उस पीठमें वर्णमालाओंके द्वारा निर्मित एक सुन्दर कमल बना हुआ है, उस कमलपर विराजमान जो भगवान् गणपतिजी हैं उनका मैं भजन करता हूँ॥ ३ ॥

चक्रप्रासरसालकार्मुकगदासद्बीजपूरद्विज-
व्रीह्यग्रोत्पलपाशपङ्कजकरं शुण्डाग्रजाग्रद्घटम्।
आश्लिष्टं प्रियया सरोजकरया रत्नस्फुरद्भूषया
माणिक्यप्रतिमं महागणपतिं विश्वेशमाशास्महे॥ ४॥
दानाम्भःपरिमेदुरप्रसृमरव्यालम्बिरोलम्बभृ-
त्सिन्दूरारुणगण्डमण्डलयुगव्याजात्प्रशस्तिद्वयम्।
त्रैलोक्येष्टविधानवर्णसुभगं यः पद्मरागोपमं
धत्ते सश्रियमातनोतु सततं देवो गणानां पतिः॥ ५॥
भ्राम्यन्मन्दरघूर्णनापरवशक्षीराब्धिवीचिच्छटा-
सच्छायाश्चलचामरव्यतिकरश्रीगर्वसर्वङ्कषाः।
दिक्कान्ताघनसारचन्दनरसासाराश्रयन्तां मनः
स्वच्छन्दप्रसरप्रलिप्तवियतो हेरम्बदन्तत्विषः॥ ६॥

जो हाथोंमें चक्र, अंकुश, आम्रफल, धनुष, गदा, बीजपूर, दाँत, धान्यांकुर, नीलकमल, पाश और श्वेत कमल धारण किये हुए हैं; जिन्होंने शुण्डाग्रभागमें धनपूर्ण कलश धारण कर रखा है; दिव्य आभूषणोंसे आभूषित तथा हाथमें कमलपुष्प धारण करनेवाली लक्ष्मीजी जिनमें सदा आश्लिष्ट रहती हैं, जो माणिक्यके समान सुन्दर हैं, उन महागणपति विश्वेश्वरकी मैं उपासना करता हूँ॥ ४॥ सिन्दूर-मिश्रित जिनके गण्डस्थलोंसे निकले मदजलप्रवाहमें लोभी भ्रमर संलग्न हैं और भक्तोंके कल्याणके लिये जिनके दोनों प्रशस्त गण्डभाग अरुण वर्णको धारण किये हुए हैं और जिन्होंने तीनों लोकोंके अभीष्ट विधानके लिये ही पद्मरागमणिकी तरह रक्तवर्णको धारण किया है, वे भगवान् गणेश मुझे समृद्धिसहित कल्याण प्रदान करें॥ ५॥ योगनिद्राकालमें भगवान् गणेशकी नासिकासे निर्गत घूर्णाहट शब्दने क्षीर समुद्रकी लहरोंसे निकली हुई ध्वनिको तिरस्कृत कर दिया एवं स्वच्छन्द मनकी गतिके समान आकाशपर्यन्त बुद्धिभावको प्राप्त होनेवाले हेरम्बदन्तकी कान्तिने दिगन्तस्थित कामिनियोंके सुन्दर-सुन्दर अंगोंको तथा स्वर्गको भी स्पर्श कर लिया॥ ६॥

मुक्ताजालकरम्बितप्रविकसन्माणिक्यपुञ्जच्छटा-
कान्ताः कम्बुकदम्बचुम्बितवनाभोगप्रवालोपमाः।
ज्योत्स्नापूरतरङ्गमन्थरतरत्सन्ध्यावयवश्चिरं
हेरम्बस्य जयन्ति दन्तकिरणाकीर्णाः शरीरत्विषः॥ ७॥
शुण्डाग्राकलितेन हेमकलशेनावर्जितेन क्षरन्-
नानारत्नचयेन साधकजनान्संभावयन्कोटिशः।
दानामोदविनोदलुब्धमधुपप्रोत्सारणाविर्भव-
त्कर्णान्दोलनखेलनो विजयते देवो गणग्रामणीः॥ ८॥
हेरम्बं प्रणमामि यस्य पुरतः शाण्डिल्यमूले श्रिया
बिभ्रत्याम्बुरुहे समं मधुरिपुस्ते शङ्खचक्रे वहन्।
न्यग्रोधस्य तले सहाद्रिसुतया शंभुस्तथा दक्षिणे
बिभ्राणः परशुं त्रिशूलमितया देव्या धरण्या सह॥ ९॥

वक्रतुण्डमें संशोभित मुक्ताजाल एवं मणियोंके संसर्गसे समुत्पन्न एक अपूर्व गुलाबी छटा भगवान् श्रीगणेशजीकी शरीर-कान्तिको गुलाबी बना रही है, शंख-समूह एवं जलप्रदेशीय प्रवालोंकी संयुक्त प्रभा भी भगवान् गणेशकी शारीरिक गुलाबी कान्तिका संकेत कर रही है, उदीयमान चन्द्रमा तथा अस्ताचलगामी सूर्य—इन दोनोंके सम्मिलनसे समुत्पन्न सान्ध्य ज्योति भी भगवान् गणेशकी शरीरकान्तिको गुलाबी बना रही है—इस प्रकार भगवान् गणेशकी शरीरस्थ गुलाबी आभाको दन्तोंकी शुभ्रकान्ति अधिक प्रभावितकर विश्वका मंगल करे॥ ७॥ जो भगवान् श्रीगणपतिजी शुण्डाग्रभागके द्वारा धारण किये हुए सुवर्ण कुम्भके द्वारा नाना प्रकारके रत्नोंको उड़ेल करके भक्तजनोंके मनोंका रंजन करते हैं और दानवारिकी सुगन्धसे विनोदपरायण मधुलुब्ध भ्रमरोंको जो कर्णान्दोलनक्रीड़ाके द्वारा निवारण करते हैं, उन गणसमूहके नायक विनायकदेवकी सदा विजय हो॥ ८॥ विल्ववृक्षके मूल भागमें जिन श्रीगणेशजीके सम्मुख दोनों हाथोंमें दो कमलपुष्पोंको धारण की हुई लक्ष्मीजीके साथ शंख-चक्रधारी भगवान् विष्णु विराजमान हैं और जिन विनायकदेवकी दक्षिण दिशामें गंगाजीको मस्तकपर लेकर हाथोंमें परशु तथा त्रिशूल धारणकर भगवती धरणी उमादेवीके साथ बरगदके मूलमें भगवान् शिव विराजमान हैं, उन हेरम्बभगवान्‌को मैं प्रणाम करता हूँ॥ ९॥

पश्चात्पिप्पलमाश्रितो रतिपतिर्देवस्य रत्योत्पले
बिभ्रत्या सममैक्षवं धनुरिपून्पौष्पान्वहन्पञ्च च।
वामे चक्रगदाधरः स भगवान्क्रोडः प्रियङ्गोस्तले
हस्तोद्यच्छुकशालिमञ्जरिकया देव्या धरण्या सह॥ १०॥
षट्कोणाश्रिषु षट्सु षड्गजमुखाः पाशाङ्कुशाभीवरा-
न्बिभ्राणाः प्रमदासखाः पृथुमहाशोणाश्मपुञ्जत्विषः।
आमोदः पुरतः प्रमोदसुमुखौ तं चाभितो दुर्मुखः
पश्चात्पार्श्वगतोऽस्य विघ्न इति यो यो विघ्नकर्तेति च ॥ ११॥
आमोदादिगणेश्वरप्रियतमास्तत्रैव नित्यं स्थिताः
कान्ताश्लेषरसज्ञमन्थरदृशः सिद्धिः समृद्धिस्ततः।

अश्वत्थमूलमें जिन भगवान् हेरम्बदेवके पश्चिम भागमें कामदेव दोनों हाथोंमें कमलके दो पुष्पोंको धारण करनेवाली अपनी भार्या रतिके साथ वाम हाथमें इक्षुनिर्मित धनुष एवं दक्षिण हाथमें पंचबाणोंको धारणकर विराजमान हैं, जिन भगवान् गणपतिके वामभागमें ऊपर की हुई दोनों हथेलियोंमें शुक पक्षी तथा शालि-मंजरीको धारण की हुई पृथिवीके साथ भगवान् वराह प्रियंगुलताके नीचे विराजमान हैं—उन हेरम्बभगवान्‌को मैं प्रणाम करता हूँ॥ १०॥ षट्कोण यन्त्रके छः कोणोंमें छः गजमुख-गण पाश-अंकुश-अभय-वरमुद्रा धारण किये हुए अतिस्थूलकाय स्वरूपवाले, अतिमहान् रूपवाले, रक्त पाषाणोंके प्रकाशपुंजकी तरह शोभायमान अपनी-अपनी शक्तियोंके साथमें सदा विराजमान् रहते हैं, मध्यभागमें भगवान् हेरम्ब विराजमान हैं, अग्रभागमें आमोदकी स्थिति है, पार्श्व भागोंमें प्रमोद तथा सुमुख विराजमान हैं, सबसे पीछे दुर्मुखका स्थान है। उसके अग्नि भागके दोनों पार्श्वोंमें विघ्नकर्ता और विघ्नका स्थान है॥ ११॥ भगवान् हेरम्बके सन्निकट यन्त्रके षट्कोणोंमें प्रतिष्ठित आमोद, प्रमोदादि प्रियतम गणेश्वर गण उनकी सेवामें नित्य उपस्थित रहते हैं। वे सब गण कान्ताश्लेषके विशेष रसज्ञ हैं। इस कारणसे अपनी-अपनी कान्ताओंपर उनका कटाक्षपात होता रहता है।

कान्तिर्या मदनावतीत्यपि तथा कल्पेषु या गीयते
सान्या यापि मदद्रवा तदपरा द्राविण्यमूः पूजिताः ॥ १२ ॥
आश्लिष्टौ वसुधेत्यथो वसुमती ताभ्यां सितालोहितौ
वर्षन्तौ वसुपार्श्वयोर्विलसतस्तौ शंखपद्मौ निधी।
अङ्गान्यन्वथ मातरश्च परितः शुक्रादयोऽब्जा श्रया-
स्तद्बाह्ये कुलिशादयः परिपतत्कालानलज्योतिषः ॥ १३ ॥
इत्थं विष्णुशिवादितत्त्वतनवे श्रीवक्रतुण्डाय हुं-
काराक्षिप्तसमस्तदैत्यपृतनाव्राताय दीप्तत्विषे।
आनन्दैकरसावबोधलहरीविध्वस्तसर्वोर्मये
सर्वत्र प्रथमानमुग्धमहसे तस्मै परस्मै नमः ॥ १४ ॥

कल्प ग्रन्थोंमें सिद्धि, समृद्धि, कान्ति, मदनावती इत्यादि उनकी कान्ताओंके नाम विशेष प्रसिद्ध हैं, साथ ही मदद्रवा, द्राविणी तथा प्रतिष्ठित अन्यान्य कान्ताओंका भी उल्लेख मिलता है ॥ १२ ॥ भगवान् हेरम्बके दोनों पार्श्वभागोंमें वसुधा तथा वसुमती दो शक्तियाँ सदा विराजमान रहती हैं। वसुमती शक्तिके मस्तकपर सदैव महापद्म नामक निधि विराजती है और वसुधा नामक शक्तिके गण्डस्थलपर सदैव शंख नामक निधि विराजमान रहती है। ये दोनों शक्तियाँ, धनोंकी वर्षा करती हुई जब भगवान् गणेशके चरणोंमें नमन करती हैं, उस समय श्वेतवर्ण शंख नामक निधि तथा रक्तवर्ण महापद्म नामक निधि भगवान् हेरम्बके चरणोंमें आश्लिष्ट हो जाती हैं। भगवान् हेरम्बकी गणसभामें परिधियोंके प्रथम भागमें हृष्यादि षडंगोंका स्थान सुनिश्चित है, द्वितीय भागमें सप्त मातृकाओंका, तृतीय भागमें पद्मपत्रपर अवस्थान करनेवाले इन्द्रादि लोकपालोंका तथा चतुर्थभाग अर्थात् सबसे बाह्य प्रदेशमें कुलिशादिके लिये स्थान नियत किया गया है, जहाँपर वे कालानलके समान ज्योतिके द्वारा सदा जगमगाते रहते हैं ॥ १३ ॥ गणेश्वरोंमें प्रथित विष्णु-शिवादिके तत्त्वोंको जिन हेरम्बभगवान्का ही शरीर बताया गया है, दुष्टोंके दमनके लिये जिनका तुण्ड सदा वक्र रहता है, जिनके हुंकारमात्रसे दैत्यसेनासमूहका विनाश हो जाता है, जो दीप्त तेजवाले हैं, जो एकरस आनन्द-ज्ञानलहरीके स्वरूप हैं, जो अपने चिन्तकोंके शारीरिक तथा मानसिक सन्तापोंको दूर करनेवाले हैं, जिनके सर्वत्र व्याप्त तेजके द्वारा सभी प्राणी मुग्ध हो जाते हैं—उन परब्रह्म भगवान् वक्रतुण्डको मेरा नमस्कार है ॥ १४ ॥

सेवाहेवाकिदेवासुरनरनिकरस्फारकोटीरकोटी
कोटिव्याटीकमानद्युमणिसममणिश्रेणिभावेणिकानाम्।
राजन्नीराजनश्रीमुखचरणनखद्योतविद्योतमानः
श्रेयः स्थेयः स देयान्मम विमलदृशो बन्धुरं सिन्धुरास्यः॥ १५॥

एतेन प्रकटरहस्यमन्त्रमालागर्भेण
स्फुटतरसंविदा स्तवेन।
यः स्तौति प्रचुरतरं महागणेशं
तस्येयं भवति वशंवदा त्रिलोकी॥ १६॥

॥ इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीराघवचैतन्यविरचितं महागणपतिस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

श्रीगणेशजीकी सेवामें परायण रहनेवाले जिन भक्तोंने अपना पाप प्रक्षालन कर लिया है, उनमें देवता, असुर तथा मनुष्य समुदायका संमिश्रण है, उन भक्तोंकी न संख्याका अन्त है और न उनके तेजका ही वर्णन किया जा सकता है। अतः वे करोड़ोंकी संख्यामें जब गणेशजीके चरणोंमें झुकते हैं, उस समय उनकी मुकुट-मणियोंकी प्रभा वेणीका रूप धारणकर श्रीसूर्यदेवके प्रकाशकी समानता करने लगती है और भक्तोंके द्वारा समुल्लसित निराजन प्रकाश जब भगवान् श्रीगणेशजीके स्वच्छ नख-चरणोंमें प्रतिविम्बित होता है, उस समय उनके नखचरणोंका स्वरूप प्रकाशपुंज बन जाता है। इस प्रकार प्रकाशपुंजसे विद्योतमान नख-चरणवाले मुकुटधारी भगवान् श्रीविनायकजी मेरे-जैसे विमल दृष्टिवाले भक्तपर कृपा करके स्थायी मंगल प्रदान करें॥ १५॥ इस गणपतिस्तोत्रके सन्दर्भमें भक्तोंका रहस्य तथा अट्ठाईस अक्षरोंवाली श्रीगणपतिजीकी मन्त्रमालाका निरूपण किया गया है और ज्ञानका भी प्रकाश स्पष्टरूपसे किया गया है। इस कारणसे इस गणपतिस्तोत्रद्वारा जो भक्त बहुत बार भगवान् महागणपतिकी स्तुति करता है, त्रिलोकी उसके वशवर्ती हो जाती है॥ १६॥

॥ इस प्रकार श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य श्रीराघवचैतन्यविरचित महागणपतिस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

गणपतिस्तवः

अशेषविघ्नप्रतिषेधदक्षो
मन्त्राक्षतानामिव दिङ्मुखेषु।
विक्षेपलीलाकरशीकराणां
करोतु वः प्रीतिमिभाननस्य॥ १॥

दन्ताग्रनिर्भिन्नमहाचलोर्वी-
रन्ध्रोत्थिताहीन्द्रमणिप्रभौघे ।
नागाननः स्तम्भधिया कपोलौ
घर्षन्वितृष्णां हसितः पुनातु॥ २॥

दन्ताञ्चलेन धरणीतलमुन्नमय्य
पातालकेलिषु धृतादिवराहलीलम्।

जैसे वैदिक मन्त्रोंसे अभिमन्त्रित अक्षतोंके द्वारा दिक् पवित्रीकरण होता है, वैसे ही सम्पूर्ण विघ्नोंका नाश करनेमें कुशल गजवदन श्रीगणेशजी लोकलीलाके व्याजसे सूँडसे निःसृत मदबिन्दुओंके द्वारा आप लोगोंको प्रसन्नता प्रदान करें॥ १॥

श्रीगणनाथजी लोकलीला-प्रदर्शनकालमें दन्ताग्रभागसे महान्‌से भी महान् पर्वतोंको विदीर्णकर पृथिवीको छिद्रवती कर देते हैं। जब पृथिवीके अन्तर्भागसे शेषभगवान्‌की मणियोंकी आभा बाहर छिटक आती है, तब उस छिद्रको पूरित करनेके लिये वहींपर मस्तक और कपोलोंका घर्षणकर क्रियासे उपरत हो जाते हैं—वे ही प्रसन्नवदन शान्तस्वरूप गणेशजी संसारको पवित्र करें॥ २॥

आपने ही वराहावतारमें दन्ताग्रभागोंसे पृथिवीमें विवर बनाकर पातालकी यात्रा की; उस समय आप लीलावराहरूपसे कण-कण, घर-

उल्लाघतोत्कणकणाधरगीयमान-
क्रीडावदानमिभराजमुखं नमामः ॥ ३ ॥
आनन्दमात्रमकरन्दमनन्तगन्धं
योगीन्द्रसुस्थिरमिलिन्दमपास्तबन्धम्।
वेदान्तसूर्यकिरणैकविकासशीलं
हेरम्बपादशरदम्बुजमानतोऽस्मि ॥ ४ ॥
पायाद् गजेन्द्रवदनः स इमां त्रिलोकीं
यस्योद्गतेन गगने महता करेण।
मूलावलग्नसितदन्तबिसाङ्कुरेण
नालायितं तपनबिम्बसरोरुहस्य ॥ ५ ॥

॥ इति पं० श्रीविन्ध्येश्वरीप्रसादसंकलितो गणपतिस्तवः समाप्तः ॥

घर्र शब्दोंके द्वारा प्राकृत वराहवपुका नाटकमात्र कर रहे थे। उसी वराहावतार-लीलामूलक गणपतिको हम नमन करते हैं॥ ३॥

गणेशजीके चरणोंमें शरद्-ऋतुके कमलोंकी छटा व्याप्त है, जहाँ केवलानन्दरूप मकरन्द विद्यमान है, जो अनन्त गन्धसे युक्त है, बड़े-बड़े योगीन्द्र भ्रमर बनकर स्थिर रूपसे जिसका रसास्वाद लेते रहते हैं, जहाँ किसी प्रकारका बन्धन नहीं है, वेदान्तरूपी सूर्यके प्रकाशसे ही जो विकसित होता है; गणनाथके उन चरणकमलोंमें मैं नमन करता हूँ॥ ४॥

कमलांकुरके समान संलग्न श्वेत दन्तसे युक्त तथा सूर्य-बिम्बरूपी कमलके समान आकाशतक उठे हुए विशाल शुण्डवाले वे गजानन इस त्रिलोकीकी रक्षा करें॥ ५॥

॥ इस प्रकार पं० श्रीविन्ध्येश्वरीप्रसादद्वारा संकलित गणपतिस्तव सम्पूर्ण हुआ॥

संसारमोहनगणेशकवचम्

विष्णुरुवाच

संसारमोहनस्यास्य कवचस्य प्रजापतिः।
ऋषिश्छन्दश्च बृहती देवो लम्बोदरः स्वयम्॥ १॥
धर्मार्थकाममोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्तितः।
सर्वेषां कवचानां च सारभूतमिदं मुने॥ २॥
ॐ गं हुं श्रीगणेशाय स्वाहा मे पातु मस्तकम्।
द्वात्रिंशदक्षरो मन्त्रो ललाटं मे सदावतु॥ ३॥
ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं गमिति वै संततं पातु लोचनम्।
तालुकं पातु विघ्नेशः संततं धरणीतले॥ ४॥
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीमिति च संततं पातु नासिकाम्।
ॐ गौं गं शूर्पकर्णाय स्वाहा पात्वधरं मम॥ ५॥
दन्तांश्च तालुकां जिह्वां पातु मे षोडशाक्षरः॥ ६॥

विष्णु बोले—[हे शनैश्चर!] इस 'संसारमोहन' नामक कवचके प्रजापति ऋषि हैं, बृहती छन्द है और स्वयं लम्बोदर गणेश देवता हैं॥ १॥

धर्म, अर्थ, काम और मोक्षमें इसका विनियोग कहा गया है। हे मुने (नारद)! यह सम्पूर्ण कवचोंका सारभूत है॥ २॥

'ॐ गं हुं श्रीगणेशाय स्वाहा' यह मेरे मस्तककी रक्षा करे। बत्तीस अक्षरोंवाला मन्त्र सदा मेरे ललाटको बचाये॥ ३॥

'ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं गम्' यह निरन्तर मेरे नेत्रोंकी रक्षा करे। विघ्नेश भूतलपर सदा मेरे तालुकी रक्षा करें॥ ४॥

'ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं' यह निरन्तर मेरी नासिकाकी रक्षा करे तथा **'ॐ गौं गं शूर्पकर्णाय स्वाहा'**—यह मेरे ओठको सुरक्षित रखे। षोडशाक्षर-मन्त्र मेरे दाँत, तालु और जीभको बचाये॥ ५-६॥

ॐ लं श्रीं लम्बोदरायेति स्वाहा गण्डं सदावतु।
ॐ क्लीं ह्रीं विघ्ननाशाय स्वाहा कर्णं सदावतु॥ ७॥
ॐ श्रीं गं गजाननायेति स्वाहा स्कन्धं सदावतु।
ॐ ह्रीं विनायकायेति स्वाहा पृष्ठं सदावतु॥ ८॥
ॐ क्लीं ह्रीमिति कङ्कालं पातु वक्षःस्थलं च गम्।
करौ पादौ सदा पातु सर्वाङ्गं विघ्ननिघ्नकृत्॥ ९॥
प्राच्यां लम्बोदरः पातु चाग्नेय्यां विघ्ननायकः।
दक्षिणे पातु विघ्नेशो नैर्ऋत्यां तु गजाननः॥ १०॥
पश्चिमे पार्वतीपुत्रो वायव्यां शङ्करात्मजः।
कृष्णस्यांशश्चोत्तरे च परिपूर्णतमस्य च॥ ११॥
ऐशान्यामेकदन्तश्च हेरम्बः पातु चोर्ध्वतः।
अधो गणाधिपः पातु सर्वपूज्यश्च सर्वतः॥ १२॥
स्वप्ने जागरणे चैव पातु मां योगिनां गुरुः॥ १३॥

'ॐ लं श्रीं लम्बोदराय स्वाहा' सदा गण्डस्थलकी रक्षा करे। **'ॐ क्लीं ह्रीं विघ्ननाशाय स्वाहा'** सदा कानोंकी रक्षा करे॥ ७॥

'ॐ श्रीं गं गजाननाय स्वाहा' सदा कन्धोंकी रक्षा करे। **'ॐ ह्रीं विनायकाय स्वाहा'** सदा पृष्ठभागकी रक्षा करे॥ ८॥

'ॐ क्लीं ह्रीं' कंकालकी और **'गं'** वक्षःस्थलकी रक्षा करें। विघ्ननिहन्ता हाथ, पैर तथा सर्वांगको सुरक्षित रखें॥ ९॥

पूर्वदिशामें लम्बोदर और अग्निकोणमें विघ्ननायक रक्षा करें। दक्षिणमें विघ्नेश और नैर्ऋत्यकोणमें गजानन रक्षा करें॥ १०॥

पश्चिममें पार्वतीपुत्र, वायव्यकोणमें शंकरात्मज, उत्तरमें परिपूर्णतम श्रीकृष्णका अंश, ईशानकोणमें एकदन्त और ऊर्ध्वभागमें हेरम्ब रक्षा करें। अधोभागमें सर्वपूज्य गणाधिप सब ओरसे मेरी रक्षा करें। शयन और जागरणकालमें योगियोंके गुरु मेरा पालन करें॥ ११—१३॥

इति ते कथितं वत्स सर्वमन्त्रौघविग्रहम्।
संसारमोहनं नाम कवचं परमाद्भुतम्॥ १४॥
श्रीकृष्णेन पुरा दत्तं गोलोके रासमण्डले।
वृन्दावने विनीताय मह्यं दिनकरात्मज॥ १५॥
मया दत्तं च तुभ्यं च यस्मै कस्मै न दास्यसि।
परं वरं सर्वपूज्यं सर्वसङ्कटतारणम्॥ १६॥
गुरुमभ्यर्च्य विधिवत् कवचं धारयेत्तु यः।
कण्ठे वा दक्षिणे बाहौ सोऽपि विष्णुर्न संशयः॥ १७॥
अश्वमेधसहस्राणि वाजपेयशतानि च।
ग्रहेन्द्र कवचस्यास्य कलां नार्हन्ति षोडशीम्॥ १८॥
इदं कवचमज्ञात्वा यो भजेच्छङ्करात्मजम्।
शतलक्षप्रजप्तोऽपि न मन्त्रः सिद्धिदायकः॥ १९॥

॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्तपुराणे गणपतिखण्डे संसारमोहनं नाम गणेशकवचं सम्पूर्णम्॥

हे वत्स ! इस प्रकार जो सम्पूर्ण मन्त्रसमूहोंका विग्रह-स्वरूप है, उस परम अद्भुत संसारमोहन नामक कवचका मैंने तुमसे वर्णन कर दिया॥ १४॥

हे सूर्यनन्दन ! इसका उपदेश प्राचीनकालमें गोलोकके वृन्दावनमें रासमण्डलके अन्तर्गत श्रीकृष्णने मुझ विनीतको दिया था; वही मैंने तुम्हें प्रदान किया है। तुम इसे जिस-किसीको मत दे डालना। यह परम श्रेष्ठ, सर्वपूज्य और सम्पूर्ण संकटोंसे उबारनेवाला है॥ १५-१६॥

जो मनुष्य विधिपूर्वक गुरुकी अभ्यर्चना करके इस कवचको गलेमें अथवा दक्षिण भुजापर धारण करता है, वह निस्संदेह विष्णु ही है॥ १७॥

हे ग्रहेन्द्र ! हजारों अश्वमेध और सैकड़ों वाजपेय यज्ञ इस कवचकी सोलहवीं कलाकी भी समानता नहीं कर सकते॥ १८॥ जो मनुष्य इस कवचको जाने बिना शंकर-सुवन गणेशकी भक्ति करता है, उसके लिये सौ लाख जपनेपर भी मन्त्र सिद्धिदायक नहीं होता॥ १९॥

॥ इस प्रकार श्रीब्रह्मवैवर्तपुराणके अन्तर्गत गणपतिखण्डमें संसारमोहन नामक गणेशकवच सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणेशकवचम्

गौरी उवाच

एषोऽतिचपलो दैत्यान्बाल्येऽपि नाशयत्यहो।
अग्रे किं कर्म कर्तेति न जाने मुनिसत्तम॥ १॥
दैत्या नानाविधा दुष्टाः साधुदेवद्रुहः खलाः।
अतोऽस्य कण्ठे किञ्चित्त्वं रक्षार्थं बद्धुमर्हसि॥ २॥

मुनिरुवाच

ध्यायेत्सिंहगतं विनायकममुं दिग्बाहुमाद्ये युगे
त्रेतायां तु मयूरवाहनममुं षड्बाहुकं सिद्धिदम्।
द्वापरे तु गजाननं युगभुजं रक्ताङ्गरागं विभुं
तुर्ये तु द्विभुजं सिताङ्गरुचिरं सर्वार्थदं सर्वदा॥ ३॥
विनायकः शिखां पातु परमात्मा परात्परः।
अतिसुन्दरकायस्तु मस्तकं सुमहोत्कटः॥ ४॥

पार्वतीजी बोलीं—हे मुनिसत्तम! यह गणेश अत्यन्त चंचल है; यह बाल्यावस्थामें ही असुरोंका संहार कर रहा है। आगे चलकर यह न जाने क्या करेगा?॥ १॥

दैत्य अनेक प्रकारकी दुष्टता करनेवाले, दुष्ट, खल स्वभाववाले और सज्जनों तथा देवताओंसे द्रोह करनेवाले हैं। अतः रक्षाके लिये इसके कण्ठमें आप कुछ बाँध दीजिये॥ २॥

मुनि बोले—हे पार्वति! सत्ययुगमें आठ भुजावाले सिंहारूढ विनायकजीका, त्रेतायुगमें छः भुजावाले सिद्धिप्रदायक तथा मयूरवाहन विनायकजीका, द्वापरमें रक्त वर्णवाले सुगन्धित द्रव्यके लेखसे विभूषित चार भुजाओंवाले प्रभु गजाननका और कलियुगमें उज्ज्वल वर्णवाले, सुन्दर दो भुजाओंसे युक्त तथा सर्वदा सभी कामनाएँ पूर्ण करनेवाले गणेशका ध्यान करना चाहिये॥ ३॥

परात्पर परमात्मा विनायक शिखाकी रक्षा करें, अति सुन्दर शरीरवाले सुमहोत्कट मस्तककी रक्षा करें॥ ४॥

ललाटं काश्यपः पातु भ्रूयुगं तु महोदरः।
नयने भालचन्द्रस्तु गजास्यस्त्वोष्ठपल्लवौ॥ ५ ॥
जिह्वां पातु गणक्रीडश्चिबुकं गिरिजासुतः।
वाचं विनायकः पातु दन्तान् रक्षतु दुर्मुखः॥ ६ ॥
श्रवणौ पाशपाणिस्तु नासिकां चिन्तितार्थदः।
गणेशस्तु मुखं कण्ठं पातु देवो गणञ्जयः॥ ७ ॥
स्कन्धौ पातु गजस्कन्धः स्तनौ विघ्नविनाशनः।
हृदयं गणनाथस्तु हेरम्बो जठरं महान्॥ ८ ॥
धराधरः पातु पार्श्वौ पृष्ठं विघ्नहरः शुभः।
लिङ्गं गुह्यं सदा पातु वक्रतुण्डो महाबलः॥ ९ ॥
गणक्रीडो जानुजङ्घे ऊरू मङ्गलमूर्तिमान्।
एकदन्तो महाबुद्धिः पादौ गुल्फौ सदावतु॥ १० ॥

कश्यपपुत्र ललाटकी रक्षा करें, महोदर भ्रूयुगोंकी रक्षा करें, भालचन्द्र दोनों नेत्रोंकी रक्षा करें और गजानन कोमल ओष्ठोंकी रक्षा करें॥ ५॥

गणक्रीड जिह्वाकी रक्षा करें, गिरिजासुत चिबुककी रक्षा करें, विनायक वाणीकी रक्षा करें तथा दुर्मुख दाँतोंकी रक्षा करें॥ ६॥

पाशपाणि कानोंकी रक्षा करें, नासिकाकी रक्षा चिन्तितार्थद करें, गणेश मुखकी रक्षा करें एवं भगवान् गणंजय कण्ठकी रक्षा करें॥ ७॥

गजस्कन्ध स्कन्धोंकी रक्षा करें, विघ्नविनाशन स्तनोंकी रक्षा करें, गणनाथ हृदयकी रक्षा करें और महान् हेरम्ब जठरकी रक्षा करें॥ ८॥

धराधर पार्श्वोंकी रक्षा करें, मंगलमय विघ्नहर पृष्ठकी रक्षा करें और महाबल वक्रतुण्ड लिंग तथा गुह्यदेशकी सदा रक्षा करें॥ ९॥

गणक्रीड जानु तथा जंघोंकी रक्षा करें, मंगलमूर्तिमान् ऊरूकी रक्षा करें और महाबुद्धिमान् एकदन्त पादों तथा गुल्फोंकी सदा रक्षा करें॥ १०॥

क्षिप्रप्रसादनो बाहू पाणी आशाप्रपूरकः।
अङ्गुलीश्च नखान्पातु पद्महस्तोऽरिनाशनः॥ ११॥
सर्वाङ्गानि मयूरेशो विश्वव्यापी सदावतु।
अनुक्तमपि यत्स्थानं धूम्रकेतुः सदावतु॥ १२॥
आमोदस्त्वग्रतः पातु प्रमोदः पृष्ठतोऽवतु।
प्राच्यां रक्षतु बुद्धीश आग्नेय्यां सिद्धिदायकः॥ १३॥
दक्षिणस्यामुमापुत्रो नैर्ऋत्यां तु गणेश्वरः।
प्रतीच्यां विघ्नहर्ताव्याद्वायव्यां गजकर्णकः॥ १४॥
कौबेर्यां निधिपः पायादीशान्यामीशनन्दनः।
दिवोऽव्यादेलनन्दस्तु रात्रौ सन्ध्यासु विघ्नहृत्॥ १५॥
राक्षसासुरवेतालग्रहभूतपिशाचतः।
पाशाङ्कुशधरः पातु रजःसत्त्वतमःस्मृतीः॥१६॥

क्षिप्रप्रसादन बाहुओंकी रक्षा करें, आशाप्रपूरक हाथोंकी रक्षा करें और हाथमें कमल लिये हुए अरिनाशन नखोंकी रक्षा करें॥ ११॥

विश्वव्यापी मयूरेश सभी अंगोंकी सदा रक्षा करें और जिन स्थानोंका उल्लेख नहीं किया गया है, उनकी भी रक्षा सदा धूम्रकेतु करें॥ १२॥

आमोद आगेसे रक्षा करें, प्रमोद पीछेसे रक्षा करें, बुद्धीश पूर्वमें रक्षा करें और सिद्धिदायक आग्नेय दिशामें रक्षा करें॥ १३॥

उमापुत्र दक्षिण दिशामें रक्षा करें, नैर्ऋत्यकोणमें गणेश्वर रक्षा करें, विघ्नहर्ता पश्चिम दिशा एवं गजकर्णक वायव्य दिशामें रक्षा करें॥ १४॥

निधिपति उत्तर दिशामें रक्षा करें, ईशनन्दन ईशानदिशामें रक्षा करें, इलानन्दन दिवामें रक्षा करें तथा रात्रि और सन्ध्याकालोंमें विघ्नहृत् रक्षा करें॥ १५॥

राक्षस, असुर, वेताल ग्रह, भूत, पिशाचसे और सत्त्व-रज-तम गुणोंसे पाशांकुशधर रक्षा करें॥ १६॥

ज्ञानं धर्मं च लक्ष्मीं च लज्जां कीर्तिं तथा कुलम्।
वपुर्धनं च धान्यञ्च गृहदारान्सुतान्सखीन्॥ १७॥
सर्वायुधधरः पौत्रान्मयूरेशोऽवतात्सदा।
कपिलोऽजाविकं पातु गजाश्वान्विकटोऽवतु॥ १८॥
भूर्जपत्रे लिखित्वेदं यः कण्ठे धारयेत्सुधीः।
न भयं जायते तस्य यक्षरक्षःपिशाचतः॥ १९॥
त्रिसन्ध्यं जपते यस्तु वज्रसारतनुर्भवेत्।
यात्राकाले पठेद्यस्तु निर्विघ्नेन फलं लभेत्॥ २०॥
युद्धकाले पठेद्यस्तु विजयं चाप्नुयाद् ध्रुवम्।
मारणोच्चाटनाकर्षस्तम्भमोहनकर्मणि ॥ २१॥
सप्तवारं जपेदेतद्दिनानामेकविंशतिम्।
तत्तत्फलमवाप्नोति साधको नात्र संशयः॥ २२॥

ज्ञान, धर्म, लक्ष्मी, लज्जा, कीर्ति, कुल, शरीर, धन-धान्य, गृह, स्त्री-पुत्र तथा मित्रोंकी एवं पौत्रोंकी रक्षा सभी प्रकारके अस्त्र धारण करनेवाले मयूरेश करें। कपिल भेड़-बकरोंकी रक्षा करें और विकट हाथी-घोड़ोंकी रक्षा करें॥ १७-१८॥

जो विद्वान् भूर्जपत्रमें इसे लिख करके कण्ठमें धारण करता है, उसको यक्ष, राक्षस तथा पिशाचोंसे भय नहीं होता है॥ १९॥

जो तीनों सन्ध्या-कालोंमें इसका जप करता है, उसका शरीर हीरेकी भाँति कठोर हो जाता है। जो व्यक्ति यात्राकालमें इसका पाठ करता है, उसे निर्विघ्नतापूर्वक फल प्राप्त होता है॥ २०॥

जो युद्धकालमें इसका पाठ करता है, वह निश्चितरूपसे विजय प्राप्त करता है। मारण, उच्चाटन, आकर्षण, स्तम्भन तथा मोहनादि कर्मके लिये यदि साधक इक्कीस दिनपर्यन्त प्रतिदिन सात बार इसका जप करे तो वह उन-उन वांछित फलोंको प्राप्त कर लेता है, इसमें भी संशय नहीं है॥ २१-२२॥

एकविंशतिवारं च पठेत्तावद्दिनानि यः।
कारागृहगतं सद्यो राज्ञा वध्यं च मोचयेत्॥ २३॥
राजदर्शनवेलायां पठेदेतत्त्रिवारतः।
स राजानं वशं नीत्वा प्रकृतीश्च सभां जयेत्॥ २४॥
इदं गणेशकवचं कश्यपेन समीरितम्।
मुद्गलाय च तेनाथ माण्डव्याय महर्षये॥ २५॥
मह्यं स प्राह कृपया कवचं सर्वसिद्धिदम्।
न देयं भक्तिहीनाय देयं श्रद्धावते शुभम्॥ २६॥
अनेनास्य कृता रक्षा न बाधास्य भवेत् क्वचित्।
राक्षसासुरवेतालदैत्यदानवसम्भवा ॥ २७॥

॥ इति श्रीगणेशपुराणे उत्तरखण्डे श्रीगणेशकवचं सम्पूर्णम्॥

जो इक्कीस दिनतक इस मन्त्रका इक्कीस बार पाठ करता है, राजाके द्वारा वधके लिये आदेश प्राप्त और कारागारमें बन्द किया गया वह व्यक्ति भी शीघ्र ही मुक्त हो जाता है॥ २३॥

राजाके दर्शनके समय जो व्यक्ति इस मन्त्रका तीन बार पाठ करता है, वह राजाको वशमें करके प्रजाओंको तथा राजसभाको जीत लेता है॥ २४॥

इस गणेशकवचको महर्षि कश्यपने मुद्गल ऋषिसे कहा और उन्होंने महर्षि माण्डव्यसे कहा और माण्डव्यने इस सर्वसिद्धिप्रद कवचको कृपा करके मुझसे कहा है। इस शुभ कवचको श्रद्धावान्‌को ही देना चाहिये, भक्तिहीन व्यक्तिको कभी भी नहीं देना चाहिये॥ २५-२६॥

इस कवचके द्वारा इसकी रक्षा की गयी है, इस कारणसे राक्षस, असुर, वेताल, दैत्य, दानव आदिसे होनेवाली किसी प्रकारकी भी बाधा इसे नहीं हो सकती है॥ २७॥

॥ इस प्रकार श्रीगणेशपुराणके अन्तर्गत उत्तरखण्डमें श्रीगणेशकवच सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणेशस्तवराजः

श्रीभगवानुवाच

गणेशस्य स्तवं वक्ष्ये कलौ झटिति सिद्धिदम्।
न न्यासो न च संस्कारो न होमो न च तर्पणम्॥
न मार्जनं च पञ्चाशत्सहस्रजपमात्रतः।
सिद्ध्यत्यर्चनतः पञ्चशतब्राह्मणभोजनात्॥

श्रीभगवान् बोले—अब मैं कलियुगमें तत्क्षण ही सिद्धि देनेवाले भगवान् गणेशके स्तवनको बताऊँगा। इसके लिये न कोई न्यास, न कोई संस्कार, न हवन, न तर्पण और न मार्जनकी आवश्यकता है। मात्र गणेशजीके पूजन और इस स्तवके पचास हजार जप तथा पाँच सौ ब्राह्मणोंको भोजन करानेसे यह सिद्ध हो जाता है।

विनियोगः

अस्य श्रीगणेशस्तवराजमन्त्रस्य भगवान् सदाशिव ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीमहागणपतिर्देवता, श्रीमहागणपतिप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः।

इस श्रीगणेशस्तवराज मन्त्रके भगवान् सदाशिव ऋषि, अनुष्टुप् छन्द तथा श्रीमहागणपति देवता हैं। श्रीमहागणपतिकी प्रसन्नताके लिये जपमें इसका विनियोग किया जाता है।

विनायकैकभावनासमर्चनासमर्पितं
प्रमोदकैः प्रमोदकैः प्रमोदमोदमोदकम्।
यदर्पितं सदर्पितं नवान्यधान्यनिर्मितं
न कण्डितं न खण्डितं न खण्डमण्डनं कृतम्॥ १॥

श्रीगणेशभगवान्‌के सगुण साकार रूपकी अनन्य भावसे उपासना करनेवाले भक्तगण, अखण्ड एवं अक्षत नवजात धान्यादिकोंके द्वारा अत्यन्त आनन्द तथा उल्लासके साथ जिन आनन्ददाता प्रभुकी मोदकमयी प्रतिमाका निर्माण करते हैं; मैं उन सगुण साकार प्रतिमारूप गणेशजीको नमस्कार करता हूँ॥ १॥

सजातिकृद्विजातिकृत्स्वनिष्ठभेदवर्जितं
निरञ्जनं च निर्गुणं निराकृतिं ह्यनिष्क्रियम्।
सदात्मकं चिदात्मकं सुखात्मकं परं पदं
भजामि तं गजाननं स्वमाययात्तविग्रहम्॥ २॥
गणाधिप त्वमष्टमूर्तिरीशसुनूरीश्वर-
स्त्वमम्बरं च शम्बरं धनञ्जयः प्रभञ्जनः।
त्वमेव दीक्षितः क्षितिर्निशाकरः प्रभाकर-
श्चराचरप्रचारहेतुरन्तरायशान्तिकृत् ॥ ३॥
अनेकदं तमालनीलमेकदन्तसुन्दरं
गजाननं नमोऽगजाननामृताब्धिचन्दिरम्।
समस्तवेदवादसत्कलाकलापमन्दिरं
महान्तरायकृत्तमोऽर्कमाश्रितोन्दुरुं परम्॥ ४॥

जो सजातीय, विजातीय तथा स्वगतभेदोंसे रहित हैं, जो निरंजन, निर्गुण, निराकार तथा अनिष्क्रिय हैं, जो सत्-स्वरूप, चित्-स्वरूप तथा आनन्दस्वरूप पूर्णब्रह्म हैं और जो अपनी मायाके द्वारा विग्रह धारण करनेवाले हैं, उन गजाननको मैं नमस्कार करता हूँ॥ २॥

हे गणपति! आप स्वयं अष्टमूर्ति हैं, भगवान् शिवजीके पुत्र हैं और ईश्वर हैं। आप आकाश हैं, आप जल हैं, आप अग्नि हैं और आप ही वायु हैं। आप ही यजमानस्वरूप हैं। आप ही पृथिवी, चन्द्रमा तथा सूर्यरूप हैं। आप ही जड़ और चेतनके संचारके कारणस्वरूप हैं एवं संसारमें सभी विघ्नोंकी शान्ति करनेवाले हैं॥ ३॥

जो भक्तोंको सब कुछ देते हैं, तमालके समान नीलवर्णवाले हैं, एक सुन्दर दन्तवाले हैं, हाथीके समान मुखवाले हैं, जो भगवती पार्वतीके मुखरूपी अमृतसागरके लिये चन्द्रमाके समान हैं, जो समस्त वेद-विद्याओं एवं सभी सत्कलाओंके निधान हैं तथा जो बड़े-बड़े विघ्न करनेवाले अन्धकारके लिये सूर्यके समान हैं और श्रेष्ठ मूषकपर आसीन हैं, उन श्रीगणेशको मैं नमस्कार करता हूँ॥ ४॥

सरत्नहेमघण्टिकानिनादनूपुरस्वनै-
मृदङ्गतालनादभेदसाधनानुरूपतः ।
धिमिद्धिमितथोङ्गथोङ्गथैयिथैयिशब्दतो
विनायकः शशाङ्कशेखरः प्रहृष्य नृत्यति॥ ५॥
सदा नमामि नायकैकनायकं विनायकं
कलाकलापकल्पनानिदानमादिपूरुषम् ।
गणेश्वरं गुणेश्वरं महेश्वरात्मसम्भवं
स्वपादपद्मसेविनामपारवैभवप्रदम् ॥ ६॥
भजे प्रचण्डतुन्दिलं सदन्दशूकभूषणं
सनन्दनादिवन्दितं समस्तसिद्धसेवितम्।
सुरासुरौकयोः सदा जयप्रदं भयप्रदं
समस्तविघ्नघातिनं स्वभक्तपक्षपातिनम्॥ ७॥

रत्नजटित सुवर्णमय नुपूरोंमें लगी हुई घण्टियोंके शब्दोंसे तथा मृदंगकी ताल-ध्वनिके भेदसाधनादिके अनुरूप धीमि-धीमित्, थोंग-थोंग, थैयि-थैयि आदि शब्दोंके माध्यमसे शशांकशेखर भगवान् विनायक हर्षित होकर नृत्य करते हैं॥ ५॥

नायकोंके भी एकमात्र नायक, सम्पूर्ण कलाओंकी कल्पनाके आदिकारण, आदिपुरुष, गणोंके ईश्वर, सभी गुणोंके स्वामी, भगवान् शिवके पुत्र और अपने चरण-कमलकी सेवा करनेवालोंको अपार वैभव प्रदान करनेवाले श्रीविनायकको मैं सदा नमस्कार करता हूँ॥ ६॥

विशाल उदरवाले, दन्दशूक (सर्पसदृश विषैले जन्तु)-को आभूषणके रूपमें धारण करनेवाले, सनन्दन आदि मुनियोंसे वन्दित, समस्त सिद्धोंके द्वारा सेवित, देवताओंको जय प्रदान करनेवाले तथा असुरोंको भय देनेवाले, सभी विघ्नोंका नाश करनेवाले और अपने भक्तोंका पक्ष लेनेवाले गणेशका मैं भजन करता हूँ॥ ७॥

करामबुजातकङ्कणः पदाब्जकिङ्किणीगणो
गणेश्वरो गुणार्णवः फणीश्वराङ्गभूषणः।
जगत्त्रयान्तरायशान्तिकारकोऽस्तु तारको
भवार्णवस्थघोरदुर्गहा चिदेकविग्रहः॥ ८॥

यो भक्तिप्रवणश्चराचरगुरोः स्तोत्रं गणेशाष्टकं
शुद्धः संयतचेतसा यदि पठेन्नित्यं त्रिसन्ध्यं पुमान्।
तस्य श्रीरतुला स्वसिद्धिसहिता श्रीशारदा सर्वदा
स्यातां तत्परिचारके किल तदा काः कामनानां कथाः॥ ९॥

॥ इति श्रीरुद्रयामले श्रीगणेशस्तवराजः सम्पूर्णः॥

करकमलमें कंकण धारण करनेवाले, चरणकमलमें किंकिणियोंसे सुशोभित होनेवाले, गणोंके स्वामी, गुणोंके सागर, नागराजको अंगभूषणके रूपमें धारण करनेवाले, तीनों लोकोंके विघ्नोंकी शान्ति करनेवाले, भवसागरमें विद्यमान घोर कष्टोंका निवारण करनेवाले तथा एकमात्र चिन्मय विग्रहवाले श्रीगणेश सभीके उद्धारक हों॥ ८॥

जो मनुष्य भक्तियुक्त तथा पवित्र होकर चराचरके गुरुके इस गणेशाष्टकस्तोत्रका संयतचित्तसे तीनों सन्ध्याकालोंमें नित्य पाठ करता है, अनुपमा लक्ष्मीजी तथा अपनी सिद्धियोंसहित सरस्वतीजी सदा उसकी परिचारिका बनी रहती हैं, तब उसकी कामनाओंकी बात ही क्या!॥ ९॥

॥ इस प्रकार श्रीरुद्रयामलमें श्रीगणेशस्तवराज सम्पूर्ण हुआ॥

ऋणहर्तागणेशस्तोत्रम्

कैलासपर्वते रम्ये शम्भुं चन्द्रार्धशेखरम्।
षडाम्नायसमायुक्तं पप्रच्छ नगकन्यका॥

रमणीय कैलासपर्वतपर छः आम्नायोंसे युक्त चन्द्रार्धशेखर भगवान् शिव बैठे थे, उस समय गिरिराजनन्दिनी पार्वतीजीने उनसे पूछा—

पार्वत्युवाच

देवेश परमेशान सर्वशास्त्रार्थपारग।
उपायमृणनाशस्य कृपया वद साम्प्रतम्॥

पार्वतीजी बोलीं—सम्पूर्ण शास्त्रोंके अर्थज्ञानमें पारंगत हे देवेश्वर! हे परमेश्वर! अब कृपापूर्वक मुझे ऋणनाशका उपाय बताइये।

शिव उवाच

सम्यक् पृष्टं त्वया भद्रे लोकानां हितकाम्यया।
तत्सर्वं सम्प्रवक्ष्यामि सावधानावधारय॥

शिवजीने कहा—हे कल्याणि! तुमने लोकहितकी कामनासे यह बहुत उत्तम बात पूछी है; मैं इस विषयमें सब कुछ बताऊँगा; तुम सावधान होकर सुनो—

विनियोग

ॐ अस्य श्रीऋणहरणकर्तृगणपतिस्तोत्रमन्त्रस्य सदाशिव ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीऋणहरणकर्तृगणपतिर्देवता, ग्लौं बीजम्, गः शक्तिः, गों कीलकम्, मम सकलर्णनाशने जपे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास

ॐ सदाशिवर्षये नमः शिरसि। अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे। श्रीऋणहर्तृगणेशदेवतायै नमः हृदि। ग्लौं बीजाय नमः गुह्ये (मूलाधारे)। गः शक्तये नमः पादयोः। गों कीलकाय नमः सर्वाङ्गे।

करन्यास

'ॐ गणेश' अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। 'ऋणं छिन्धि' तर्जनीभ्यां नमः। 'वरेण्यम्' मध्यमाभ्यां नमः। 'हुम्' अनामिकाभ्यां नमः। 'नमः' कनिष्ठिकाभ्यां नमः। 'फट्' करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।'

हृदयादिन्यास

'ॐ गणेश' हृदयाय नमः। 'ऋणं छिन्धि' शिरसे स्वाहा। 'वरेण्यम्' शिखायै वषट्। 'हुम्' कवचाय हुम्। 'नमः' नेत्रत्रयाय वौषट्। 'फट्' अस्त्राय फट्।

ध्यान

सिन्दूरवर्णं द्विभुजं गणेशं लम्बोदरं पद्मदले निविष्टम्।
ब्रह्मादिदेवैः परिसेव्यमानं सिद्धैर्युतं तं प्रणमामि देवम्॥

सच्चिदानन्दमय भगवान् गणेशकी अंगकान्ति सिन्दूरके समान है। उनके दो भुजाएँ हैं, वे लम्बोदर हैं और कमलदलपर विराजमान हैं, ब्रह्मा आदि देवता उनकी सेवामें लगे हैं तथा वे सिद्धसमुदायसे युक्त हैं—ऐसे श्रीगणपतिदेवको मैं प्रणाम करता हूँ।

इस प्रकार ध्यान करनेके पश्चात् निम्नांकित स्तोत्रका पाठ करे—

सृष्ट्यादौ ब्रह्मणा सम्यक् पूजितः फलसिद्धये।
सदैव पार्वतीपुत्र ऋणनाशं करोतु मे॥ १॥
त्रिपुरस्य वधात् पूर्वं शम्भुना सम्यगर्चितः।
सदैव पार्वतीपुत्र ऋणनाशं करोतु मे॥ २॥
हिरण्यकश्यपादीनां वधार्थे विष्णुनार्चितः।
सदैव पार्वतीपुत्र ऋणनाशं करोतु मे॥ ३॥
महिषस्य वधे देव्या गणनाथः प्रपूजितः।
सदैव पार्वतीपुत्र ऋणनाशं करोतु मे॥ ४॥

सृष्टिके आदिकालमें ब्रह्माजीने सृष्टिरूप फलकी सिद्धिके लिये जिनका सम्यक् पूजन किया था, वे पार्वतीपुत्र सदा ही मेरे ऋणका नाश करें॥ १॥

त्रिपुरवधके पूर्व भगवान् शिवने जिनकी सम्यक् आराधना की थी, वे पार्वतीनन्दन गणेश सदा ही मेरे ऋणका नाश करें॥ २॥

भगवान् विष्णुने हिरण्यकश्यप आदि दैत्योंके वधके लिये जिनकी पूजा की थी, वे पार्वतीकुमार गणेश सदा ही मेरे ऋणका नाश करें॥ ३॥

महिषासुरके वधके लिये देवी दुर्गाने जिन गणनाथकी उत्कृष्ट पूजा की थी, वे पार्वतीनन्दन गणेश सदा ही मेरे ऋणका नाश करें॥ ४॥

तारकस्य वधात् पूर्वं कुमारेण प्रपूजितः।
सदैव पार्वतीपुत्र ऋणनाशं करोतु मे॥ ५॥
भास्करेण गणेशस्तु पूजितश्छविसिद्धये।
सदैव पार्वतीपुत्र ऋणनाशं करोतु मे॥ ६॥
शशिना कान्तिसिद्ध्यर्थं पूजितो गणनायकः।
सदैव पार्वतीपुत्र ऋणनाशं करोतु मे॥ ७॥
पालनाय च तपसा विश्वामित्रेण पूजितः।
सदैव पार्वतीपुत्र ऋणनाशं करोतु मे॥ ८॥
इदं त्वृणहरं स्तोत्रं तीव्रदारिद्र्यनाशनम्।
एकवारं पठेन्नित्यं वर्षमेकं समाहितः॥ ९॥
दारिद्र्यं दारुणं त्यक्त्वा कुबेरसमतां व्रजेत्॥ १०

॥ इति श्रीकृष्णयामलतन्त्रे उमामहेश्वरसंवादे ऋणहर्तागणेशस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

कुमार कार्तिकेयने तारकासुरके वधसे पूर्व जिनका भलीभाँति पूजन किया था, वे पार्वतीपुत्र गणेश सदा ही मेरे ऋणका नाश करें॥ ५॥

भगवान् सूर्यदेवने अपनी तेजोमयी प्रभाकी रक्षाके लिये जिनकी आराधना की थी, वे पार्वतीनन्दन गणेश सदा ही मेरे ऋणका नाश करें॥ ६॥

चन्द्रमाने अपनी कान्तिकी सिद्धिके लिये जिन गणनायकका पूजन किया था, वे पार्वतीपुत्र गणेश सदा ही मेरे ऋणका नाश करें॥ ७॥

विश्वामित्रने अपनी रक्षाके लिये तपस्याद्वारा जिनकी पूजा की थी, वे पार्वतीपुत्र गणेश सदा ही मेरे ऋणका नाश करें॥ ८॥

यह ऋणहरस्तोत्र दारुण दरिद्रताका नाश करनेवाला है। इसका एक वर्षतक प्रतिदिन एक बार एकाग्रचित्त होकर पाठ करे। जो ऐसा करेगा, वह दुस्सह दरिद्रताको त्यागकर धनकी दृष्टिसे कुबेरकी समता प्राप्त करेगा॥ ९-१०॥

॥ इस प्रकार श्रीकृष्णयामलतन्त्रके अन्तर्गत उमामहेश्वर-संवादके रूपमें ऋणहर्तागणेशस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

मन्त्रगर्भश्रीगणपतिस्तोत्रम्

नमो गणपते तुभ्यं ज्येष्ठज्येष्ठाय ते नमः।
स्मरणाद्यस्य ते विघ्ना न तिष्ठन्ति कदाचन॥ १॥
देवानां चापि देवस्त्वं ज्येष्ठराज इति श्रुतः।
त्यक्त्वा त्वामिह कः कार्यसिद्धिं जन्तुर्गमिष्यति॥ २॥
स त्वं गणपतिः प्रीतो भव ब्रह्मादिपूजितः।
चरणस्मरणात्तेऽपि स्युर्ब्रह्माद्या यशस्विनः॥ ३॥
परापरब्रह्मदाता सुराणां त्वं सुरो यतः।
सन्मतिं देहि मे ब्रह्मपते ब्रह्मसमीडित॥ ४॥
उक्तं हस्तिमुखश्रुत्या त्वं ब्रह्म परमित्यपि।
कृतं वाहनमाखुस्ते कारणं त्वत्र वेद नो॥ ५॥

हे गणपति! आपको प्रणाम है, ज्येष्ठोंमें भी ज्येष्ठ आपको नमस्कार है, आपके स्मरणमात्रसे (शुभ कार्यमें) विघ्न-बाधाएँ कभी भी नहीं टिक पातीं॥ १॥

आप देवताओंके भी देवता हैं, आप ज्येष्ठराज (राजराजेश्वर)—इस नामसे प्रसिद्ध हैं। आपसे विमुख हुआ कौन प्राणी अपने कार्यमें सफल हो सकता है?॥ २॥

ब्रह्मादि देवश्रेष्ठोंसे पूजित आप गणपति (हमपर) प्रसन्न हों। आपके चरणोंका (श्रद्धापूर्वक) स्मरण करनेसे ही ब्रह्मादि देवगण यशस्वी हुए हैं॥ ३॥

आप देवताओंके देवता और श्रेष्ठतम ब्रह्मज्ञान देनेवाले हैं। हे ब्रह्मपते! आप ब्रह्मादि देवोंसे पूजित हैं। आप मुझे सद्‌बुद्धि प्रदान करें॥ ४॥

वेदोंके द्वारा आप हाथीके मुखवाले कहे गये हैं, फिर भी आप परब्रह्म हैं। आपने चूहेको अपना वाहन बना रखा है—हम इसका कारण नहीं जान पाते॥ ५॥

इयं महेश ते लीला न पस्पर्श यतो मतिः।
त्वां न हेरम्ब कुत्रापि परतन्त्रत्वमीश ते॥ ६ ॥
स त्वं कवीनां च कविर्देव आद्यो गणेश्वरः।
अरविन्दाक्ष विद्येश प्रसन्नः प्रार्थनां शृणु॥ ७ ॥
त्वमेकदन्त विघ्नेश देव शृण्वर्भकोक्तिवत्।
सत्कवीनां मध्य एव नैकाण्वंशकविं कुरु॥ ८ ॥
श्रीविनायक ते दृष्ट्या कोऽपि नूनं भवेत् कविः।
तं त्वामुमासुतं नौमि सन्मतिप्रद कामद॥ ९ ॥
ममापराधः क्षन्तव्यो नतिभिः संप्रसीद मे।
न नमस्याविधिं जाने त्वं प्रसीदाद्य केवलम्॥ १०॥

हे महेश! यह आपकी लीला है, जिसे हमारी बुद्धि नहीं छू पाती। हे परमेश्वर! हे हेरम्ब! आपको किसी भी प्रकारकी परतन्त्रता नहीं है, आप सर्वसमर्थ हैं॥ ६॥

आप कवियों (ऋषियों)-के कवि हैं, आप आदिदेव गणनायक हैं, आप कमलनेत्र और विद्याके भण्डार हैं। आप प्रसन्न हों और हमारी प्रार्थना स्वीकार करें॥ ७॥

हे एकदन्त! विघ्नेश! हे देव! आप बालकके (अटपटे) वचनोंकी तरह मेरी प्रार्थना सुनें। सत्कवियोंके बीच मुझे अधम कवि न बनायें॥ ८॥

श्रीविनायक! आपकी कृपादृष्टिसे कोई भी निश्चय ही कवि बन सकता है। मैं उन्हीं सन्मति देने और कामनाओंको पूर्ण करनेवाले उमासुत आपको प्रणाम करता हूँ॥ ९॥

मेरे अपराध क्षमा करें और मेरी प्रार्थनासे प्रसन्न हों। मुझे नमस्कारकी विधि नहीं मालूम, हे आद्य! आप मुझपर कृपा करें॥ १०॥

न मे श्रद्धा न मे भक्तिर्न त्वदर्चनपद्धतिः।
ज्ञात्वा वदान्यस्तेऽस्मीति ब्रुवे साधनवर्जितः॥ ११॥
कर्तुं स्तवं च तेऽनीशः प्रसीद कृपयोद्धर।
प्रणामं कुर्वतोऽनेन सदानन्द प्रसीद मे॥ १२॥

॥ इति श्रीवासुदेवानन्दसरस्वतीकृतं मन्त्रगर्भगणपतिस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

मुझमें न श्रद्धा है, न भक्ति है, न आपकी पूजापद्धतिका ही मुझे ज्ञान है। मैं साधनहीन आपकी कृपाका सहारा जानकर प्रार्थना कर रहा हूँ॥ ११॥

आपकी स्तुति करनेकी भी सामर्थ्य मुझमें नहीं है। आप प्रसन्न हों और कृपापूर्वक मेरा उद्धार करें। हे आनन्दस्वरूप! इस स्तुतिके द्वारा प्रणाम करते हुए मुझपर आप प्रसन्न हों॥ १२॥

॥ इस प्रकार श्रीवासुदेवानन्दसरस्वतीकृत मन्त्रगर्भगणपतिस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणेशाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्

यम उवाच

गणेश हेरम्ब गजाननेति
महोदर स्वानुभवप्रकाशिन्।
वरिष्ठ सिद्धिप्रिय बुद्धिनाथ
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः॥ १॥

यमराज [अपने दूतोंसे] कहते हैं—हे दूतो! जो लोग गणेश! हेरम्ब! गजानन! महोदर! स्वानुभवप्रकाशिन्! वरिष्ठ! सिद्धिप्रिय! बुद्धिनाथ!— इस प्रकार उच्चारण करते हों, उनसे अत्यन्त भयभीत रहकर तुम उन्हें दूरसे ही त्याग देना॥ १॥

अनेकविघ्नान्तक वक्रतुण्ड
स्वसंज्ञवासिंश्च चतुर्भुजेति।
कवीश देवान्तकनाशकारिन्
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥ २ ॥
महेशसूनो गजदैत्यशत्रो
वरेण्यसूनो विकट त्रिनेत्र।
परेश पृथ्वीधर एकदन्त
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥ ३ ॥
प्रमोद मोदेति नरान्तकारे
षडूर्मिहन्तर्गजकर्ण ढुण्ढे।
द्वन्द्वाग्निसिन्धो स्थिरभावकारिन्
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥ ४ ॥
विनायक ज्ञानविघातशत्रो
पराशरस्यात्मज विष्णुपुत्र।

जो हे अनेकविघ्नान्तक! वक्रतुण्ड! स्वानन्दलोकवासिन्! चतुर्भुज! कवीश! हे देवान्तकनाशकारिन्!—इस प्रकार उच्चारण करते हों, उनसे अत्यन्त डरे रहकर उन्हें छोड़ देना (उन्हें पकड़कर लानेकी चेष्टा न करना) ॥ २ ॥

जो हे महेशनन्दन! गजदैत्यशत्रो! वरेण्यपुत्र! विकट! त्रिनेत्र! परेश! पृथ्वीधर! एकदन्त!—इस प्रकार उच्चारण करते हों, उनसे भयभीत रहकर उन्हें दूरसे त्याग देना ॥ ३ ॥

हे प्रमोद! मोद! नरान्तकारे! षडूर्मिहन्तः! गजकर्ण! ढुण्ढे! द्वन्द्वाग्नि-सिन्धो! स्थिरभावकारिन्!—ऐसा उच्चारण करनेवाले व्यक्तियोंको उनसे डरते हुए दूरसे ही छोड़ देना ॥ ४ ॥

हे विनायक! ज्ञानविघातशत्रो! पराशरात्मज! विष्णुपुत्र! अनादि-

अनादिपूज्याखुग सर्वपूज्य
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥ ५ ॥
वैरिञ्च्य लम्बोदर धूम्रवर्ण
मयूरपालेति मयूरवाहिन्।
सुरासुरैः सेवितपादपद्म
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥ ६ ॥
करिन् महाखुध्वज शूर्पकर्ण
शिवाज सिंहस्थ अनन्तवाह।
दयौघ विघ्नेश्वर शेषनाभे
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥ ७ ॥
अणोरणीयो महतो महीयो
रवीज्य योगेशज ज्येष्ठराज।
निधीश मन्त्रेश च शेषपुत्र
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥ ८ ॥

पूज्य! आखुग (मूषकवाहन)! सर्वपूज्य!—इस प्रकार उच्चारण करनेवालोंको भयभीत होकर छोड़ देना ॥ ५ ॥

हे विरंचिनन्दन! लम्बोदर! धूम्रवर्ण! मयूरपाल! मयूरवाहन! सुरासुरसेवितपादपद्म!—ऐसा उच्चारण करनेवाले व्यक्तियोंको उनसे भय मानकर त्याग देना ॥ ६ ॥

हे करिन् (गजस्वरूप)! महाखुध्वज! शूर्पकर्ण! शिव! अज! सिंहवाहन! अनन्तवाह! दयासिन्धो! विघ्नेश्वर! शेषनाभे!—ऐसा उच्चारण करनेवाले व्यक्तियोंको दूरसे ही त्याग देना और उनसे अत्यन्त भयभीत रहना ॥ ७ ॥

हे सूक्ष्मसे भी अत्यन्त सूक्ष्म और महान्‌से भी अत्यन्त महान्! रवीज्य (रविपूज्य)! योगेशज! ज्येष्ठराज! निधीश! मन्त्रेश! हे शेषपुत्र!—ऐसा उच्चारण करनेवाले व्यक्तियोंको त्याग देना और उनसे अत्यन्त भयभीत रहना ॥ ८ ॥

वरप्रदातरदितेश्च सूनो
परात्परज्ञानद तारवक्त्र।
गुहाग्रज ब्रह्मप पार्श्वपुत्र
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः॥ ९ ॥
सिन्धोश्च शत्रो परशुप्रपाणे
शमीशपुष्पप्रिय विघ्नहारिन्।
दूर्वाङ्कुरैरर्चित देवदेव
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः॥ १० ॥
धियः प्रदातश्च शमीप्रियेति
सुसिद्धिदातश्च सुशान्तिदातः।
अमेयमायामितविक्रमेति
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः॥ ११ ॥
द्विधाचतुर्थीप्रिय कश्यपार्च्य
धनप्रद ज्ञानपदप्रकाश।

हे वरप्रदाता! अदितिनन्दन! परात्परज्ञानद! तारकवक्त्र! गुहाग्रज! ब्रह्मप! पार्श्वपुत्र!—ऐसा उच्चारण करनेवालोंको छोड़ देना और उनसे डरते रहना॥ ९॥

हे सिन्धुशत्रो! परशुप्रपाणे! शमीशपुष्पप्रिय! विघ्नहारिन्! दूर्वांकुरपूजित! देवदेव!—ऐसा कहनेवालोंको दूरसे ही त्याग देना और उनसे डरते रहना॥ १०॥

हे बुद्धिप्रद! शमीप्रिय! सुसिद्धिदायक! सुशान्तिप्रदायक! अमेयमाय! अमितविक्रम!—ऐसा कहनेवालोंको दूरसे ही त्याग देना और उनसे डरते रहना॥ ११॥

हे शुक्ल-कृष्ण-द्विविध-चतुर्थीप्रिय! कश्यपपूज्य! धनप्रदायक!

चिन्तामणे चित्तविहारकारिन्
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥ १२ ॥
यमस्य शत्रो अभिमानशत्रो
विधूद्भवारे कपिलस्य सूनो।
विदेह स्वानन्द अयोगयोग
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥ १३ ॥
गणस्य शत्रो कमलस्य शत्रो
समस्तभावज्ञ च भालचन्द्र।
अनादिमध्यान्त भयप्रदारिन्
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥ १४ ॥
विभो जगद्रूप गणेश भूमन्
पुष्टेः पते आखुगतेऽतिबोध।

ज्ञानपदप्रकाश! चिन्तामणे! चित्तविहारकारिन्!—ऐसा जो उच्चारण करते हों, उनको दूरसे ही त्याग देना और उनसे सदा डरते रहना॥ १२॥

हे यमशत्रु! अभिमानशत्रु! विधूद्भवारे (कामनाशन)! कपिलपुत्र! विदेह! स्वानन्दस्वरूप! अयोगयोग गणेश!—ऐसा उच्चारण करनेवाले व्यक्तियोंको त्याग देना और उनसे डरते रहना॥ १३॥

हे दैत्यगण एवं कमलासुरके शत्रु! समस्त भावोंके ज्ञाता! भालचन्द्र गणेश! आदि, मध्य और अन्तसे रहित! भयका नाश करनेवाले!—ऐसा कहनेवाले व्यक्तियोंको त्याग देना और उनसे डरते रहना॥ १४॥

हे विभो! जगत्स्वरूप! गणेश! भूमन्! पुष्टिपते! आखुगते! अतिबोध!

कर्तश्च पातश्च तु संहरेति
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः॥ १५॥
इदमष्टोत्तरशतं नाम्नां तस्य पठन्ति ये।
शृण्वन्ति तेषु वै भीताः कुरुध्वं मा प्रवेशनम्॥ १६॥
भुक्तिमुक्तिप्रदं ढुण्ढेर्धनधान्यप्रवर्धनम्।
ब्रह्मभूतकरं स्तोत्रं जपन्तं नित्यमादरात्॥ १७॥
यत्र कुत्र गणेशस्य चिह्नयुक्तानि वै भटाः।
धामानि तत्र कुरुत सम्भीता मा प्रवेशनम्॥ १८॥

॥ इति श्रीगणेशाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

स्रष्टा, पालक और संहारक!—ऐसा उच्चारण करनेवाले व्यक्तियोंको त्याग देना और उनसे डरते रहना॥ १५॥

जो गणेशके इन एक सौ आठ नामोंका पाठ करते हों, सुनते हों, उनके भीतर कभी प्रवेश न करना और उनसे भयभीत रहना॥ १६॥

ढुण्ढिराज गणेशका यह स्तोत्र भोग और मोक्ष देनेवाला तथा धन-धान्यकी वृद्धि करनेवाला है। इतना ही नहीं, यह ब्रह्मभावकी प्राप्ति करानेवाला भी है। हे यमदूतो! जो लोग प्रतिदिन आदरपूर्वक इस स्तोत्रका जप करते हों, उन्हें त्याग देना। जहाँ-कहीं भी गणेशचिह्नसे युक्त भवन हों, तुमलोग भयभीत रहकर कदापि उसमें प्रवेश न करना॥ १७-१८॥

॥ इस प्रकार श्रीगणेशाष्टोत्तरशतनामस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणपति-अष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्

ध्यान

ओंकारसंनिभमिभाननमिन्दुभालं

मुक्ताग्रबिन्दुममलद्युतिमेकदन्तम् ।

लम्बोदरं कलचतुर्भुजमादिदेवं

ध्यायेन्महागणपतिं मतिसिद्धिकान्तम् ॥

ओंकार-सदृश, हाथीके-से मुखवाले तथा जिनके ललाटपर चन्द्रमा और बिन्दुतुल्य मुक्ता विराजमान है, जो बड़े तेजस्वी और एक दाँतवाले हैं, जिनका उदर विशाल है, जिनकी चार सुन्दर भुजाएँ हैं, उन बुद्धि और सिद्धिके स्वामी आदिदेव गणेशजीका हम ध्यान करते हैं।

ॐ गणेश्वरो गणक्रीडो महागणपतिस्तथा।
विश्वकर्ता विश्वमुखो दुर्जयो धूर्जयो जयः ॥ १ ॥
सुरूपः सर्वनेत्राधिवासो वीरासनाश्रयः।
योगाधिपस्तारकस्थः पुरुषो गजकर्णकः ॥ २ ॥

ॐ १. **गणेश्वर**=गणोंके स्वामी, २. **गणक्रीड**=गणोंके साथ क्रीड़ा करनेवाले, ३. **महागणपति**, ४. **विश्वकर्ता**=सबको उत्पन्न करनेवाले, ५. **विश्वमुख**=सभी ओर मुखवाले, ६. **दुर्जय**=अजेय, ७. **धूर्जय**=जीतनेको उत्सुक, ८. **जय** ॥ १ ॥

९. **सुरूप**, १०. **सर्वनेत्राधिवास**=सबकी आँखोंमें बसनेवाले, ११. **वीरासनाश्रय**=वीरासनमें विराजमान, १२. **योगाधिप**=योगके अधिष्ठाता, १३. **तारकस्थ**=तारकमन्त्रमें निवास करनेवाले, १४. **पुरुष**, १५. **गजकर्णक**=हाथीके कानवाले ॥ २ ॥

चित्राङ्गः श्यामदशनो भालचन्द्रश्चतुर्भुजः ।
शम्भुतेजा यज्ञकायः सर्वात्मा सामबृंहितः ॥ ३ ॥
कुलाचलांसो व्योमनाभिः कल्पद्रुमवनालयः ।
निम्ननाभिः स्थूलकुक्षिः पीनवक्षा बृहद्भुजः ॥ ४ ॥
पीनस्कन्धः कम्बुकण्ठो लम्बोष्ठो लम्बनासिकः ।
सर्वावयवसम्पूर्णः सर्वलक्षणलक्षितः ॥ ५ ॥
इक्षुचापधरः शूली कान्तिकन्दलिताश्रयः ।
अक्षमालाधरो ज्ञानमुद्रावान् विजयावहः ॥ ६ ॥

---

१६. **चित्रांग**=दीप्तिमान् अंगोंवाले, १७. **श्यामदशन**=श्याम आभायुक्त दाँतवाले, १८. **भालचन्द्र**=मस्तकपर चन्द्रकला धारण करनेवाले, १९. **चतुर्भुज**=चार भुजाओंवाले, २०. **शम्भुतेज**=शम्भुके तेजसे उत्पन्न, २१. **यज्ञकाय**=यज्ञस्वरूप, २२. **सर्वात्मा**=सबके आत्मस्वरूप, २३. **साम-बृंहित**=सामवेदमें गाये गये ॥ ३ ॥

२४. **कुलाचलांस**=कुलपर्वतोंके समान कन्धोंवाले, २५. **व्योमनाभि**=आकाशकी भाँति नाभिवाले, २६. **कल्पद्रुमवनालय**=कल्पवृक्षके वनमें रहनेवाले, २७. **निम्ननाभि**=गहरी नाभिवाले, २८. **स्थूलकुक्षि**=मोटे पेटवाले, २९. **पीनवक्षा**=चौड़ी छातीवाले, ३०. **बृहद्भुज**=लम्बी भुजाओंवाले ॥ ४ ॥

३१. **पीनस्कन्ध**=चौड़े कन्धोंवाले, ३२. **कम्बुकण्ठ**=शंखके समान कण्ठवाले, ३३. **लम्बोष्ठ**=बड़े-बड़े ओठवाले, ३४. **लम्बनासिक**=लम्बी नाकवाले, ३५. **सर्वावयवसम्पूर्ण**=सभी अंगोंसे परिपूर्ण, ३६. **सर्वलक्षण-लक्षित**=सभी शुभ लक्षणोंसे युक्त ॥ ५ ॥

३७. **इक्षुचापधर**=ईखके धनुषको धारण करनेवाले, ३८. **शूली**=शूल धारण करनेवाले, ३९. **कान्तिकन्दलिताश्रय**=शोभायमान गण्डस्थलसे युक्त, ४०. **अक्षमालाधर**=अक्षमाला धारण करनेवाले, ४१. **ज्ञानमुद्रावान्**=ज्ञानमुद्रामें स्थित, ४२. **विजयावह**=विजयप्रदाता ॥ ६ ॥

कामिनीकामनाकाममालिनीकेलिलालितः ।
अमोघसिद्धिराधार आधाराधेयवर्जितः ॥ ७ ॥
इन्दीवरदलश्याम इन्दुमण्डलनिर्मलः ।
कर्मसाक्षी कर्मकर्ता कर्माकर्मफलप्रदः ॥ ८ ॥
कमण्डलुधरः कल्पः कपर्दी कटिसूत्रभृत्।
कारुण्यदेहः कपिलो गुह्यागमनिरूपितः ॥ ९ ॥
गुहाशयो गुहाब्धिस्थो घटकुम्भो घटोदरः ।
पूर्णानन्दः परानन्दो धनदो धरणीधरः ॥ १० ॥

४३. **कामिनीकामनाकाममालिनीकेलिलालित**=कामिनियोंकी कामना-रूपी कामकलाकी क्रीडासे प्रसन्न होनेवाले, ४४. **अमोघसिद्धि**=अमोघ सिद्धिस्वरूप, ४५. **आधार**=आधारस्वरूप, ४६. **आधाराधेयवर्जित**=जिनका कोई आधार नहीं और जो किसीपर आश्रित नहीं ॥ ७ ॥

४७. **इन्दीवरदलश्याम**=नीलकमलपत्रके समान श्याम वर्णवाले, ४८. **इन्दुमण्डलनिर्मल**=चन्द्रमण्डलके समान निर्मल, ४९. **कर्मसाक्षी**=सभी कर्मोंके साक्षी, ५०. **कर्मकर्ता**=सभी कर्मोंकी मूलशक्ति, ५१. **कर्माकर्मफलप्रद** =कर्म और अकर्म (पाप)-का फल देनेवाले ॥ ८ ॥

५२. **कमण्डलुधर**=कमण्डलु धारण करनेवाले, ५३. **कल्प**=नियमके स्वरूप, नियामक, ५४. **कपर्दी**=केशसज्जायुक्त, ५५. **कटिसूत्रभृत्**=कमरमें मेखला धारण किये हुए, ५६. **कारुण्यदेह**=करुणामूर्ति, ५७. **कपिल**=रक्त आभायुक्त, ५८. **गुह्यागमनिरूपित**=रहस्यमय तन्त्रोंमें वर्णित ॥ ९ ॥

५९. **गुहाशय**=(भक्तोंके) हृदयमें विराजमान, ६०. **गुहाब्धिस्थ**= हृदयसमुद्रमें स्थित, ६१. **घटकुम्भ**=घड़ेके समान गण्डस्थलवाले, ६२. **घटोदर**=घड़ेके समान पेटवाले, ६३. **पूर्णानन्द**=पूर्णानन्दस्वरूप, ६४. **परानन्द**=आनन्दकी पराकाष्ठा, ६५. **धनद**=समृद्धिप्रदाता, ६६. **धरणीधर**=पृथ्वीको धारण करनेवाले ॥ १० ॥

६७. **बृहत्तम**=सबसे बड़े, ६८. **ब्रह्मपर**=परब्रह्म, ६९. **ब्रह्मण्य**=ब्रह्मानुवर्ती,

बृहत्तमो ब्रह्मपरो ब्रह्मण्यो ब्रह्मवित्प्रियः।
भव्यो भूतालयो भोगदाता चैव महामनाः॥ ११॥
वरेण्यो वामदेवश्च वन्द्यो वज्रनिवारणः।
विश्वकर्ता विश्वचक्षुर्हवनं हव्यकव्यभुक्॥ १२॥
स्वतन्त्रः सत्यसङ्कल्पस्तथा सौभाग्यवर्धनः।
कीर्तिदः शोककहारी च त्रिवर्गफलदायकः॥ १३॥
चतुर्बाहुश्चतुर्दन्तश्चतुर्थीतिथिसम्भवः ।
सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्॥ १४॥

---

७०. **ब्रह्मवित्प्रिय**=ब्रह्मज्ञानियोंके प्रिय, ७१. **भव्य**=सुन्दर, ७२. **भूतालय**=भूतसमूहके आश्रय, ७३. **भोगदाता**=भोग प्रदान करनेवाले, ७४. **महामना**=जिनका हृदय विशाल है॥ ११॥

७५. **वरेण्य**=श्रेष्ठ, ७६. **वामदेव**=सुन्दर स्वरूपवाले, ७७. **वन्द्य**=वन्दन करनेयोग्य, ७८. **वज्रनिवारण**=क्लेशोंसे रक्षा करनेवाले, ७९. **विश्वकर्ता**=सर्वस्रष्टा, ८०. **विश्वचक्षु**=सब कुछ देखनेवाले, सर्वद्रष्टा, ८१. **हवन**=यज्ञस्वरूप, ८२. **हव्यकव्यभुक्**=हव्य और कव्यके भोक्ता॥ १२॥

८३. **स्वतन्त्र**=स्वाधीन, ८४. **सत्यसंकल्प**=अमोघ संकल्पवान्, ८५. **सौभाग्यवर्धन**=सौभाग्य बढ़ानेवाले, ८६. **कीर्तिद**=कीर्तिप्रदाता, ८७. **शोकहारी**=शोक मिटानेवाले, ८८. **त्रिवर्गफलदायक**=धर्म-अर्थ-कामरूप—तीनों पुरुषार्थोंके प्रदाता॥ १३॥

८९. **चतुर्बाहु**=चार भुजाओंवाले, ९०. **चतुर्दन्त**=चार दाँतोंवाले, ९१. **चतुर्थीतिथिसम्भव**=चतुर्थी तिथिको अवतार ग्रहण करनेवाले, ९२. **सहस्रशीर्षा पुरुष**=अनन्तरूपमें प्रकट विराट् पुरुष, ९३. **सहस्राक्ष**=अनन्तदृष्टिसम्पन्न, ९४. **सहस्रपात्**=अनन्तगतिसम्पन्न॥ १४॥

कामरूपः कामगतिर्द्विरदो द्वीपरक्षकः।
क्षेत्राधिपः क्षमाभर्ता लयस्थो लड्डुकप्रियः॥ १५॥
प्रतिवादिमुखस्तम्भो दुष्टचित्तप्रसादनः।
भगवान् भक्तिसुलभो याज्ञिको याजकप्रियः॥ १६॥
इत्येवं देवदेवस्य गणराजस्य धीमतः।
शतमष्टोत्तरं नाम्नां सारभूतं प्रकीर्तितम्॥ १७॥
सहस्रनाम्नामाकृष्य मया प्रोक्तं मनोहरम्।
ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्थाय स्मृत्वा देवं गणेश्वरम्।
पठेत्स्तोत्रमिदं भक्त्या गणराजः प्रसीदति॥ १८॥

॥ इति श्रीगणेशपुराणे उपासनाखण्डे श्रीगणपत्यष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

---

९५. **कामरूप**=इच्छानुसार रूप ग्रहण करनेवाले, ९६. **कामगति**=इच्छानुसार गतिवाले, ९७. **द्विरद**=दो दाँतवाले, ९८. **द्वीपरक्षक**=सप्तद्वीपा धरित्रीके रक्षक, ९९. **क्षेत्राधिप**=समस्त क्षेत्रके अधिष्ठाता, १००. **क्षमा-भर्ता**=क्षमा धारण करनेवाले, १०१. **लयस्थ**=गानप्रिय, १०२. **लड्डुकप्रिय**=जिन्हें लड्डू प्रिय हैं॥ १५॥

१०३. **प्रतिवादिमुखस्तम्भ**=विरोधीका मुँह बन्द कर देनेवाले, १०४. **दुष्टचित्तप्रसादन**=चित्तदोषोंको मिटानेवाले, १०५. **भगवान्**=अनन्त षट् ऐश्वर्यसम्पन्न, १०६. **भक्तिसुलभ**=भक्तिद्वारा शीघ्र प्राप्त होनेवाले, १०७. **याज्ञिक**=यज्ञप्रक्रियाके पूर्ण ज्ञाता, १०८. **याजकप्रिय**=जिन्हें यज्ञकर्ता प्रिय हैं॥ १६॥

देवदेव महापति गणपतिके इन एक सौ आठ सारभूत नामोंका वर्णन किया गया। उनके सहस्रनामोंसे इन एक सौ आठ सुन्दर नामोंका मैंने चयनकर संग्रह किया है, ब्राह्ममुहूर्तमें उठकर भगवान् गणपतिका स्मरण करते हुए जो भक्तिपूर्वक इस स्तोत्रका पाठ करता है, उसपर गणराजप्रभु प्रसन्न होते हैं॥ १७-१८॥

॥ इस प्रकार श्रीगणेशपुराणके अन्तर्गत उपासनाखण्डमें वर्णित श्रीगणपति-अष्टोत्तरशतनामस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणेशनीराजनम्

विघ्नध्वान्तविनाशनसुप्रभमुखकमलं
दिव्यज्ञानानन्दितमेकामलरदनम्।
मोदकमोदं देवं जय मङ्गलसदनं
वाञ्छितफलदं वन्दे स्तम्बेरमवदनम्॥
जय देव जय देव जय मङ्गलमूर्ते
दीपार्तीमङ्गीकुरु पूजां सुमुहूर्ते॥ १॥
भ्रमदलिकुम्भं शुण्डास्तम्भितमददम्भं
सिन्दूरारुणशोभं कृतरिपुसंक्षोभम्।
शङ्करवंशस्तम्भं निर्जितमददम्भं
व्यापितसकलारम्भं वन्दे ब्रह्मनिभम्॥ २॥

जिनका उत्तम प्रभासे विभासमान मुखारविन्द विघ्नरूपी अन्धकारका विनाश करनेवाला है; जो दिव्य ज्ञानजनित आनन्दमें मग्न रहते हैं; जिनका एक ही निर्मल दन्त प्रकाशमान है; जो मोदक (मिष्टान्न)-से मुदित होनेवाले देवता हैं; विजय और मंगलके आवासस्थान हैं; जिनका मुख हाथीके मुखके सदृश है तथा जो मनोवांछित फल देनेवाले हैं, उन श्रीगणेशकी मैं वन्दना करता हूँ हे मंगलमूर्ति देवता! आपकी जय हो, जय हो, जय हो। शुभ मुहूर्तमें आपकी पूजा की गयी है; इसे तथा इस दीपमयी आरतीको आप स्वीकार करें। जय देव! जय देव!॥ १॥

जिनके कुम्भस्थलपर भ्रमरोंकी भीड़ मँड़रा रही है; जिन्होंने शुण्डदण्डके प्रहारसे मदासुरके दम्भको स्तम्भित कर दिया था; जिनके अंगोंपर सिन्दूरकी अरुण शोभा फैल रही है; जिन्होंने शत्रुदलमें हलचल मचा दी थी; जो शंकरकुलके रक्षास्तम्भस्वरूप हैं; जिन्होंने मद एवं दम्भको पराजित कर दिया है; जो सम्पूर्ण कर्मोंके आरम्भमें प्रथमपूज्यके रूपमें व्याप्त हैं; उन ब्रह्मतुल्य महामहिम गणेशकी मैं वन्दना करता हूँ।

जय देव जय देव जय मङ्गलमूर्ते
दीपार्तीमङ्गीकुरु पूजां सुमुहूर्ते॥ २॥
वृन्दारकवृन्दैरपि वन्दितपदकमलं
कमलजकमलाधववर्णितगुणगणममलम्।
विद्यामण्डितदेहं पण्डितकुलपालं
शेषस्त्वामहमीडे सततं खलकालम्॥
जय देव जय देव जय मङ्गलमूर्ते
दीपार्तीमङ्गीकुरु पूजां सुमुहूर्ते॥ ३॥

॥ इति श्रीनागेशपण्डितकृतं श्रीगणेशनीराजनं सम्पूर्णम्॥

हे मंगलमूर्ति देवता! आपकी जय हो, जय हो, जय हो। शुभ मुहूर्तमें आपकी पूजा की गयी है; इसे तथा इस दीपमयी आरतीको आप स्वीकार करें। जय देव! जय देव!॥ २॥

देवताओंके समुदाय भी जिनके चरणारविन्दोंकी वन्दना करते हैं; ब्रह्मा और विष्णु भी जिनके गुणोंका बखान करते हैं; जिनका स्वरूप निर्मल है; जिनकी देह विद्यासे मण्डित है; जो पण्डितकुलके पालक हैं तथा दुष्टोंके लिये कालरूप हैं, उन आप गणपतिकी मैं नागेश निरन्तर वन्दना करता हूँ। हे मंगलमूर्ति देवता! आपकी जय हो, जय हो, जय हो। शुभ मुहूर्तमें आपकी पूजा की गयी है; इसे तथा इस दीपमयी आरतीको आप स्वीकार करें। जय देव! जय देव!॥ ३॥

॥ इस प्रकार श्रीनागेशपण्डितकृत श्रीगणेशनीराजन सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणेशनीराजनम्

जय देव जय देव गजमुख सुखहेतो।
नेतर्विघ्नगणानां जाड्यार्णवसेतो॥ ध्रुवपदम् ॥
येन भवदुपायनतां नीता नवदूर्वा।
विद्यासम्पत्कीर्तिस्तेनाप्तापूर्वा ।
मुक्तिर्लभ्या सुखतस्तव नित्यापूर्वा।
धार्या जगतः स्थितये भूमौ दिवि धूर्वा॥ जय०॥ १॥
प्रथमनमस्कृतिभाक्त्वं तव लोकप्रथितम्।
दृष्टं सद्व्यवहारे गुरुभिरपि च कथितम्।
यः कश्चन विमुखस्त्वयि निजसिद्धेः पथि तम्।
विविधा विघ्ना भगवन् कुर्वन्ति व्यथितम्॥ जय०॥ २॥

हे सुखकी प्राप्तिके हेतुभूत गजाननदेव! आपकी जय हो, जय हो। हे विघ्नगणोंके नायक तथा जडता (अज्ञान)-रूपी सागरसे पार होनेके लिये सेतुरूप विनायकदेव! आपकी जय हो। जिस पुण्यात्माने आपको नूतन दूर्वादलका उपहार अर्पित किया, उसने अपूर्व विद्या, सम्पत्ति एवं कीर्ति प्राप्त कर ली। आपकी कृपासे नित्य, अपूर्व मुक्ति अनायास प्राप्त की जा सकती है। भूतलपर अथवा स्वर्गलोकमें सर्वत्र सम्पूर्ण जगत्‌की रक्षाके लिये दायित्वका भार आप ही वहन करते हैं। हे देव! आपकी जय हो!॥ १॥

हे भगवन्! आपके सबसे प्रथम नमस्कार-भाजन (वन्दनीय) होनेकी बात लोकमें प्रसिद्ध है। यह परम्परागत सद्व्यवहारमें भी देखी गयी है तथा गुरुजनोंद्वारा भी बतायी गयी है। जो कोई भी आपसे विमुख हुआ, उसे उसकी साधनाके मार्गपर नाना प्रकारके विघ्न आकर पीड़ा (बाधा) देते हैं। हे देव! आपकी जय हो॥ २॥

बालं सकृदनुसरति त्वद्दृष्टिश्चेत्ता।
मनुराशीनिव दासीर्विद्याः स हि वेत्ता।
पविपाणिरिव परं परपक्षाणां भेत्ता।
भवति मयूरोऽहेरिव मोहस्यच्छेत्ता॥ जय०॥ ३॥

॥ इति कविवरमोरोपन्तकृतं श्रीगणेशनीराजनं सम्पूर्णम्॥

यदि आपकी कृपा-दृष्टि एक बार भी बालकपर पड़ जाती है तो वह मन्त्रराशि-तुल्य उन विद्याओंको इस प्रकार प्राप्त कर लेता है, मानो वे उसकी दासियाँ हों। जैसे वज्रपाणि इन्द्रने पर्वतोंकी पाँखें काट डाली थीं, उसी प्रकार वह परपक्ष (वादीके मत)-का खण्डन करनेमें समर्थ होता है; तथा जैसे मयूर सर्पको विदीर्ण कर देता है, उसी प्रकार वह विद्वान् बालक मोहका छेदन करनेवाला होता है। हे देव! आपकी जय हो॥ ३॥

॥ इस प्रकार कविवर मोरोपन्तकृत श्रीगणेशनीराजन सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीगणेशजीके विभिन्न मन्त्र

- श्रीमहागणपतिस्वरूप प्रणव-मन्त्र—'**ॐ**'।
- श्रीमहागणपतिका प्रणव-सम्पुटित बीज-मन्त्र—'**ॐ गं ॐ**'।
- सबीज गणपति-मन्त्र—'**गं गणपतये नमः**'।
- प्रणवादि सबीज गणपति-मन्त्र '**ॐ गं गणपतये नमः**'।
- नाम-मन्त्र—

  (क) **ॐ नमो भगवते गजाननाय**। (द्वादशाक्षर)

  (ख) **श्रीगणेशाय नमः**। (सप्ताक्षर)

  (ग) **ॐ श्रीगणेशाय नमः**। (अष्टाक्षर)
- उच्छिष्टगणपति-नवार्णमन्त्र—'**ॐ हस्ति पिशाचि लिखे स्वाहा**'।
- एकोनविंशत्यक्षरोच्छिष्टगणपतिमन्त्र—'**ॐ नम उच्छिष्टगणेशाय हस्ति पिशाचि लिखे स्वाहा**।'

श्रीगणेशापराधक्षमापनस्तोत्रम्

सुमुखो मखभुङ्मुखार्चितः सुखवृद्ध्यै निखिलार्तिशान्तये।
अखिलश्रुतिशीर्षवर्णितः सकलाद्यः स सदास्तु मे हृदि॥ १॥
प्रणवाकृतिमस्तके नयः प्रणवो वेदमुखावसानयोः।
अयमेव विभाति सुस्फुटं ह्यवतारः प्रथमः परस्य सः॥ २॥
प्रथमं गुणनायको बभौ त्रिगुणानां सुनियन्त्रणाय यः।
जगदुद्भवपालनात्ययेष्वजविष्ण्वीशसुरप्रणोदकः ॥ ३॥
विधिविष्णुहरेन्द्रदेवतादिगणानां परिपालनाद्विभुः।
अपि चेन्द्रियपुञ्जचालनाद् गणनाथः प्रथितोऽर्थतः स्फुटम्॥ ४॥
अणिमामुखसिद्धिनायको भजतः साधयतीष्टकामनाः।
अपवर्गमपि प्रभुर्धियो निजदासस्य तमो विहृत्य यः॥ ५॥

सुन्दर मुखवाले, यज्ञभोक्ता, आदिपूजित, समस्त श्रुतियोंमें प्रधानरूपसे वर्णित तथा सबके आदिदेव वे गणेशजी सुखकी वृद्धिके लिये एवं सम्पूर्ण दुःखोंके शमनके लिये सदा मेरे हृदयमें विराजमान रहें॥ १॥

प्रणवके आकारवाले मस्तकपर मेरा नमस्कार है। वेदोंके आदि तथा अन्तमें प्रणवरूपमें ये गणेशजी ही स्पष्टरूपसे सुशोभित हैं; क्योंकि वे ही परब्रह्मके प्रथम अवतार हैं॥ २॥

सर्वप्रथम जो तीनों गुणोंको अच्छी तरहसे नियन्त्रित करनेके लिये गुणनायकके रूपमें सुशोभित हुए; ये जगत्‌के सृजन, पालन तथा संहारकार्यमें ब्रह्मा-विष्णु-महेश आदि देवोंके प्रेरक हैं॥ ३॥

ब्रह्मा, विष्णु, महेश, इन्द्र आदि देवताओंके परिपालनके कारण ये सबके स्वामी हैं तथा इन्द्रियोंका संचालन करनेके कारण श्रीगणेशजी नामसे स्पष्टरूपसे विख्यात हैं॥ ४॥

जो अणिमा आदि सिद्धियोंके नायक श्रीगणेशजी भजन करनेवालेकी अभीष्ट कामनाओंको सिद्ध करते हैं, अपने दासके अज्ञानान्धकारका नाश करके वे प्रभु श्रीगणेशजी उन्हें बुद्धि तथा मोक्ष प्रदान करते हैं॥ ५॥

जननीजनकसुखप्रदो निखलानिष्टहरोऽखिलेष्टदः।
गणनायक एव मामवेद्रदपाशाङ्कुशमोदकान् दधत्॥ ६॥
शरणं करुणार्णवः स मे शरणं रक्ततनुश्चतुर्भुजः।
शरणं भजकान्तरायहा शरणं मङ्गलमूर्तिरस्तु मे॥ ७॥
सततं गणनायकं भजे नवनीताधिककोमलान्तरम्।
भजनाद्भवभीतिभञ्जनं स्मरणाद्विघ्ननिवारणक्षमम्॥ ८॥
अरुणारुणवर्णराजितं तरुणादित्यसमप्रभं प्रभुम्।
वरुणायुधमोदकावहं करुणामूर्तिमहं प्रणौमि तम्॥ ९॥
क्व नु मूषकवाहनं प्रभुं मृगये त्वज्ञतमोऽवनीतले।
विबुधास्तु पितामहादयस्त्रिषु लोकेष्वपि यं न लेभिरे॥ १०॥
शरणागतपालनोत्सुकं परमानन्दमजं गणेश्वरम्।
वरदानपटुं कृपानिधिं हृदयाब्जे निदधामि सर्वदा॥ ११॥

माता-पिताको सुख देनेवाले, सम्पूर्ण विघ्न दूर करनेवाले, सम्पूर्ण कामनाएँ पूर्ण करनेवाले एवं दन्त-पाश-अंकुश-मोदक धारण करनेवाले गणनायक मेरी रक्षा करें॥ ६॥

लोगोंके आश्रयस्वरूप, करुणासागर, रक्तशरीरवाले तथा चतुर्भुज श्रीगणेशजी मेरी शरण बनें; भजन करनेवालेके विघ्नका नाश करनेवाले वे मेरी शरण बनें; मंगलमूर्ति वे गणेशजी मेरी शरण बनें॥ ७॥

नवनीतसे भी अधिक कोमल हृदयवाले, भजनमात्रसे सांसारिक भयका नाश करनेवाले तथा स्मरणमात्रसे विघ्न दूर करनेमें समर्थ गणनायकका मैं निरन्तर भजन करता हूँ॥ ८॥

मैं उदयकालीन सूर्यके समान वर्णसे सुशोभित, मध्याह्नकालीन सूर्यके समान प्रभावाले तथा वरुणायुध (पाश)-मोदक धारण करनेवाले उन करुणामूर्ति प्रभुको प्रणाम करता हूँ॥ ९॥

ब्रह्मा आदि देवता तीनों लोकोंमें भी जिन्हें प्राप्त नहीं कर सके, उन मूषकवाहन प्रभुको परम अज्ञानी मैं इस पृथ्वीतलपर कहाँ खोज रहा हूँ?॥ १०॥

शरणमें आये हुए लोगोंकी रक्षामें तत्पर, परमानन्दस्वरूप, अजन्मा, गणोंके स्वामी, वर प्रदान करनेमें दक्ष तथा कृपाके निधान गणेशजीको मैं सर्वदा [अपने] हृदयकमलमें धारण करता हूँ॥ ११॥

सुमुखे विमुखे सति प्रभौ न महेन्द्रादपि रक्षणं कदा।
त्वयि हस्तिमुखे प्रसन्नताऽभिमुखेनापि यमाद्भयं भवेत्॥ १२॥
सुतरां हि जडोऽपि पण्डितः खलु मूकोऽप्यतिवाक्पतिर्भवेत्।
गणराजदयार्द्रवीक्षणादपि चाज्ञः सकलज्ञतामियात्॥ १३॥
अमृतं तु विषं विषं सुधा परमाणुस्तु नगो नगोऽप्यणुः।
कुलिशं तु तृणं तृणं पविर्गणनाथाशु तवेच्छया भवेत्॥ १४॥
क्व गतोऽसि विभो विहाय मां ननु सर्वज्ञ न वेत्सि मां कथम्।
किमु पश्यसि विश्वदृङ् न मां न दया किमपि ते दयानिधे॥ १५॥
अयि दीनदयासरित्पते मयि नैष्ठूर्यमिदं कुतः कृतम्।
निजभक्तिसुधालवोऽपि यन्न हि दत्तो जनिमृत्युमोचकः॥ १६॥
नितरां विषयोपभोगतः क्षपितं त्वायुरमूल्यमेनसा।
अहहाज्ञतमस्य साहसं सहनीयं कृपया त्वया विभो॥ १७॥

सुन्दर मुखवाले आप प्रभुके प्रतिकूल होनेपर देवराज इन्द्र भी रक्षा नहीं कर सकते; किंतु आप गजाननके प्रसन्नतासे युक्त हो जानेपर [भक्त]-को यमसे भी भय नहीं रह जाता है॥ १२॥

श्रीगणेशजीकी दयार्द्र दृष्टिसे महामूर्ख भी पण्डित हो जाता है, गूँगा भी महान् वक्ता हो जाता है और अज्ञानी भी सर्वज्ञ हो जाता है॥ १३॥

हे गणनाथ! आपकी इच्छासे अमृत भी विष हो जाता है, विष भी अमृत हो जाता है, परमाणु भी पर्वत हो जाता है, पर्वत भी परमाणु हो जाता है, वज्र भी तृण हो जाता है और तृण भी वज्र हो जाता है॥ १४॥

हे विभो! मुझे छोड़कर आप कहाँ चले गये हैं? हे सर्वज्ञ! क्या आप मुझे नहीं जान रहे हैं? हे विश्वद्रष्टा! क्या आप मुझे नहीं देख रहे हैं? हे दयानिधे! क्या आपको जरा भी दया नहीं है?॥ १५॥

हे दीनदयासागर! आपने मेरे प्रति यह निष्ठुरता किसलिये की है, जो कि जन्म-मृत्युसे छुटकारा देनेवाले अपनी भक्तिका लेशमात्र भी मुझे प्रदान नहीं किया॥ १६॥

मैंने अत्यधिक विषयोपभोगसे तथा पापकर्मसे [अपनी] अमूल्य आयु व्यतीत कर दी; हे विभो! आप मुझ परम अज्ञानीके इस दुःसाहसको क्षमा करें॥ १७॥

भगवन्नहि तारकस्य ते वत मन्त्रस्य जपः कृतस्तथा।
न कदैकधियापि चिन्तनं तव मूर्तेस्तु मयातिपाप्मना॥ १८॥
भजनं न कृतं समर्चनं तव नामस्मरणं न दर्शनम्।
हवनं प्रियमोदकार्पणं नवदूर्वा न समर्पिता मया॥ १९॥
न च साधुसमागमः कृतस्तव भक्ताश्च मया न सत्कृताः।
द्विजभोजनमप्यकारि नो बत दौरात्म्यमिदं क्षमस्व मे॥ २०॥
न विधिं तव सेवनस्य वा न च जाने स्तवनं मनुं तथा।
करयुग्मशिरःसुयोजनं तव भूयाद् गणनाथ पूजनम्॥ २१॥
अथ का गणनाथ मे गतिर्न हि जाने पतितस्य भाविनी।
इति तप्ततनुं सदाव मामनुकम्पार्द्रकटाक्षवीक्षणैः॥ २२॥
इह दण्डधरस्य सङ्गमेऽखिलधैर्यच्यवने भयङ्करे।
अविता गणराज को नु मां तनुपातावसरे त्वया विना॥ २३॥

हे भगवन्! आश्चर्य है कि महापापी मैंने कभी आपके तारकमन्त्रका न तो जप किया और न तो एकाग्रमनसे आपके स्वरूपका चिन्तन किया॥ १८॥

मैंने आपका भजन तथा पूजन नहीं किया; आपका नामस्मरण, दर्शन तथा हवन नहीं किया; आपको प्रिय मोदक अर्पित नहीं किया; नूतन दूर्वादल समर्पित नहीं किया; मैंने सत्संग नहीं किया; आपके भक्तोंका सत्कार नहीं किया और ब्राह्मणभोजन नहीं कराया—यह खेदकी बात है, अतः आप मेरी धृष्टताको क्षमा करें॥ १९-२०॥

हे गणनाथ! मैं आपके पूजनकी विधि नहीं जानता हूँ और आपका स्तवन तथा मन्त्र भी नहीं जानता हूँ; मैं केवल अपने दोनों हाथोंको सिरपर जोड़ लेता हूँ—यही आपका पूजन हो जाय॥ २१॥

हे गणनाथ! मुझ पतितकी कौन-सी गति होनेवाली है, यह मैं नहीं जानता; अतः आप अपनी कृपासे, आर्द्र दृष्टिसे मुझ सन्तप्त शरीरवालेकी रक्षा कीजिये॥ २२॥

हे गणराज! इस लोकमें मेरे देहपात [मृत्यु]-के अवसरपर सम्पूर्ण धैर्यको नष्ट कर देनेवाले भयंकर यमराज-समागमके उपस्थित होनेपर आपके बिना मेरी रक्षा कौन करेगा॥ २३॥

वद कं भवतोऽन्यमिष्टदाच्छरणं यामि दयाघनादृते।
अवनाय भवाग्निभर्जितो गतिहीनः सुखलेशवर्जितः॥ २४॥
श्रुतिमृग्यपथस्य चिन्तनं किमु वाचोऽविषयस्य संस्तुतिम्।
किमु पूजनमप्यनाकृतेरसमर्थो रचयामि देवते॥ २५॥
किमु मद्विकलात्स्वसेवनं किमु रङ्कादुपचारवैभवम्।
जडवाङ्मतितो निजस्तुतिं गणनाथेच्छसि वा दयानिधे॥ २६॥
अधुनापि च किं दया न ते मम पापातिशयादितीश चेत्।
हृदये नवनीतकोमले न हि काठिन्यनिवेशसम्भवः॥ २७॥
व्यसनार्दितसेवकस्य मे प्रणतस्याशु गणेश पादयोः।
अभयप्रदहस्तपङ्कजं कृपया मूर्ध्नि कुरुष्व तावकम्॥ २८॥
जननी तनयस्य दृक्पथं मुहुरेति प्रसभं दयार्द्रधीः।
मम दृग्विषयस्तथैव भो गणनाथाशु भवानुकम्पया॥ २९॥

संसाररूपी अग्निसे दग्ध, गतिहीन तथा लेशमात्र सुखसे रहित मैं अपनी रक्षाके लिये वांछित फल प्रदान करनेवाले आप दयाघनके अतिरिक्त अन्य किसकी शरणमें जाऊँ॥ २४॥

हे देव! सामर्थ्यरहित मैं श्रुतियोंके द्वारा खोजे जानेयोग्य मार्गस्वरूप आपका चिन्तन कैसे कर सकता हूँ, वाणीके अविषयरूप आपकी स्तुति कैसे कर सकता हूँ और आप निराकारका पूजन भी कैसे कर सकता हूँ॥ २५॥

हे गणनाथ! हे दयानिधे! क्या आप मुझ व्याकुलसे अपने पूजनकी, मुझ रंकसे उपचारवैभवकी और वाणीसे जड मुझसे बुद्धिपूर्वक अपनी स्तुतिकी इच्छा रखते हैं?॥ २६॥

हे ईश! पापकी अधिकतासे युक्त मेरे ऊपर क्या आपको अब भी दया नहीं आती है; यदि ऐसा है तो नवनीतके समान कोमल हृदयमें तो कठोरताका प्रवेश सम्भव नहीं हो सकता है॥ २७॥

हे गणेश! आपके चरणोंमें प्रणत तथा व्यसनोंसे ग्रस्त मुझ सेवकके सिरपर आप अभय प्रदान करनेवाला अपना करकमल शीघ्र रख दीजिये॥ २८॥

हे गणनाथ! जैसे माता बार-बार अपने पुत्रके दृष्टिपथमें रहती है, उसी प्रकार दयासे आर्द्र चित्तवाले आप भी कृपापूर्वक शीघ्र ही मेरी दृष्टिका विषय बनें॥ २९॥

गजराजमुखाय ते नमो मृगराजोत्तमवाहनाय ते।
द्विजराजकलाभृते नमो गणराजाय सदा नमोऽस्तु ते॥ ३०॥
गणनाथ गणेश विघ्नराट् शिवसूनो जगदेकसद्गुरो।
सुरमानुषगीतसद्यशः प्रणतं मामव संसृतेर्भयात्॥ ३१॥
जय सिद्धिपते महामते जय बुद्धीश जडार्तसद्गते।
जय योगिसमूहसद्गुरो जय सेवारतकल्पनातरो॥ ३२॥
तनुवाग्हृदयैरसच्च सद्यदवस्थात्रितये कृतं मया।
जगदीश करिष्यमाणमप्यखिलं कर्म गणेश तेऽर्पितम्॥ ३३॥
इति कृष्णमुखोद्गतं स्तवं गणराजस्य पुरः पठेन्नरः।
सकलाधिविवर्जितो भवेत्सुतदारादिसुखी स मुक्तिभाक्॥ ३४॥

॥ इति मुद्गलपुराणे श्रीगणेशापराधक्षमापनस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

गजराजके समान मुखवाले आपको नमस्कार है, मृगराज (सिंह)-से भी उत्तम वाहनवाले आपको नमस्कार है, चन्द्रकलाधारी आपको नमस्कार है और गणोंके स्वामी आपको सदा नमस्कार है॥ ३०॥

हे गणनाथ! हे गणेश! हे विघ्नराज! हे शिवपुत्र! हे जगत्‌के एकमात्र सद्गुरु! देवताओं तथा मनुष्योंके द्वारा किये गये उत्तम यशोगानवाले आप सांसारिक भयसे मुझ शरणागतकी रक्षा कीजिये॥ ३१॥

हे सिद्धिपते! हे महामते! आपकी जय हो। हे बुद्धिस्वामिन्! हे जडमति तथा दुःखियोंके सद्गति-स्वरूप! आपकी जय हो। हे योगियोंके सद्गुरु! आपकी जय हो। हे सेवापरायणजनोंके लिये कल्पवृक्षस्वरूप! आपकी जय हो॥ ३२॥

हे जगदीश! हे गणेश! मैंने तीनों अवस्थाओंमें शरीर, वाणी तथा मनसे जो भी अच्छा तथा बुरा कर्म किया है और [भविष्यमें] किया जानेवाला है, उस सम्पूर्ण कर्मको आपको समर्पित कर दिया॥ ३३॥

जो मनुष्य श्रीकृष्णके मुखसे निर्गत इस स्तोत्रको गणराजके सामने पढ़ता है, वह सभी व्याधियोंसे रहित, पुत्र-स्त्री आदिके सुखसे सम्पन्न तथा मुक्तिका भागी हो जाता है॥ ३४॥

॥ इस प्रकार मुद्गलपुराणके अन्तर्गत श्रीगणेशापराधक्षमापनस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीमहागणपतिसहस्त्रनामस्तोत्रम्

व्यास उवाच

कथं नाम्नां सहस्त्रं स्वं गणेश उपदिष्टवान्।
शिवायैतन्ममाचक्ष्व लोकानुग्रहतत्पर॥ १॥

व्यासजीने पूछा—सम्पूर्ण लोकोंके ऊपर अनुग्रहमें तत्पर रहनेवाले पितामह! गणेशजीने भगवान् शिवके प्रति अपने सहस्त्र नामोंका उपदेश किस प्रकार किया, यह मुझे बताइये॥ १॥

ब्रह्मोवाच

देव एवं पुरारातिः पुरत्रयजयोद्यमे।
अनर्चनाद् गणेशस्य जातो विघ्नाकुलः किल॥ २॥

ब्रह्माजीने कहा—ब्रह्मन्! कहते हैं, पूर्वकालमें त्रिपुरारि महादेवजीने जब त्रिपुरविजयके लिये उद्योग किया, उस समय पहले गणेशजीकी अर्चना न करनेके कारण वे विघ्नोंसे घिर गये॥ २॥

मनसा स विनिर्धार्य ततस्तद्विघ्नकारणम्।
महागणपतिं भक्त्या समभ्यर्च्य यथाविधि॥ ३॥
विघ्नप्रशमनोपायमपृच्छदपराजितः।
संतुष्टः पूजया शम्भोर्महागणपतिः स्वयम्॥ ४॥
सर्वविघ्नैकहरणं सर्वकामफलप्रदम्।
ततस्तस्मै स्वकं नाम्नां सहस्त्रमिदमब्रवीत्॥ ५॥

तदनन्तर विघ्नका क्या कारण है, यह मन-ही-मन निश्चय करके शिवजीने भक्तिभावसे महागणपतिकी विधिपूर्वक पूजा की और उन अपराजित देवने उनसे विघ्नशान्तिका उपाय पूछा। भगवान् शिवद्वारा की गयी उस पूजासे संतुष्ट होकर महागणपतिने स्वयं उनसे अपने इस सहस्त्रनामका वर्णन किया। यह समस्त विघ्नोंका एकमात्र हरण करनेवाला तथा सम्पूर्ण मनोवांछित फलोंको देनेवाला है॥ ३—५॥

विनियोग

अस्य श्रीमहागणपतिसहस्रनामस्तोत्रमन्त्रस्य महागणपतिर्ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। महागणपतिर्देवता। गं बीजम्। हुं शक्तिः। स्वाहा कीलकम्। चतुर्विधपुरुषार्थसिद्ध्यर्थे जपादौ विनियोगः।

इस 'श्रीमहागणपतिसहस्रनामस्तोत्र-मन्त्र' के 'महागणपति' ऋषि हैं, 'अनुष्टुप्' छन्द है, 'महागणपति' देवता हैं, 'गं' बीज है, 'हुं' शक्ति है एवं 'स्वाहा' कीलक है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—इन चार पुरुषार्थोंकी सिद्धिके लिये जप आदिमें इसका विनियोग होता है।

ऋष्यादिन्यास

ॐ महागणपतये ऋषये नमः, शिरसि। अनुष्टुप्छन्दसे नमः, मुखे। महागणपतिदेवतायै नमः, हृदि। गं बीजाय नमः, गुह्ये। हुं शक्तये नमः, पादयोः। स्वाहा कीलकाय नमः, नाभौ।

—इन छः वाक्योंको पृथक्-पृथक् पढ़कर क्रमशः मस्तक, मुख, हृदय, गुदाभाग, दोनों चरण तथा नाभिका स्पर्श दाहिने हाथसे करे।

ध्यान

हस्तीन्द्राननमिन्दुचूडमरुणच्छायं त्रिनेत्रं रसा-
दाश्लिष्टं प्रियया सपद्मकरया स्वाङ्कस्थया संततम्।
बीजापूरगदाधनुस्त्रिशिखयुक्चक्राब्जपाशोत्पल-
व्रीह्यग्रस्वविषाणरत्नकलशान् हस्तैर्वहन्तं भजे॥

जिनका गजराजके समान मुख है; जिनके मस्तकपर चन्द्रमाका मुकुट है; जिनकी अंगकान्ति अरुण है; जो तीन नेत्रोंसे सुशोभित हैं; जिन्हें हाथमें कमल धारण करनेवाली अंकगत प्रिया (सिद्धलक्ष्मी)-का परिष्वंग सदा प्राप्त है तथा जो अपने दस हाथोंमें क्रमशः बीजापूर (बिजौरा नीबू या अनार), गदा, धनुष, त्रिशूल, चक्र, कमल, पाश, उत्पल, धानकी बाल तथा अपना ही टूटा दाँत धारण करते हैं एवं शुण्डमें रत्नमय कलश लिये हुए हैं; उन गणपतिका मैं भजन (ध्यान) करता हूँ।

गण्डपालीगलद्दानपूरलालसमानसान् ।
द्विरेफान् कर्णतालाभ्यां वारयन्तं मुहुर्मुहुः ॥
कराग्रधृतमाणिक्यकुम्भवक्त्रविनिर्गतैः ।
रत्नवर्षैः प्रीणयन्तं साधकान् मदविह्वलम् ।
माणिक्यमुकुटोपेतं सर्वाभरणभूषितम् ॥

गणेशजीके गण्डस्थलसे मदकी धारा बह रही है। उसका आस्वादन करनेके लिये भ्रमरोंकी भीड़ टूटी पड़ती है। उन भ्रमरोंको वे अपने ताडपत्रके समान कानोंद्वारा बारम्बार हटाते हैं। उन्होंने अपने शुण्डदण्डके अग्रभागमें माणिक्य-निर्मित कलश ले रखा है, जिसके मुखभागसे रत्नोंकी वर्षा हो रही है और जिसके द्वारा वे अपने धनार्थी साधक भक्तोंको तृप्त कर रहे हैं। कपोलोंपर झरते हुए मदसे वे विह्वल हैं। उनके मस्तकपर मणिमय मुकुट शोभा देता है तथा वे सम्पूर्ण आभूषणोंसे विभूषित हैं। ऐसे महागणपतिका मैं ध्यान करता हूँ।

इस तरह ध्यान करके '**ॐ गणेश्वरः**' इत्यादिसे आरम्भ होनेवाले 'श्रीमहागणपतिसहस्त्रनामस्तोत्र' का पाठ करना चाहिये—

ॐ गणेश्वरो गणक्रीडो गणनाथो गणाधिपः ।
एकदंष्ट्रो वक्रतुण्डो गजवक्त्रो महोदरः ॥ ६ ॥

ॐ सच्चिदानन्दस्वरूप, १. **गणेश्वरः**—आकाशादि प्रपंचके समूहको 'गण' कहते हैं, वह गण उनका स्वरूप है और वे उस गणके ईश्वर हैं, इसलिये जिन्हें 'गणेश्वर' कहा गया, वे श्रीगणेश; २. **गणक्रीडः** *—गणक्रीड-नामक गुरुस्वरूप; अथवा आकाशादि गणके भीतर प्रवेश करके क्रीड़ा करनेके कारण 'गणक्रीड' नामसे प्रसिद्ध; ३. **गणनाथः**—गणोंके नाथ एवं जिनका गणन—गुणोंकी गणना करना मंगलमय है, वे भगवान् गणपति; ४. **गणाधिपः**—आदित्यादि गणदेवताओंके अधिपति; ५.

---

* गणेशके शिष्य गणक्रीड हैं, जो विकटके गुरु हैं, विकटके शिष्य विघ्ननायक हैं। ये तीनों गुरु एवं गणेशरूप कहे गये हैं (खद्योत भाष्य)।

एकदंष्ट्रः—भूमिका उद्धार अथवा जगत्‌का नाश करनेके निमित्त जिनकी एक ही दंष्ट्रा (दाढ़) है, वे भगवान् गणेश; ६. **वक्रतुण्डः—वक्र**—टेढ़े **तुण्ड**—शुण्ड-दण्डसे युक्त; ७. **गजवक्त्रः**—गज अर्थात् हाथीके समान मुखवाले; ८. **महोदरः**—अनन्तकोटि ब्रह्माण्डको अपने भीतर रखनेके कारण महान् उदरवाले॥ ६॥

लम्बोदरो धूम्रवर्णो विकटो विघ्ननायकः।
सुमुखो दुर्मुखो बुद्धो विघ्नराजो गजाननः॥ ७॥

९. **लम्बोदरः**—ब्रह्माण्डके आलम्बनरूप उदरवाले; १०. **धूम्रवर्णः**—धूम्रके समान वर्णवाले; अथवा वायुका बीज धूम्रवर्णका है, तत्स्वरूप होनेके कारण गणेशजी भी 'धूम्रवर्ण' कहे गये हैं; ११. **विकटः**—कट अर्थात् आवरणसे रहित विभुस्वरूप; १२. **विघ्ननायकः**—अभक्त समुदायके प्रति विघ्नोंका नयन करनेवाले; या विघ्नोंके अधिपति; अथवा प्राणियोंका विहनन एवं नयन करनेवाले; १३. **सुमुखः**—मुखका अर्थ है—आरम्भ; जिनसे सम्पूर्ण आरम्भ सुन्दर या शोभन होते हैं, वे; अथवा सुन्दर मुखवाले; १४. **दुर्मुखः**—जिनके मुखका स्पर्श करना दुष्कर है; अथवा अग्नि और सूर्यके रूपमें जिनकी ओर देखना अत्यन्त कठिन है, वे; १५. **बुद्धः**—नित्य बुद्धस्वरूप अविद्यावृत्तिके नाशक; अथवा बुद्धावतारस्वरूप; १६. **विघ्नराजः**—विघ्नोंके साथ विराजमान; अथवा विघ्नोंके राजा; किंवा जो विघ्न—भक्ताधीन तथा राजा हैं, वे भगवान् गणेश; १७. **गजाननः**—गजों—हाथियोंको अनुप्राणित—प्राणशक्तिसे सम्पन्न करनेवाले॥ ७॥

भीमः प्रमोद आमोदः सुरानन्दो मदोत्कटः।
हेरम्बः शम्बरः शम्भुर्लम्बकर्णो महाबलः॥ ८॥

१८. **भीमः**—दुष्टोंके लिये भयदायक होनेसे 'भीम' नामसे प्रसिद्ध; १९. **प्रमोदः**—अभीष्ट वस्तुके लाभसे होनेवाले सुखका नाम है—'प्रमोद', तत्स्वरूप; २०. **आमोदः**—प्रमोदसे पहले अभीष्ट वस्तुकी प्राप्तिके निश्चयसे जो सुख होता है, उसे 'आमोद' कहते हैं, ऐसे आमोदस्वरूप; २१. **सुरानन्दः**—देवताओंके लिये आनन्दप्रद; २२.

मदोत्कटः—गण्डस्थलसे झरनेवाले मदके कारण उत्कट; अथवा मदसे आवरणका उत्क्रमण करनेवाले; २३. **हेरम्बः**—'हे' का अर्थ है—शंकर तथा 'रम्ब' का अर्थ है—शब्द। शैवागमके प्रवर्तक होनेसे 'हेरम्ब' नामवाले; अथवा उद्यम-शौर्यसे युक्त होनेके कारण उक्त नामसे प्रसिद्ध; २४. **शम्बरः**—'शम्' अर्थात् सुख है वर—श्रेष्ठ जिनमें, वे; २५. **शम्भुः**—जिनसे 'शम्' अर्थात् कल्याणका उद्भव होता है, वे; २६. **लम्बकर्णः**—भक्तजन जहाँ-कहीं भी गणेशजीका आवाहन या स्तवन आदि करते हैं, वहीं वे जैसे दूर न हों, इस तरह सुन लेते हैं। इसलिये लम्बे—सुदूरतक सुननेवाले कान हैं जिनके, वे; २७. **महाबलः**—जिनके अनुग्रहसे बलासुर महान् हो गया, वे; अथवा महान् बलशाली॥ ८॥

नन्दनोऽलम्पटोऽभीरुर्मेघनादो गणञ्जयः।
विनायको विरूपाक्षो धीरशूरो वरप्रदः॥ ९॥

२८. **नन्दनः**—समृद्धिके हेतुभूत; २९. **अलम्पटः**—पर्याप्त पट—वस्त्रोंसे समृद्ध; अथवा पट ही जिनका अलंकार है, वे; ३०. **अभीरुः**—भयशून्य; अथवा भीरु स्वभाववाली स्त्रीसे रहित; ३१. **मेघनादः**—मेघगर्जनाके समान नाद या सिंहनाद करनेवाले; अथवा मेघोंके नाशक; ३२. **गणञ्जयः**—शत्रु-समूहोंपर अनायास विजय पानेवाले; ३३. **विनायकः**—'वि' अर्थात् पक्षिरूप जीव-समुदायके नेता या नायक; ३४. **विरूपाक्षः**—विरूप—विकट दीखनेवाले अग्नि, सूर्य तथा चन्द्ररूप नेत्रोंसे युक्त; ३५. **धीरशूरः**—धैर्य और शौर्यसे सम्पन्न; ३६. **वरप्रदः**—अपने भक्तजनोंको उत्तम एवं मनोवांछित वर प्रदान करनेवाले॥ ९॥

महागणपतिर्बुद्धिप्रियः क्षिप्रप्रसादनः।
रुद्रप्रियो गणाध्यक्ष उमापुत्रोऽघनाशनः॥ १०॥

३७. **महागणपतिः**—गुल्म आदि सेना-भेदोंको 'गण' कहते हैं; वे जिनकी अधीनतामें महान्—बहु-संख्यक हैं, वे; अथवा महागणोंके अधिपति; ३८. **बुद्धिप्रियः**—निश्चयात्मिका बुद्धि जिनको प्रिय है, वे; अर्थात् संशयनिवारक; ३९. **क्षिप्रप्रसादनः**—भक्तोंद्वारा ध्यान किये जानेपर

उनके ऊपर शीघ्र प्रसन्न होनेवाले; **४०. रुद्रप्रियः**—ग्यारहों रुद्रोंके प्रिय; **४१. गणाध्यक्षः**—छत्तीस तत्त्वरूप गणसमुदायके पालक; **४२. उमापुत्रः**—पार्वतीके पुत्र (उमाका पुन्नामक नरकलोकसे उद्धार करनेवाले); **४३. अघनाशनः**—लम्बोदर या महोदर होनेपर भी स्वल्पमात्र नैवेद्यसे तृप्त होनेवाले (अघन—स्वल्प है अशन—भोजन जिनका, वे); अथवा अघके फलस्वरूप दुःखोंका नाश करनेवाले॥ १०॥

कुमारगुरुरीशानपुत्रो मूषकवाहनः।
सिद्धिप्रियः सिद्धिपतिः सिद्धः सिद्धिविनायकः॥ ११॥

४४. कुमारगुरुः—सनत्कुमार-स्वरूप होते हुए विद्याका उपदेश करनेके कारण गुरु; अथवा कुमार कार्तिकेयसे भी पहले उत्पन्न होनेके कारण उनके ज्येष्ठ भ्राता; **४५. ईशानपुत्रः**—भगवान् शंकरके आत्मज; **४६. मूषकवाहनः**—मूषक (चूहे)-को वाहन बनानेके कारण उक्त नामसे प्रसिद्ध; **४७. सिद्धिप्रियः**—अणिमा आदि आठ सिद्धियाँ जिन्हें प्रिय हैं, वे; **४८. सिद्धिपतिः**—अणिमा आदि आठ सिद्धियोंके पालक; **४९. सिद्धः**—गोरक्षनाथ आदि सिद्धस्वरूप; **५०. सिद्धिविनायकः**—भक्तोंतक सिद्धिका नयन करनेवाले (भक्तोंको सिद्धि प्राप्त करानेवाले)॥ ११॥

अविघ्नस्तुम्बुरुः सिंहवाहनो मोहिनीप्रियः।
कटंकटो राजपुत्रः शालकः सम्मितोऽमितः॥ १२॥

५१. अविघ्नः—अविभाव; अर्थात् पशुताका हनन (हरण) करनेवाले; अथवा विघ्नोंसे रहित; **५२. तुम्बुरुः**—तुम्ब (अलावू या लौकी)-के द्वारा जो रव करता है, वह 'तुम्बुरु' है। तुम्बुरु नाम है—वीणाका। वीणापर गणपतिका यशोगान होनेसे वे 'तुम्बुरु' नामसे प्रसिद्ध हैं; **५३. सिंहवाहनः**—मोर और मूषककी भाँति सिंहको भी वाहन बनानेवाले; अथवा सिंह-वाहिनी देवीसे अभिन्न होनेके कारण सिंहवाहन; **५४. मोहिनीप्रियः**—मोहिनीपति शिवसे अभिन्न; **५५. कटंकटः**—'कट' का अर्थ है—आवरण या अज्ञान; गणेशजी ज्ञान प्रदान करके उस अज्ञानको भी ढक देते या मिटा देते हैं। इसलिये 'कटंकट' नामसे प्रसिद्ध हैं; **५६.**

राजपुत्रः—राजा वरेण्यके यहाँ पुत्रवत् आचरण करनेवाले; अथवा राजा—चन्द्रमाको पुत्रवत् माननेवाले; **५७. शालकः**—'श' 'परोक्ष' अर्थमें है और 'अलक' शब्द 'केश' या अंशका वाचक है। जिनका एक अंश भी प्रत्यक्ष नहीं है, जो अतीन्द्रिय हैं, वे 'शालक' हैं; अथवा शालित-शोभित होते हैं, इसलिये 'शालक' हैं; **५८. सम्मितः**—सर्वव्यापी होते हुए भी अंगुष्ठमात्रसे मित; **५९. अमितः**—अणु, स्थूल, ह्रस्व और दीर्घ—चारों प्रकारके प्रमाणोंसे मित न होनेवाले॥ १२॥

कूष्माण्डसामसम्भूतिर्दुर्जयो धूर्जयो जयः।
भूपतिर्भुवनपतिर्भूतानां पतिरव्ययः॥ १३॥

६०. कूष्माण्डसामसम्भूतिः—**'कूष्माण्डैर्जुहुयात्।'**—इस कूष्माण्ड-होमविधिमें जो प्रसिद्ध मन्त्र या साम हैं, वे गणेशजीकी विभूति हैं। अतएव वे उक्त नामसे प्रसिद्ध हैं; **६१. दुर्जयः**—बलवान् दैत्य जिन्हें मनसे भी जीत नहीं सकते, ऐसे; **६२. धूर्जयः**—जगच्चक्रकी धुरीको अनायास वहन करनेवाले; **६३. जयः**—जयस्वरूप; अथवा जय-महाभारत आदि इतिहास-पुराण जिनके रूप हैं, वे; **६४. भूपतिः**—पृथ्वीके पालक, अथवा भूपति-नामसे प्रसिद्ध अग्निभ्राता; **६५. भुवनपतिः**—समस्त भुवनोंके स्वामी; अथवा उक्त नामवाले अग्निभ्राता; **६६. भूतानाम्पतिः**—समस्त भूतोंके पालक अथवा भूतपति-नामक अग्निभ्राता; **६७. अव्ययः**—अविनाशी॥ १३॥

विश्वकर्ता विश्वमुखो विश्वरूपो निधिर्घृणिः।
कविः कवीनामृषभो ब्रह्मण्यो ब्रह्मणस्पतिः॥ १४॥

६८. विश्वकर्ता—संसारके स्त्रष्टा; **६९. विश्वमुखः**—जिनसे विश्वका मुख—आरम्भ हुआ है, वे; अथवा विश्व जिनके मुखमें है; या जो मुखकी भाँति विश्वकी वृत्तिके हेतु हैं, वे गणेश; **७०. विश्वरूपः**—सम्पूर्ण दृश्य-प्रपंच जिनका ही रूप है, वे; अथवा त्वष्टा-प्रजापतिके पुत्र देवपुरोहित विश्वरूपसे अभिन्न; **७१. निधिः**—आकाश आदि सम्पूर्ण जगत्समूह जिनमें पूर्ण रूपसे आहित या धृत है, वे; अथवा महापद्म आदि नव निधिस्वरूप; **७२. घृणिः**—सूर्यस्वरूप; **७३. कविः**—सृष्टिरूप काव्यके

कर्ता; ७४. **कवीनामृषभः**—कवियोंमें श्रेष्ठ; ७५. **ब्रह्मण्यः**—ब्राह्मण, वेद, तप तथा ब्रह्माके प्रति सद्भाव रखनेवाले; ७६. **ब्रह्मणस्पतिः**—ब्रह्म अर्थात् वाणीके अधिपति ॥ १४ ॥

ज्येष्ठराजो निधिपतिर्निधिप्रियपतिप्रियः ।
हिरण्मयपुरान्तःस्थः सूर्यमण्डलमध्यगः ॥ १५ ॥

७७. **ज्येष्ठराजः**—'ज्येष्ठ'-संज्ञक सामर्मे राजमान; ७८. **निधिपतिः**—नव निधियोंके परिपालक; ७९. **निधिप्रियपतिप्रियः**—निधियोंको प्रिय माननेवाले जो कुबेर आदि राजा हैं, उनके द्वारा भी उपास्य; ८०. **हिरण्मयपुरान्तःस्थः**—हिरण्यपुर-दहराकाशके मध्यमें विराजमान; (चिन्मय ब्रह्मके निवासस्थान अन्तर्हृदयमें विद्यमान); ८१. **सूर्यमण्डलमध्यगः**—सूर्यमण्डलके भीतर स्थित ॥ १५ ॥

कराहतिध्वस्तसिन्धुसलिलः पूषदन्तभित् ।
उमाङ्ककेलिकुतुकी मुक्तिदः कुलपालनः ॥ १६ ॥

८२. **कराहतिध्वस्तसिन्धुसलिलः**—जिन्होंने अपने शुण्डदण्डके आघातसे समुद्रके जलको विध्वस्त (निष्कासित) कर दिया था, वे; ८३. **पूषदन्तभित्**—वीरभद्ररूपसे दक्ष-यज्ञमें पूषाके दाँतको तोड़नेवाले; ८४. **उमाङ्ककेलिकुतुकी**—उमाके अंकमें बैठकर बालोचित क्रीड़ा करनेका कौतूहल रखनेवाले; ८५. **मुक्तिदः**—कारागारकी बेड़ीसे छुड़ानेवाले तथा मोक्षदाता; ८६. **कुलपालनः**—वंशके तथा कौलतन्त्रके भी पालक ॥ १६ ॥

किरीटी कुण्डली हारी वनमाली मनोमयः ।
वैमुख्यहतदैत्यश्रीः पादाहतिजितक्षितिः ॥ १७ ॥

८७. **किरीटी**—मस्तकपर मुकुट धारण करनेवाले; अथवा अर्जुनस्वरूप; ८८. **कुण्डली**—कानोंमें कुण्डल पहननेवाले; अथवा शेषनागरूपधारी; ८९. **हारी**—मुक्ता आदि मणियोंकी माला धारण करनेवाले; अथवा अत्यन्त मनोहर; ९०. **वनमाली**—कन्धेसे लेकर पैरोंतक लटकनेवाली 'वनमाला' धारण करनेवाले; ९१. **मनोमयः**—अपने संकल्पद्वारा निर्मित

एक शरीर धारण करनेवाले; ९२. **वैमुख्यहतदैत्यश्रीः**—जिनके विमुख हो जानेके कारण दैत्योंकी लक्ष्मी नष्ट हो गयी, वे; ९३. **पादाहतिजितक्षितिः**—अपने पैरोंके आघातसे पृथ्वीको नीचे झुका देनेवाले॥ १७॥

सद्योजातस्वर्णमुञ्जमेखली दुर्निमित्तहृत्।
दुःस्वप्नहृत् प्रसहनो गुणी नादप्रतिष्ठितः॥ १८॥

९४. **सद्योजातस्वर्णमुञ्जमेखली**—तत्काल तैयार की गयी स्वर्णमय मुंजकी मेखलासे मण्डित; ९५. **दुर्निमित्तहृत्**—देवमूर्तियोंके फूटने, भूकम्प होने तथा महान् उल्कापात आदिके द्वारा सूचित जो दुर्निमित्त (अपशकुन) हैं, उनका हनन करनेवाले; ९६. **दुःस्वप्नहृत्**—बुरे स्वप्नोंके दुष्प्रभावको दूर करके उन्हें सुस्वप्नमें परिणत कर देनेवाले; ९७. **प्रसहनः**—भक्तोंके अपराधको सहन करनेवाले भगवान्; ९८. **गुणी**—अनेक सद्‌गुणोंसे सम्पन्न; ९९. **नादप्रतिष्ठितः**—प्रणवनादके वाच्यार्थरूपसे प्रतिष्ठित॥ १८॥

सुरूपः सर्वनेत्राधिवासो वीरासनाश्रयः।
पीताम्बरः खण्डरदः खण्डेन्दुकृतशेखरः॥ १९॥

१००. **सुरूपः**—अधिक लावण्यसे युक्त; अथवा उत्तम तत्त्वका निरूपण करनेवाले; १०१. **सर्वनेत्राधिवासः**—सबके नेत्रोंमें द्रष्टा पुरुषके रूपमें निवास करनेवाले; १०२. **वीरासनाश्रयः**—बायें घुटनेपर दायाँ पैर रखकर बैठना 'वीरासन' कहलाता है, ऐसे वीरासनसे बैठनेवाले; १०३. **पीताम्बरः**—आकाशको पी जानेवाले; अथवा पीतवस्त्र धारण करनेवाले; १०४. **खण्डरदः**—खण्डित दायाँ दाँत धारण करनेवाले; १०५. **खण्डेन्दुकृतशेखरः**—भालदेशमें आधे चन्द्रमाको धारण करनेवाले॥ १९॥

चित्राङ्कश्यामदशनो भालचन्द्रश्चतुर्भुजः।
योगाधिपस्तारकस्थः पुरुषो गजकर्णकः॥ २०॥

१०६. **चित्राङ्कश्यामदशनः**—जिनमें श्यामरंगकी अधिकता है, ऐसे; चित्रोंसे अंकित या अलंकृत श्याम दन्तवाले; १०७. **भालचन्द्रः**—

भालदेशमें चन्द्रमाको धारण करनेवाले; अथवा अष्टमीके चन्द्रमाकी भाँति ललाटवाले; १०८. **चतुर्भुजः**—चार भुजावाले; १०९. **योगाधिपः**—'लिङ्गपुराण' में वर्णित जो लकुलीशादि अट्ठाईस योगाचार्यावतार हैं, उनसे अभिन्न रूपवाले; अथवा योगेश्वर; ११०. **तारकस्थः**—तारक अर्थात् प्रणव-मन्त्रके अभिधेय; १११. **पुरुषः**—समस्त पुरों—शरीरोंमें शयन करनेवाले साक्षी आत्मा; ११२. **गजकर्णकः**—हाथीके समान विशाल कानवाले ॥ २० ॥

गणाधिराजो विजयस्थिरो गजपतिध्वजी।
देवदेवः स्मरप्राणदीपको वायुकीलकः॥ २१ ॥

११३. **गणाधिराजः**—काव्यके पद्योंमें जो मगण, यगण, रगण और सगण आदि गण आते हैं, उनसे राजमान—शोभायमान; अथवा गणोंके अधिपति; ११४. **विजयस्थिरः**—भक्तोंकी विजयमें स्थिररूपसे प्रवृत्त; ११५. **गजपतिध्वजी**—अपने ध्वजमें गजराजका चिह्न धारण करनेवाले; ११६. **देवदेवः**—देवताओंके भी देवता—इन्द्र आदि देवताओंके उपास्य; ११७. **स्मरप्राणदीपकः**—रुद्रद्वारा कामदेवके शरीरके दग्ध कर दिये जानेपर भी उसके प्राणोंको उज्जीवित करनेवाले; ११८. **वायुकीलकः**—नवद्वारवाले शरीरमें प्राणोंका स्तम्भन करनेवाले ॥ २१ ॥

विपश्चिद्वरदो नादोन्नादभिन्नबलाहकः।
वराहरदनो मृत्युञ्जयो व्याघ्राजिनाम्बरः॥ २२ ॥

११९. **विपश्चिद्वरदः**—राजा विपश्चित्‌को वर देनेवाले; १२०. **नादोन्नादभिन्नबलाहकः**—अपने मन्द या उच्च नाद (घोष)-से मेघोंको छिन्न-भिन्न कर देनेवाले; १२१. **वराहरदनः**—महावराहकी दंष्ट्रा (दाढ़)-की शोभाको तिरस्कृत करनेवाले एक दाँतसे सुशोभित; १२२. **मृत्युञ्जयः**—काल, मृत्यु अथवा प्रमादपर विजय पानेवाले; १२३. **व्याघ्राजिनाम्बरः**—वस्त्रके स्थानमें व्याघ्रचर्मको धारण करनेवाले ॥ २२ ॥

इच्छाशक्तिधरो देवत्राता दैत्यविमर्दनः।
शम्भुवक्त्रोद्भवः शम्भुकोपहा शम्भुहास्यभूः॥ २३॥

१२४. **इच्छाशक्तिधरः**—जगत्‌की सृष्टिकी इच्छा धारण करनेवाले होनेसे इच्छाशक्तिधारी; १२५. **देवत्राता**—दैत्योंके भयसे देवताओंकी रक्षा करनेवाले; १२६. **दैत्यविमर्दनः**—दैत्योंका संहार करनेवाले; १२७. **शम्भुवक्त्रोद्भवः**—शिवके मुखसे प्रकट होनेवाले; १२८. **शम्भुकोपहा**—अपनी बाल-लीलाओंसे भगवान् शिवके क्रोधको हर लेनेवाले; १२९. **शम्भुहास्यभूः**—नादान बालककी भाँति चेष्टा करके शिवको हँसा देनेवाले॥ २३॥

शम्भुतेजाः शिवाशोकहारी गौरीसुखावहः।
उमाङ्गमलजो गौरीतेजोभूः स्वर्धुनीभवः॥ २४॥

१३०. **शम्भुतेजाः**—शिवके तेजसे सम्पन्न; १३१. **शिवाशोकहारी**—महिषासुर आदिके मर्दनकालमें शिवा (पार्वती)- के बल एवं उत्साहको बढ़ाकर उनके शोकको हर लेनेवाले; १३२. **गौरीसुखावहः**—पार्वतीजीको सुख पहुँचानेवाले; १३३. **उमाङ्गमलजः**—गिरिराजनन्दिनी उमाके अंगोंमें लगे हुए उबटनके मैलसे प्रकट हुए शरीरमें प्रवेश करके उसे सप्राण बनानेवाले; १३४. **गौरीतेजोभूः**—गौरीके तेजसे उत्पन्न; अथवा पार्वतीके तेजकी आधारभूमि; १३५. **स्वर्धुनीभवः**—गंगाजीसे उत्पन्न स्वामिकार्तिकेयसे अभिन्न; अथवा गंगाजीकी उत्पत्तिके हेतुभूत॥ २४॥

यज्ञकायो महानादो गिरिवर्ष्मा शुभाननः।
सर्वात्मा सर्वदेवात्मा ब्रह्ममूर्धा ककुप्श्रुतिः॥ २५॥

१३६. **यज्ञकायः**—अश्वमेधादि यज्ञस्वरूप; १३७. **महानादः**—उच्चस्वरसे गर्जना करनेवाले; १३८. **गिरिवर्ष्मा**—विराट् स्वरूपसे पर्वतोंको शरीरके अवयवरूपमें धारण करनेवाले; १३९. **शुभाननः**—शुभदायक मुखवाले; अथवा मंगल-नामवाले प्राणके जनक; १४०. **सर्वात्मा**—सर्वस्वरूप; १४१. **सर्वदेवात्मा**—सकल देवरूप; १४२. **ब्रह्ममूर्धा**—

ब्रह्म ही जिनका मस्तक है, वे; १४३. ककुप्श्रुतिः—दिशाओंको कानके रूपमें धारण करनेवाले ॥ २५ ॥

ब्रह्माण्डकुम्भश्चिद्व्योमभालः सत्यशिरोरुहः।
जगज्जन्मलयोन्मेषनिमेषोऽग्न्यर्कसोमदृक् ॥ २६ ॥

१४४. **ब्रह्माण्डकुम्भः**—विशाल ब्रह्माण्ड-कपालद्वय औंधा होकर जिनके लिये घटके समान प्रतीत होता है, वे; १४५. **चिद्व्योमभालः**—चिन्मय आकाशरूप भाल (ब्रह्मरन्ध्र)-वाले; १४६. **सत्यशिरोरुहः**—सत्यलोकरूपी केशवाले; १४७. **जगज्जन्मलयोन्मेषनिमेषः**—जिनके नेत्रके खुलनेपर जगत्का जन्म होता है और बन्द होनेपर उसका संहार, वे परमेश्वर; १४८. **अग्न्यर्कसोमदृक्**—अग्नि, सूर्य और चन्द्ररूपी नेत्रवाले ॥ २६ ॥

गिरीन्द्रैकरदो धर्माधर्मोष्ठः सामबृंहितः।
ग्रहर्क्षदशनो वाणीजिह्वो वासवनासिकः॥ २७॥

१४९. **गिरीन्द्रैकरदः**—गिरिराज मेरु जिनका एक दाँत है, वे विराट् पुरुष; १५०. **धर्माधर्मोष्ठः**—धर्म और अधर्मरूप ओष्ठवाले; १५१. **सामबृंहितः**—सामवेदरूप गर्जनावाले; १५२. **ग्रहर्क्षदशनः**—सूर्य आदि ग्रहों और कृत्तिका आदि नक्षत्रोंको अपने मुखमें दाँतोंके रूपमें धारण करनेवाले; १५३. **वाणीजिह्वः**—वाणीस्वरूप जिह्वावाले; १५४. **वासवनासिकः**—इन्द्ररूप नासिकावाले ॥ २७ ॥

कुलाचलांसः सोमार्कघण्टो रुद्रशिरोधरः।
नदीनदभुजः सर्पाङ्गुलीकस्तारकानखः॥ २८॥

१५५. **कुलाचलांसः**—विन्ध्य आदि कुलपर्वतरूप कन्धोंवाले; १५६. **सोमार्कघण्टः**—चन्द्रमा और सूर्यरूप घण्टावाले; १५७. **रुद्रशिरोधरः**—रुद्ररूपी गर्दनवाले; १५८. **नदीनदभुजः**—गंगा आदि नदियाँ और शोणभद्र आदि नद जिनकी भुजाएँ हैं, वे; १५९. **सर्पाङ्गुलीकः**—शेष आदि नाग जिनकी अंगुलियोंमें हैं, वे; १६०.

तारकानखः—ध्रुव आदि तारोंको नखके रूपमें धारण करनेवाले ॥ २८ ॥

भ्रूमध्यसंस्थितकरो ब्रह्मविद्यामदोत्कटः।
व्योमनाभिः श्रीहृदयो मेरुपृष्ठोऽर्णवोदरः॥ २९ ॥

१६१. **भ्रूमध्यसंस्थितकरः**—भौंहोंके मध्यभागमें स्थित शुण्डदण्डवाले; १६२. **ब्रह्मविद्यामदोत्कटः**—ब्रह्मविद्यारूपी मदसे उद्भिन्न गण्डस्थलवाले; १६३. **व्योमनाभिः**—आकाशरूप नाभिवाले; १६४. **श्रीहृदयः**—ऋग्वेद, सामवेद और यजुर्वेद—इन तीनोंको 'श्री' कहते हैं। इनमें संलग्न है हृदय जिनका, ऐसे; १६५. **मेरुपृष्ठः**—सुमेरुपर्वतरूपी पृष्ठभागवाले; १६६. **अर्णवोदरः**—सारे समुद्र जिनके उदरान्तर्गत जल हैं, वे ॥ २९ ॥

कुक्षिस्थयक्षगन्धर्वरक्षःकिन्नरमानुषः ।
पृथ्वीकटिः सृष्टिलिङ्गः शैलोरुर्दस्रजानुकः॥ ३० ॥

१६७. **कुक्षिस्थयक्षगन्धर्वरक्षःकिन्नरमानुषः**—यक्ष, गन्धर्व, राक्षस, किन्नर और मनुष्य जिनकी कुक्षिके अन्तर्गत आँतोंके रूपमें विराजमान हैं, वे; १६८. **पृथ्वीकटिः**—विराट् रूपमें पृथ्वी ही जिनका कटिभाग है, वे; १६९. **सृष्टिलिङ्गः**—मैथुनी सृष्टि जिनकी जननेन्द्रियके स्थानमें है, वे; १७०. **शैलोरुः**—पर्वत ही जिनके ऊरु (जाँघें) हैं, वे; १७१. **दस्रजानुकः**—दोनों अश्विनीकुमार जिनके दो घुटने हैं, वे ॥ ३० ॥

पातालजङ्घो मुनिपात्कालाङ्गुष्ठस्त्रयीतनुः।
ज्योतिर्मण्डललाङ्गूलो हृदयालाननिश्चलः॥ ३१ ॥

१७२. **पातालजङ्घः**—सातों पाताल जिनकी पिंडलियोंके स्थानमें हैं, वे; १७३. **मुनिपात्**—चरणोंकी सेवामें संलग्न मुनि ही जिनके चरण हैं, वे; १७४. **कालाङ्गुष्ठः**—महाकालरूप पादांगुष्ठवाले; १७५. **त्रयीतनुः**—वेदत्रयीरूप शरीरवाले; १७६. **ज्योतिर्मण्डललाङ्गूलः**—शिशुमार-संज्ञक ज्योतिर्मण्डल (तारोंका समूह) जिनकी पूँछ है, वे; १७७. **हृदयालान-निश्चलः**—भक्तोंके हृदयरूपी आलान (खम्भे)-में बँधकर निश्चलरूपसे रहनेवाले ॥ ३१ ॥

हृत्पद्मकर्णिकाशालिवियत्केलिसरोवरः ।
सद्भक्तध्याननिगडः पूजावारीनिवारितः ॥ ३२ ॥

१७८. **हृत्पद्मकर्णिकाशालिवियत्केलिसरोवरः**—हृदय-कमलकी कर्णिकासे सुशोभित दहराकाश जिनका क्रीडासरोवर है, वे; १७९. **सद्भक्तध्याननिगडः**—श्रेष्ठ भक्तजन जिन्हें ध्यानरूपी निगड (बन्धन)-से आबद्ध कर लेते हैं, वे; १८०. **पूजावारीनिवारितः**—पूजारूपी साँकलसे अवरुद्ध होनेवाले ॥ ३२ ॥

प्रतापी कश्यपसुतो गणपो विष्टपी बली।
यशस्वी धार्मिकः स्वोजाः प्रथमः प्रथमेश्वरः ॥ ३३ ॥

१८१. **प्रतापी**—देवशत्रुओंको ताप देनेवाले; अथवा पराक्रमसम्पन्न; १८२. **कश्यपसुतः**—महोत्कट विनायकनामसे कश्यपमुनिके पुत्ररूपमें अवतीर्ण; १८३. **गणपः**—अध्वर्यु और होता आदि गणोंके पालक; १८४. **विष्टपी**—सम्पूर्ण भुवनोंके आधार; १८५. **बली**—बलसम्पन्न; १८६. **यशस्वी**—पुण्य कीर्तिवाले; १८७. **धार्मिकः**—धर्मकी वृद्धि करनेवाले; १८८. **स्वोजाः**—श्रेष्ठ ओजवाले; १८९. **प्रथमः**—सब कार्योंमें प्रथमपूज्य देवता; १९०. **प्रथमेश्वरः**—मुख्य देवता—ब्रह्मा, विष्णु और शिवके भी ईश्वर ॥ ३३ ॥

चिन्तामणिद्वीपपतिः कल्पद्रुमवनालयः ।
रत्नमण्डपमध्यस्थो रत्नसिंहासनाश्रयः ॥ ३४ ॥

१९१. **चिन्तामणिद्वीपपतिः**—चिन्तामणि नामक द्वीपके स्वामी; १९२. **कल्पद्रुमवनालयः**—कल्पवृक्षोंके वनमें वास करनेवाले; १९३. **रत्नमण्डपमध्यस्थः**—रत्नमय मण्डपके मध्यमें विराजमान; १९४. **रत्नसिंहासनाश्रयः**—रत्नसिंहासनपर आसीन ॥ ३४ ॥

तीव्राशिरोद्धृतपदो ज्वालिनीमौलिलालितः ।
नन्दानन्दितपीठश्रीर्भोगदाभूषितासनः ॥ ३५ ॥

१९५. **तीव्रा[1]शिरोद्धृतपदः**—तीव्रा नामक पीठशक्तिने जिनके चरणोंको अपने मस्तकपर धारण कर रखा है, वे भगवान् गणेश; १९६. **ज्वालिनी-मौलिलालितः**—ज्वालिनी नामक शक्ति अपने मुकुटसे जिनके चरणोंका स्पर्श करके लाड़ लड़ाती है, वे; १९७. **नन्दानन्दितपीठश्रीः**—नन्दा नामक शक्ति जिनके पीठकी शोभाका अभिनन्दन करती है, वे; १९८. **भोगदा-भूषितासनः**—जिनका सिंहासन भोगदा नामक पीठशक्तिसे विभूषित है, वे ॥ ३५ ॥

सकामदायिनीपीठः स्फुरदुग्रासनाश्रयः ।
तेजोवतीशिरोरत्नं सत्यानित्यावतंसितः ॥ ३६ ॥

१९९. **सकामदायिनीपीठः**—जिनका पीठ कामदायिनी-शक्तिसे समलंकृत है, वे; २००. **स्फुरदुग्रासनाश्रयः**— तेजस्विनी उग्रा-शक्तिसे सुशोभित आसनपर बैठनेवाले; २०१. **तेजोवतीशिरोरत्नं**—तेजोवती नामक शक्तिके सिरके मणिरत्न; २०२. **सत्यानित्यावतंसितः**—सत्या नामक शक्ति जिन्हें नित्य अपने मस्तकका आभूषण बनाये रखती है, वे ॥ ३६ ॥

सविघ्ननाशिनीपीठः सर्वशक्त्यम्बुजाश्रयः ।
लिपिपद्मासनाधारो वह्निधामत्रयाश्रयः ॥ ३७ ॥

२०३. **सविघ्ननाशिनीपीठः**—विघ्ननाशिनी नामक शक्तिसे सुशोभित पीठवाले; २०४. **सर्वशक्त्यम्बुजाश्रयः**—सम्पूर्ण शक्तियोंसे युक्त कमलके आसनपर विराजमान; २०५. **लिपिपद्मासनाधारः**[2]—अक्षरोंसे युक्त कमल (मातृकापद्म)-के आसनपर बैठनेवाले; २०६. **वह्निधामत्रयाश्रयः**—कमलकी कर्णिकाके ऊपर विराजमान सूर्य, चन्द्र और अग्निसंज्ञक त्रिविध तेजोमण्डलमें स्थित ॥ ३७ ॥

उन्नतप्रपदो गूढगुल्फः संवृतपार्ष्णिकः ।
पीनजङ्घः श्लिष्टजानुः स्थूलोरुः प्रोन्नमत्कटिः ॥ ३८ ॥

२०७. **उन्नतप्रपदः**—जिनके पैरोंका अग्रभाग कूर्मपीठके समान

---

१. तीव्रा, ज्वालिनी, नन्दा, भोगदा, कामदायिनी, उग्रा, तेजोवती, सत्या और विघ्न-नाशिनी—ये नौ पीठशक्तियाँ हैं। पीठगत अष्टदल कमल और उसकी कर्णिकामें ये पूजित होती हैं। इन नौ शक्तियों और कमलके सम्बन्धसे यहाँ क्रमशः दस नाम वर्णित हुए हैं।

२. अष्टदल कमलके आठ किंजल्कोंमें क्रमशः दो-दो स्वर, आठ दलोंमें क्रमशः क, च, ट, त, प, य, श—इन आठ वर्गोंको तथा कर्णिकामें प्रसादको अंकित करनेपर उसे 'लिपिपद्म' या 'मातृकापद्म' कहते हैं। (खद्योतभाष्य)

ऊँचा है, वे; २०८. **गूढगुल्फः**—जिनके गुल्फ (टखने) मांससे छिपे हुए हैं, वे; २०९. **संवृतपार्ष्णिकः**—जिनके टखनेके नीचेका भाग भी मांसल है, वे; २१०. **पीनजङ्घः**—पीन (मांसल) पिंडलियोंवाले; २११. **श्लिष्टजानुः**—जिनके दोनों घुटने स्पष्ट नहीं दिखायी देते, वे; २१२. **स्थूलोरुः**—मोटी जाँघवाले; २१३. **प्रोन्नमत्कटिः**—ऊँचे कटिप्रदेशवाले॥ ३८॥

निम्ननाभिः स्थूलकुक्षिः पीनवक्षा बृहद्भुजः।
पीनस्कन्धः कम्बुकण्ठो लम्बोष्ठो लम्बनासिकः॥ ३९॥

२१४. **निम्ननाभिः**—गहरी नाभिवाले; २१५. **स्थूलकुक्षिः**—लम्बोदर; २१६. **पीनवक्षाः**—ऊँची छातीवाले; २१७. **बृहद्भुजः**—बड़ी बाँहवाले; २१८. **पीनस्कन्धः**—मांसल कन्धेवाले; २१९. **कम्बुकण्ठः**—त्रिवलीयुक्त शंखाकार ग्रीवावाले; २२०. **लम्बोष्ठः**—लटकते हुए ओठोंवाले; २२१. **लम्बनासिकः**—लम्बी नासिका (सूँड़)-वाले॥ ३९॥

भग्नवामरदस्तुङ्गसव्यदन्तो महाहनुः।
ह्रस्वनेत्रत्रयः शूर्पकर्णो निबिडमस्तकः॥ ४०॥

२२२. **भग्नवामरदः**—जिनके बायें दाँतका अग्रभाग टूट गया है, वे; २२३. **तुङ्गसव्यदन्तः**—जिनका दाहिना दाँत ऊँचा है, वे; २२४. **महाहनुः**—लम्बी ठोढ़ीवाले; २२५. **ह्रस्वनेत्रत्रयः**—छोटे-छोटे तीन नेत्रोंवाले; २२६. **शूर्पकर्णः**—सूपके समान विशाल कानवाले; २२७. **निबिडमस्तकः**—घनीभूत कठोर मस्तकवाले॥ ४०॥

स्तबकाकारकुम्भाग्रो रत्नमौलिर्निरङ्कुशः।
सर्पहारकटीसूत्रः सर्पयज्ञोपवीतवान्॥ ४१॥

२२८. **स्तबकाकारकुम्भाग्रः**—जिनके कुम्भस्थल (मस्तक)- का अग्रभाग गुच्छके समान दिखायी देता है, वे; २२९. **रत्नमौलिः**—रत्नमय मुकुटसे मण्डित; २३०. **निरङ्कुशः**—जिनके कुम्भस्थलपर कभी अंकुशका स्पर्श नहीं होता, वे; अथवा परम स्वतन्त्र; २३१. **सर्पहारकटीसूत्रः**—जो सर्पाकार हार और कटिसूत्र (मेखला) धारण करते हैं, वे; २३२. **सर्पयज्ञोपवीतवान्**—सर्पमय यज्ञोपवीत धारण करनेवाले॥ ४१॥

सर्पकोटीरकटकः सर्पग्रैवेयकाङ्गदः।
सर्पकक्ष्योदराबन्धः सर्पराजोत्तरीयकः॥ ४२॥

२३३. **सर्पकोटीरकटकः**—मुकुट और वलयके रूपमें सर्पको धारण करनेवाले; २३४. **सर्पग्रैवेयकाङ्गदः**—सर्पके ही कण्ठहार और बाजूबंद पहननेवाले; २३५. **सर्पकक्ष्योदराबन्धः**—करधनीके रूपमें सर्पको ही धारण करनेवाले; २३६. **सर्पराजोत्तरीयकः**—नागराज वासुकिको उत्तरीयके रूपमें धारण करनेवाले॥ ४२॥

रक्तो रक्ताम्बरधरो रक्तमाल्यविभूषणः।
रक्तेक्षणो रक्तकरो रक्ततात्वोष्ठपल्लवः॥ ४३॥

२३७. **रक्तः**—रक्तवर्ण; २३८. **रक्ताम्बरधरः**—लाल वस्त्र धारण करनेवाले; २३९. **रक्तमाल्यविभूषणः**—लाल रंगके ही हार और आभूषण धारण करनेवाले; २४०. **रक्तेक्षणः**—लाल नेत्रोंवाले; २४१. **रक्तकरः**—लाल हाथोंवाले; २४२. **रक्ततात्वोष्ठपल्लवः**—रक्तवर्णके तालु और ओष्ठपल्लव धारण करनेवाले॥ ४३॥

श्वेतः श्वेताम्बरधरः श्वेतमाल्यविभूषणः।
श्वेतातपत्ररुचिरः श्वेतचामरवीजितः॥ ४४॥

२४३. **श्वेतः**—(विद्याकी कामना रखनेवाले साधकोंको भगवान् गणेशके श्वेत रूपका ध्यान करना चाहिये, इस दृष्टिसे श्वेत आदि पाँच नाम दिये जाते हैं—) श्वेतवर्ण; २४४. **श्वेताम्बरधरः**—श्वेत वस्त्रधारी; २४५. **श्वेतमाल्यविभूषणः**—श्वेत माला और आभूषण धारण करनेवाले; २४६. **श्वेतातपत्ररुचिरः**—श्वेतच्छत्र धारण करनेके कारण अत्यन्त सुन्दर दिखायी देनेवाले; २४७. **श्वेतचामरवीजितः**—श्वेत चँवर डुलाकर जिनकी सेवा की जाती है, वे॥ ४४॥

सर्वावयवसम्पूर्णसर्वलक्षणलक्षितः।
सर्वाभरणशोभाढ्यः सर्वशोभासमन्वितः॥ ४५॥

२४८. **सर्वावयवसम्पूर्णसर्वलक्षणलक्षितः**—सम्पूर्ण अंगोंमें सामुद्रिक

शास्त्रोक्त समस्त शुभ लक्षणोंसे परिपूर्ण दिखायी देनेवाले; २४९. **सर्वाभरणशोभाढ्यः**—सम्पूर्ण आभूषणोंकी शोभासे सम्पन्न; २५०. **सर्वशोभासमन्वितः**—लावण्य नामक सम्पूर्ण अंगकान्तिसे शोभायमान ॥ ४५ ॥

सर्वमङ्गलमङ्गल्यः सर्वकारणकारणम्।
सर्वदैककरः शार्ङ्गी बीजापूरी गदाधरः ॥ ४६ ॥

२५१. **सर्वमङ्गलमङ्गल्यः**—समस्त मंगलोंके लिये भी मंगलकारी; २५२. **सर्वकारणकारणम्**—सम्पूर्ण कारणोंके भी कारण; २५३. **सर्वदैककरः**—जिनका एकमात्र कर (शुण्ड-दण्ड) सब कुछ देनेवाला है, वे; २५४. **शार्ङ्गी**—शृंगनिर्मित धनुष धारण करनेवाले; (यहाँ 'शार्ङ्गी' आदि नामोंसे उनके दस आयुधोंको लक्षित कराया जाता है); २५५. **बीजापूरी**—बिजौरा नीबू या अनार धारण करनेवाले; २५६. **गदाधरः**—गदाधारी ॥ ४६ ॥

(शुक्लाङ्गो लोकसुखदः सुतन्तुस्तन्तुवर्धनः।
किरीटी कुण्डली हारी वनमाली शुभाङ्गदः* ॥)
इक्षुचापधरः शूली चक्रपाणिः सरोजभृत्।
पाशी धृतोत्पलः शालीमञ्जरीभृत्स्वदन्तभृत् ॥ ४७ ॥

२५७. **इक्षुचापधरः**—गन्नेका धनुष धारण करनेवाले; २५८. **शूली**—शूलधारी; २५९. **चक्रपाणिः**—हाथमें चक्र धारण करनेवाले; २६०. **सरोजभृत्**—कमलधारी; २६१. **पाशी**—पाशधारी; २६२. **धृतोत्पलः**—उत्पल धारण करनेवाले; २६३. **शालीमञ्जरीभृत्**—धानकी बाल धारण करनेवाले; २६४. **स्वदन्तभृत्**—एक हाथमें अपने दाँतको लिये रहनेवाले ॥ ४७ ॥

कल्पवल्लीधरो विश्वाभयदैककरो वशी।
अक्षमालाधरो ज्ञानमुद्रावान् मुद्गरायुधः ॥ ४८ ॥

२६५. **कल्पवल्लीधरः**—हाथमें कल्पलता ग्रहण करनेवाले; २६६.

---

* यह श्लोक श्रीभास्करायके खद्योतभाष्यमें नहीं पाया जाता है; अतः इसे श्लोकगणनामें नहीं लिया गया है। इसका अर्थ यों है—(क) शुक्लाङ्गः-गौर शरीरवाले; (ख) लोकसुखदः-लोगों या लोकोंको सुख देनेवाले; (ग) सुतन्तुः-सुन्दर तन्तु (सन्तति)-रूप; (घ) तन्तुवर्धनः-सन्तति-परम्पराकी वृद्धि करनेवाले; (ङ) किरीटी-किरीटधारी; (च) कुण्डली-कुण्डलधारी; (छ) हारी-हारसे विभूषित या मनोहर; (ज) वनमाली-वनमालाधारी; (झ) शुभाङ्गदः-सुन्दर बाजूबन्द धारण करनेवाले।

विश्वाभयदैककरः—जिनका मुख्य कर सम्पूर्ण विश्वसे अभयदान करनेवाला है; अथवा एक हाथमें 'अभय' नामक मुद्रा धारण करनेवाले; २६७. वशी—सम्पूर्ण विश्वको वशमें रखनेवाले; २६८. अक्षमालाधरः—अक्षमालाधारी; २६९. ज्ञानमुद्रावान्—ज्ञानकी मुद्रासे युक्त; २७०. मुद्गरायुधः—मुद्गर नामक शस्त्र धारण करनेवाले॥ ४८॥

पूर्णपात्री कम्बुधरो विधृतालिसमुद्गकः।
मातुलिङ्गधरश्चूतकलिकाभृत् कुठारवान्॥ ४९॥

२७१. **पूर्णपात्री**—पूर्णपात्रयुक्त यज्ञस्वरूप; अथवा अमृतसे भरे पात्रवाले; २७२. **कम्बुधरः**—शंखधारी; २७३. **विधृतालिसमुद्गकः**—मदजलसे आर्द्र गण्डस्थलपर मँडराते हुए भ्रमरसमूहसे युक्त; २७४. **मातुलिङ्गधरः**—बिजौरा नीबू लिये रहनेवाले; २७५. **चूतकलिकाभृत्**—आम्रमंजरी धारण करनेवाले; २७६. **कुठारवान्**—कुठारधारी॥ ४९॥

पुष्करस्थस्वर्णघटीपूर्णरत्नाभिवर्षकः।
भारतीसुन्दरीनाथो विनायकरतिप्रियः॥ ५०॥

२७७. **पुष्करस्थस्वर्णघटीपूर्णरत्नाभिवर्षकः**—शून्यमें गृहीत सुवर्णमय कलशसे पूर्ण रत्नोंकी वर्षा करनेवाले; २७८. **भारतीसुन्दरीनाथः**—सरस्वती, गौरी तथा लक्ष्मीके स्वामी ब्रह्मा, शिव और विष्णुरूप; २७९. **विनायकरतिप्रियः**—विनायक नामवाले अपने गणोंके साथ खेलनेमें रुचि रखनेवाले॥ ५०॥

महालक्ष्मीप्रियतमः सिद्धलक्ष्मीमनोरमः।
रमारमेशपूर्वाङ्गो दक्षिणोमामहेश्वरः॥ ५१॥

२८०. **महालक्ष्मीप्रियतमः**—महालक्ष्मीके प्रियतम (ये महालक्ष्मी विष्णुपत्नी लक्ष्मीसे भिन्न हैं; ये गणेशकी अपनी प्रिया बुद्धिरूपा हैं। सिद्धलक्ष्मी इनकी दूसरी पत्नी हैं); २८१. **सिद्धलक्ष्मीमनोरमः**—सिद्धलक्ष्मीके हृदयवल्लभ; २८२. **रमारमेशपूर्वाङ्गः**—आवरण-देवताओंमें रमा और रमापति (लक्ष्मी तथा विष्णु) गणेशजीके पूर्वभागमें (सम्मुख)

विराजमान होते हैं, इसलिये वे उक्त नामसे प्रसिद्ध हैं; २८३. दक्षिणोमामहेश्वरः—आवरण-देवताओंमें उमा और महेश्वरको अपने दक्षिणभागमें स्थापित करनेवाले॥ ५१॥

महीवराहवामाङ्गो रतिकन्दर्पपश्चिमः।
आमोदमोदजननः सप्रमोदप्रमोदनः॥ ५२॥

२८४. महीवराहवामाङ्गः—पृथ्वी और वराहभगवान्‌को अपने वामांग (उत्तर दिशा)-में रखनेवाले; २८५. रतिकन्दर्पपश्चिमः—रति और कामदेवको पीछे या पश्चिम दिशामें स्थापित करनेवाले; २८६. आमोदमोदजननः*—'आमोद'-को मोद प्रदान करनेवाले; २८७. सप्रमोदप्रमोदनः—'प्रमोद' को प्रमोद देनेवाले॥ ५२॥

समेधितसमृद्धिश्रीर्ऋद्धिसिद्धिप्रवर्तकः।
दत्तसौमुख्यसुमुखः कान्तिकंदलिताश्रयः॥ ५३॥

२८८. समेधितसमृद्धिश्रीः—समृद्धियुक्त श्रीको संवर्धित करनेवाले; २८९. ऋद्धिसिद्धिप्रवर्तकः—ऋद्धिदेवीमें स्थित सिद्धिके प्रवर्तक; २९०. दत्तसौमुख्यसुमुखः—सुमुखको सुमुखता प्रदान करनेवाले; २९१. कान्ति-कंदलिताश्रयः—कान्तिदेवीके आश्रय-स्थानको अंकुरित करनेवाले॥ ५३॥

मदनावत्याश्रिताङ्घ्रिः कृत्तदौर्मुख्यदुर्मुखः।
विघ्नसम्पल्लवोपघ्नः सेवोन्निद्रमदद्रवः॥ ५४॥

२९२. मदनावत्याश्रिताङ्घ्रिः—मदनावतीदेवीसे सेवित चरणवाले; २९३. कृत्तदौर्मुख्यदुर्मुखः—दुर्मुखकी दुर्मुखताको काट फेंकनेवाले; २९४. विघ्नसम्पल्लवोपघ्नः—विघ्नविस्तारके आश्रय; अथवा विघ्नविस्तारके निवारक; २९५. सेवोन्निद्रमदद्रवः—मदद्रवादेवी आलस्यरहित हो सदा जिनकी सेवामें जागरूक रहती हैं, वे॥ ५४॥

---

* यहाँ आवरणमें स्थित युगल देवी-देवोंका वर्णन प्रस्तुत है। ऋद्धि और आमोद ये एक दम्पति हैं, समृद्धि और प्रमोद द्वितीय दम्पति हैं, सुमुख और कान्ति तृतीय दम्पति हैं, दुर्मुख और मदनावती (मदद्रवा)—ये चतुर्थ दम्पति हैं एवं विघ्न (विघ्नकृत्) और द्राविणी—ये पंचम दम्पति हैं।

विघ्नकृन्निघ्नचरणो द्राविणीशक्तिसत्कृतः।
तीव्राप्रसन्ननयनो ज्वालिनीपालितैकदृक् ॥ ५५ ॥

२९६. **विघ्नकृन्निघ्नचरणः**—विघ्नकृत्ने भक्तिभावसे जिनके चरणोंको अपने अधीन करके रखा है, वे; २९७. **द्राविणीशक्तिसत्कृतः**—द्राविणी नामक शक्तिसे सम्मानित; २९८. **तीव्राप्रसन्ननयनः**—तीव्रा नामक शक्तिके प्रति जिनके नेत्र प्रसन्नतासे उत्फुल्ल रहते हैं, वे; २९९. **ज्वालिनीपालितैकदृक्**— जिनकी मुख्य दृष्टि ज्वालिनी-शक्तिके संरक्षणमें संलग्न है, वे॥ ५५॥

मोहिनीमोहनो भोगदायिनीकान्तिमण्डितः।
कामिनीकान्तवक्त्रश्रीरधिष्ठितवसुन्धरः ॥ ५६ ॥

३००. **मोहिनीमोहनः**—मोहिनी-शक्तिको भी मोहित करनेवाले; ३०१. **भोगदायिनीकान्तिमण्डितः**—भोगदायिनी-शक्तिकी कान्तिसे मण्डित चरणपादुकावाले; ३०२. **कामिनीकान्तवक्त्रश्रीः**—कामिनी या कामदायिनी नामक शक्तिके सुन्दर मुखकी शोभाके संवर्धक; ३०३. **अधिष्ठितवसुन्धरः**—वसुन्धरादेवीको अपने आधारपर प्रतिष्ठित करनेवाले॥ ५६॥

वसुन्धरामदोन्नद्धमहाशङ्खनिधिप्रभुः ।
नमद्वसुमतीमौलिमहापद्मनिधिप्रभुः ॥ ५७ ॥

३०४. **वसुन्धरामदोन्नद्धमहाशङ्खनिधिप्रभुः**—वसुन्धरा नामक पत्नीके साथ आनन्दमग्न रहनेवाले महाशंख नामक निधिके स्वामी; ३०५. **नमद्वसुमतीमौलिमहापद्मनिधिप्रभुः**—जिनके चरणोंमें वसुमती नामक पत्नी अपना मस्तक झुकाती है, उन महापद्म नामक निधिके अधिपति॥ ५७॥

सर्वसद्गुरुसंसेव्यः शोचिष्केशहृदाश्रयः।
ईशानमूर्धा देवेन्द्रशिखा पवननन्दनः ॥ ५८ ॥

३०६. **सर्वसद्गुरुसंसेव्यः**—समस्त सद्गुरुओंके द्वारा सम्यक्रूपसे आराधनीय; ३०७. **शोचिष्केशहृदाश्रयः**—गार्हपत्य आदि पाँच अग्नियोंके

हृदयमें ध्येयरूपसे विराजमान; ३०८. **ईशानमूर्धा**—भगवान् शंकरके माननीय; ३०९. **देवेन्द्रशिखा**—देवराज इन्द्रके आराध्य; ३१०. **पवननन्दनः**—वायुको आनन्दित करनेवाले; अथवा प्राणोंके भी प्राण॥ ५८॥

अग्रप्रत्यग्रनयनो दिव्यास्त्राणां प्रयोगवित्।
ऐरावतादिसर्वाशावारणावरणप्रियः ॥ ५९॥

३११. **अग्रप्रत्यग्रनयनः**—सूक्ष्म एवं नूतन दृष्टिवाले; ३१२. **दिव्यास्त्राणां प्रयोगवित्**—दिव्य-अस्त्रोंके प्रयोगको जाननेवाले; ३१३. **ऐरावतादिसर्वाशावारणावरणप्रियः**—खेल-खेलमें ऐरावत आदि सम्पूर्ण दिग्गजोंको ढँक लेना जिन्हें प्रिय लगता है, वे॥ ५९॥

वज्राद्यस्त्रपरीवारो गणचण्डसमाश्रयः।
जयाजयपरीवारो विजयाविजयावहः॥ ६०॥

३१४. **वज्राद्यस्त्रपरीवारः**—वज्र आदि अस्त्रों तथा इन्द्र आदि दिक्पालोंसे आवृत; ३१५. **गणचण्डसमाश्रयः**—चण्ड आदि गणोंके आश्रय; अथवा गणोंमें जो प्रचण्ड हैं, उनको भी बल या आश्रय देनेवाले; (इसके बाद आठ नामोंद्वारा प्राणशक्तियोंसे गणेशजीकी अभिन्नता बताते हैं। वे शक्तियाँ नौ हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं—जया, विजया, अजया, अपराजिता, नित्या, विलासिनी, शौण्डी, अनन्ता और मंगला। ये सब पीठ-शक्तियाँ हैं।) ३१६. **जयाजयपरीवारः**—जया और अजयासे घिरे हुए; ३१७. **विजयाविजयावहः**—विजयाको विजय देनेवाले॥ ६०॥

अजितार्चितपादाब्जो नित्यानित्यावतंसितः।
विलासिनीकृतोल्लासः शौण्डीसौन्दर्यमण्डितः॥ ६१॥

३१८. **अजितार्चितपादाब्जः**—अपराजिताशक्तिसे पूजित चरणारविन्दवाले; ३१९. **नित्यानित्यावतंसितः**—नित्याशक्तिने जिनके चरणोंको नित्य अपना शिरोभूषण बना रखा है, वे; ३२०. **विलासिनीकृतोल्लासः**—विलासिनीकी सेवासे उल्लसित होनेवाले; ३२१. **शौण्डीसौन्दर्यमण्डितः**—शौण्डीनामक शक्तिके सौन्दर्यसे मण्डित॥ ६१॥

अनन्तानन्तसुखदः सुमङ्गलसुमङ्गलः।
इच्छाशक्तिज्ञानशक्तिक्रियाशक्तिनिषेवितः ॥ ६२ ॥

३२२. **अनन्तानन्तसुखदः**—अनन्ता नामक शक्तिको अनन्त सुख देनेवाले; ३२३. **सुमङ्गलसुमङ्गलः**—जिस पीठपर मंगला नामक शक्ति विद्यमान है, उसका नाम 'सुमंगल' है। ऐसा सुमंगल-पीठ जिनके कारण परम मंगलमय होता है, वे गणेशजी 'सुमंगलके सुमंगल' हैं; ३२४. **इच्छाशक्तिज्ञानशक्तिक्रियाशक्तिनिषेवितः**—इच्छाशक्ति, ज्ञानशक्ति तथा क्रियाशक्तिसे सेवित ॥ ६२ ॥

सुभगासंश्रितपदो ललिताललिताश्रयः।
कामिनीकामनः काममालिनीकेलिलालितः ॥ ६३ ॥

३२५. **सुभगासंश्रितपदः**—सुभगादेवीके द्वारा सेवित चरणकमलवाले; ३२६. **ललितालललिताश्रयः**—ललितादेवीके मनोरम आश्रय; ३२७. **कामिनीकामनः**—कामिनी या कामकला नामक शक्तिकी कामना रखनेवाले; ३२८. **काममालिनीकेलिलालितः**—कामेशी अथवा काममालिनी नामक शक्तिकी क्रीडाओंद्वारा प्रसन्न किये गये ॥ ६३ ॥

सरस्वत्याश्रयो गौरीनन्दनः श्रीनिकेतनः।
गुरुगुप्तपदो वाचासिद्धो वागीश्वरीपतिः ॥ ६४ ॥

३२९. **सरस्वत्याश्रयः**—सरस्वती (वाग्देवता)-के आश्रय; ३३०. **गौरीनन्दनः**—पार्वतीदेवीको आनन्द प्रदान करनेवाले; ३३१. **श्रीनिकेतनः**—लक्ष्मी या शोभाके आगार; ३३२. **गुरुगुप्तपदः**—गणक्रीड आदि गुरुओंद्वारा गोपित पदवाले; ३३३. **वाचासिद्धः**—जिनकी भक्तिसे वाक्-सिद्धि प्राप्त होती है, वे; ३३४. **वागीश्वरीपतिः**—वागीश्वरी अर्थात् नकुली नामक शक्तिके प्रियतम ॥ ६४ ॥

नलिनीकामुको वामारामो ज्येष्ठामनोरमः।
रौद्रीमुद्रितपादाब्जो हुम्बीजस्तुङ्गशक्तिकः ॥ ६५ ॥

३३५. **नलिनीकामुकः**—नलिनी अर्थात् सुरापगा नामक शक्तिके

प्राणवल्लभः; ३३६. वामारामः—वामा नामक शक्ति जिनकी रामा अर्थात् प्रिया है, वे; ३३७. ज्येष्ठामनोरमः—ज्येष्ठा नामक शक्ति जिनकी मनोरमा है, वे; ३३८. रौद्रीमुद्रितपादाब्जः—रौद्री नामक शक्ति जिनके चरणारविन्दोंको अपनी अंजलिमें बाँध रखती है, वे; ३३९. हुम्बीजः—'वक्रतुण्डाय हुम्'—इस षडक्षर मन्त्रका अन्तिम वर्ण जो 'हुम्' है, वही समस्त पुरुषार्थोंका बीज (कारण) है; अतएव भगवान् गणपति 'हुं बीज' नामसे प्रसिद्ध हैं; ३४०. तुङ्गशक्तिकः—उच्चशक्तिसे सम्पन्न; अथवा वक्रतुण्ड-मन्त्रमें जो 'हुम्' बीज है, वही उक्त गणेश-मन्त्रकी शक्ति है। इसलिये वे उक्त नामसे प्रसिद्ध हैं॥ ६५॥

विश्वादिजननत्राणः स्वाहाशक्तिः सकीलकः।
अमृताब्धिकृतावासो मदघूर्णितलोचनः॥ ६६॥

३४१. विश्वादिजननत्राणः—विश्वके आदिभूत हिरण्यगर्भके जन्म और पालन जिनसे होते हैं, वे; ३४२. स्वाहाशक्तिः—'स्वाहा' जिनकी शक्ति है, वे; ३४३. सकीलकः—कीलकयुक्त; ३४४. अमृताब्धिकृतावासः—सुधासिन्धुमें निवास करनेवाले; ३४५. मदघूर्णितलोचनः—सुधापानके मदसे अथवा गण्डस्थलसे झरते हुए मदसे घूरते हुए नेत्रवाले॥ ६६॥

उच्छिष्टगण उच्छिष्टगणेशो गणनायकः।
सार्वकालिकसंसिद्धिर्नित्यशैवो दिगम्बरः॥ ६७॥

३४६. उच्छिष्टगणः—उत्कृष्ट और शिष्ट गणोंके स्वामी; ३४७. उच्छिष्टगणेशः—(उच्छिष्टं नामरूपं च) इत्यादि अथर्ववेदीय मन्त्रोंके समूहसे प्रतिपाद्य ईश्वर; अथवा सतत मोदक-भक्षणके कारण उक्त नामसे प्रसिद्ध श्रीगणेश; ३४८. गणनायकः—जिनके गणोंकी गणना भक्तोंद्वारा होती रहती है, वे; ३४९. सार्वकालिकसंसिद्धिः—जिनकी सिद्धियाँ सब समय बनी रहती हैं, वे; ३५०. नित्यशैवः—सदा शिवका चिन्तन करनेवाले; ३५१. दिगम्बरः—दिशाओंको ही वस्त्र बनानेवाले॥ ६७॥

अनपायोऽनन्तदृष्टिरप्रमेयोऽजरामरः ।
अनाविलोऽप्रतिरथो ह्यच्युतोऽमृतमक्षरम् ॥ ६८ ॥

३५२. **अनपायः**—अविनाशी; ३५३. **अनन्तदृष्टिः**—असीम ज्ञानशक्तिसे सम्पन्न; ३५४. **अप्रमेयः**—वाणी, मन एवं ज्ञानेन्द्रियोंसे अगम्य होनेके कारण प्रमाणातीत; ३५५. **अजरामरः**—जरा और मृत्युसे रहित; ३५६. **अनाविलः**—कालुष्यरहित; ३५७. **अप्रतिरथः**—प्रतिद्वन्द्वीसे शून्य; ३५८. **अच्युतः**—मर्यादासे कभी च्युत न होनेवाले; अथवा श्रीकृष्णसे अभिन्न; ३५९. **अमृतम्**—अमृत या मोक्षस्वरूप; ३६०. **अक्षरम्**—व्यापक अथवा अक्षय ॥ ६८ ॥

अप्रतर्क्योऽक्षयोऽजय्योऽनाधारोऽनामयोऽमलः ।
अमोघसिद्धिरद्वैतमघोरोऽप्रमितानन: ॥ ६९ ॥

३६१. **अप्रतर्क्यः**—जिसका वेदोंके द्वारा अनुमोदन न हो, ऐसे तर्कसे अगम्य; ३६२. **अक्षयः**—क्षयरहित; ३६३. **अजय्यः**—जिन्हें जीता न जा सके, ऐसे; ३६४. **अनाधारः**—स्वयं सबके आधार होनेके कारण अपने लिये आधारसे रहित; ३६५. **अनामयः**—रोगरहित; ३६६. **अमलः**—मलिनतासे शून्य; ३६७. **अमोघसिद्धिः**—अमोघ (अव्यर्थ) सिद्धिवाले; ३६८. **अद्वैतम्**—द्वैत-प्रपंचसे रहित; ३६९. **अघोरः**—शिवरूप; ३७०. **अप्रमिताननः**—असंख्य मुखवाले ॥ ६९ ॥

अनाकारोऽब्धिभूम्यग्निबलघ्नोऽव्यक्तलक्षणः ।
आधारपीठ आधार आधाराधेयवर्जितः ॥ ७० ॥

३७१. **अनाकारः**—निराकार परमात्मा; ३७२. **अब्धि-भूम्यग्निबलघ्नः**—जलधि या जलकी शक्ति क्लेदन, भूमिकी शक्ति स्तम्भन तथा अग्निकी शक्ति दहनका जिनपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, वे भूमि, जल और अग्निकी शक्तिको प्रतिहत कर देनेवाले; ३७३. **अव्यक्तलक्षणः**—बहिर्मुख मानवोंकी बुद्धिमें जिनके स्वरूप-लक्षण तथा तटस्थ-लक्षणकी अभिव्यक्ति नहीं होती, वे; ३७४. **आधारपीठः**—

पृथ्वीसे लेकर शिवपर्यन्त छत्तीस आधारभूत तत्त्वोंके भी आश्रय; **३७५. आधारः**—अ—विष्णु तथा आ—ब्रह्माको भी धारण करनेवाले; **३७६. आधाराधेयवर्जितः**—आधार-आधेय-भावसे रहित, अद्वैतस्वरूप॥ ७०॥

आखुकेतन आशापूरक आखुमहारथः।
इक्षुसागरमध्यस्थ इक्षुभक्षणलालसः॥ ७१॥

३७७. **आखुकेतनः**—मूषकचिह्नसे युक्त ध्वजवाले; **३७८. आशापूरकः**—सर्वव्यापी होनेसे दिशाओंके पूरक अथवा सबकी आशा पूर्ण करनेवाले; **३७९. आखुमहारथः**—मूषकरूपी महान् रथ (वाहन)-से युक्त; **३८०. इक्षुसागरमध्यस्थः**—ईखके रसके सागरमें विराजमान; **३८१. इक्षुभक्षणलालसः**—ईख खानेकी इच्छा रखनेवाले॥ ७१॥

इक्षुचापातिरेकश्रीरिक्षुचापनिषेवितः ।
इन्द्रगोपसमानश्रीरिन्द्रनीलसमद्युतिः ॥ ७२॥

३८२. **इक्षुचापातिरेकश्रीः**—इक्षुधन्वा (कामदेव)-से भी अधिक सौन्दर्य-श्रीसे सम्पन्न; **३८३. इक्षुचापनिषेवितः**— इक्षुमय चापकी अधिष्ठात्री देवी अथवा कामदेवसे सेवित; **३८४. इन्द्रगोपसमानश्रीः**—इन्द्रगोप (बीरबहूटी नामक कीट)- के समान अरुण कान्तिवाले; **३८५. इन्द्रनीलसमद्युतिः** *—इन्द्रनीलमणिके समान श्याम-कान्तिवाले॥ ७२॥

इन्दीवरदलश्याम इन्दुमण्डलनिर्मलः।
इध्मप्रिय इडाभाग इराधामेन्दिराप्रियः॥ ७३॥

३८६. **इन्दीवरदलश्यामः**—नीलकमलके समान श्याम; **३८७. इन्दुमण्डलनिर्मलः**—चन्द्रमण्डलके समान गौर कान्तिवाले; **३८८. इध्मप्रियः**—अग्निस्वरूपसे काष्ठ या ईंधनके प्रेमी; **३८९. इडाभागः**—ऋत्विक् और यजमान आदिके रूपमें यज्ञकर्ममें भाग लेनेवाले; **३९०. इराधामा**—पृथ्वीमें अन्तर्यामी-रूपसे अवस्थित; **३९१. इन्दिराप्रियः**—लक्ष्मीद्वारा पूज्य; अथवा विष्णुरूपसे लक्ष्मीके प्रियतम॥ ७३॥

---

* कामनाभेदसे भिन्न रूप-रंगमें गणेशजीका ध्यान होता है। अथवा भिन्न-भिन्न युगोंमें अवतार लेकर वे अरुण एवं श्याम-कान्ति धारण करते हैं। (खद्योत भाष्य)

इक्ष्वाकुविघ्नविध्वंसी इतिकर्तव्यतेप्सितः।
ईशानमौलिरीशान ईशानसुत ईतिहा ॥ ७४ ॥

३९२. **इक्ष्वाकुविघ्नविध्वंसी**—राजा इक्ष्वाकुके विघ्नका नाश करनेवाले; ३९३. **इतिकर्तव्यतेप्सितः**—इतिकर्तव्यता (क्रतुकी अंगभूत सामग्री)-की अपेक्षा रखकर यजमानकी मनोवांछा पूर्ण करनेवाले; ३९४. **ईशानमौलिः**—नरेश, भूतेश और सुरेश आदि ईशानों (ईश्वरों)-के शिरोमणि; ३९५. **ईशानः**—ईशोंको जीवन देनेवाले; ३९६. **ईशानसुतः**—ईश्वरपुत्र; ३९७. **ईतिहा**—अतिवृष्टि, अनावृष्टि, मूषकजनित उपद्रव, शलभ, शुक आदि पक्षी, स्वमण्डल तथा परमण्डल—इन सबसे प्राप्त होनेवाले भयको 'ईति-भीति' कहते हैं; उस 'ईति-भीति' के नाशक ॥ ७४ ॥

ईषणात्रयकल्पान्त ईहामात्रविवर्जितः।
उपेन्द्र उडुभृन्मौलिरुण्डेरकबलिप्रियः ॥ ७५ ॥

३९८. **ईषणात्रयकल्पान्तः**—लोकैषणा, पुत्रैषणा और वित्तैषणा—इन त्रिविध एषणाओंके लिये प्रलयंकर; अथवा वैराग्यदायक; ३९९. **ईहामात्रविवर्जितः**—चेष्टामात्रसे शून्य; चित्स्वरूप; ४००. **उपेन्द्रः**—कश्यप और अदितिके यहाँ अवतीर्ण महोत्कट विनायक; अथवा वामनसे अभिन्न; ४०१. **उडुभृन्मौलिः**—नक्षत्र-पालक चन्द्रमाको भालदेशमें धारण करनेवाले; ४०२. **उण्डेरकबलिप्रियः**—गोल-गोल मिष्टान्नके उपहारको प्रिय माननेवाले ॥ ७५ ॥

उन्नतानन उत्तुङ्ग उदारत्रिदशाग्रणीः।
ऊर्जस्वानूष्मलमद ऊहापोहदुरासदः ॥ ७६ ॥

४०३. **उन्नताननः**—उत्कृष्ट ब्रह्मा आदि देवोंको प्राणवान् करनेवाले; ४०४. **उत्तुङ्गः**—वराहरूपधारी भगवान्‌की दाढ़से तुंगा—नामवाली एक नदी प्रकट हुई, जिससे वे भगवान् 'उत्तुंग' कहलाये। उनसे अभिन्न होनेके कारण गणेशजीका भी नाम 'उत्तुंग' है; ४०५. **उदारत्रिदशाग्रणीः**—उदार देवताओंमें श्रेष्ठ; ४०६. **ऊर्जस्वान्**—तेजस्वी; ४०७. **ऊष्मलमदः**—

गण्डस्थलसे गर्म-गर्म मदजल बहानेवाले; **४०८. ऊहापोहदुरासदः**—ऊह (वितर्क) और अपोह (उसके बाध)-से दुष्प्राप्य ॥ ७६ ॥

ऋग्यजुस्सामसम्भूतिर्ऋद्धिसिद्धिप्रवर्तकः ।
ऋजुचित्तैकसुलभ ऋणत्रयविमोचकः ॥ ७७ ॥

४०९. ऋग्यजुस्सामसम्भूतिः—अपने निःश्वाससे ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा सामवेदको प्रकट करनेवाले; **४१०. ऋद्धिसिद्धिप्रवर्तकः**—राज्य-सम्पत्ति तथा अणिमा आदि सम्पत्तियोंको देनेवाले; **४११. ऋजुचित्तैक-सुलभः**—एकमात्र सरलचित्त—निर्मल मनसे ही सुलभ होनेवाले; **४१२. ऋणत्रयविमोचकः**—देव-ऋण, ऋषि-ऋण और पितृ-ऋण—इन तीनोंसे छुटकारा दिलानेवाले ॥ ७७ ॥

लुप्तविघ्नः स्वभक्तानां लुप्तशक्तिः सुरद्विषाम् ।
लुप्तश्रीर्विमुखार्चानां लूताविस्फोटनाशनः ॥ ७८ ॥

४१३. स्वभक्तानां लुप्तविघ्नः—अपने भक्तजनोंका विघ्न नष्ट करनेवाले; **४१४. सुरद्विषां लुप्तशक्तिः**—देवद्रोही दैत्योंकी शक्ति नष्ट करनेवाले; **४१५. विमुखार्चानां लुप्तश्रीः**—अपनी पूजासे विमुख या विरुद्ध रहनेवालोंकी धन-सम्पत्तिका नाश करनेवाले; **४१६. लूताविस्फोट-नाशनः**—मकड़ी और फोड़े-फुंसी आदि रोगोंका नाश करनेवाले ॥ ७८ ॥

एकारपीठमध्यस्थ एकपादकृतासनः ।
एजिताखिलदैत्यश्रीरेधिताखिलसंश्रयः ॥ ७९ ॥

४१७. एकारपीठमध्यस्थः—त्रिकोणचक्रके मध्यभागमें विराजमान; **४१८. एकपादकृतासनः**—काशीमें एक पैरसे खड़े रहनेवाले; **४१९. एजिताखिलदैत्यश्रीः**—समस्त असुरोंकी राज्य-लक्ष्मीको कम्पित कर देनेवाले; **४२०. एधिताखिलसंश्रयः**—अपनी शरण लेनेवाले भक्तोंकी श्रीवृद्धि करनेवाले ॥ ७९ ॥

ऐश्वर्यनिधिरैश्वर्यमैहिकामुष्मिकप्रदः ।
ऐरम्मदसमोन्मेष ऐरावतनिभाननः ॥ ८० ॥

४२१. ऐश्वर्यनिधिः—ऐश्वर्यके आधार अथवा भक्तोंके यहाँ

ऐश्वर्य स्थापित करनेवाले; **४२२. ऐश्वर्यम्**—ईश्वरकोटिके पुरुषोंमें ऐश्वर्यरूपा अणिमा आदि विभूतिरूप; **४२३. ऐहिकामुष्मिकप्रदः**—लौकिक और पारलौकिक सुख देनेवाले; **४२४. ऐरम्मदसमोन्मेषः**—जिनकी दृष्टिका उन्मेष (खोलना) विद्युत्के समान प्रकाशमान है, वे; **४२५. ऐरावतनिभाननः**—ऐरावत हाथीके समान मुखवाले॥ ८०॥

ओंकारवाच्य ओंकार ओजस्वानोषधीपतिः।
औदार्यनिधिरौद्धत्यधुर्य औन्नत्यनिस्स्वनः॥ ८१॥

४२६. ओंकारवाच्यः—ओंकार अर्थात् प्रणवके वाच्यार्थरूप; **४२७. ओंकारः**—ओंकार-नामवाले; **४२८. ओजस्वान्**—शौर्य और उत्कर्षके कारणभूत तेजसे सम्पन्न; **४२९. ओषधीपतिः**—ओषधियोंके स्वामी चन्द्रमारूप; **४३०. औदार्यनिधिः**—उदारताके सिन्धु; **४३१. औद्धत्यधुर्यः**—अपने भक्तोंपर कृपा करनेके लिये उनके सामने अपना उत्कर्ष प्रकट करनेमें श्रेष्ठ; **४३२. औन्नत्यनिस्स्वनः**—सबकी अपेक्षा उच्चस्वरसे गर्जना करनेवाले॥ ८१॥

अङ्कुशः सुरनागानामङ्कुशः सुरविद्विषाम्।
अः समस्तविसर्गान्तपदेषु परिकीर्तितः॥ ८२॥

४३३. सुरनागानामङ्कुशः—देवलोक, मर्त्यलोक और पाताललोक—तीनोंको अपने नियन्त्रणमें रखनेवाले; **४३४. सुरविद्विषामङ्कुशः**—देवताओं और विद्वानोंके द्वेषियोंको दण्डित करनेवाले; **४३५. समस्तविसर्गान्तपदेषु परिकीर्तितः अः**—'अ' से लेकर 'क्ष' पर्यन्त जो ५१ अक्षर हैं, उनके अन्तमें विसर्ग लगानेपर जिसका उच्चारण होता है, वह 'अः' गणेशजीका एक नाम है॥ ८२॥

कमण्डलुधरः कल्पः कपर्दी कलभाननः।
कर्मसाक्षी कर्मकर्ता कर्माकर्मफलप्रदः॥ ८३॥

४३६. कमण्डलुधरः—कमण्डलु धारण करनेवाले; अथवा सूँड़से अमृतकलश धारण करनेवाले; **४३७. कल्पः**—प्रलयकालस्वरूप; अथवा

निर्माणमें समर्थ; ४३८. **कपर्दी**—कौड़ी अथवा जटाजूट धारण करनेवाले; ४३९. **कलभाननः**—नाद, कान्ति और प्राणनशक्तिसे सम्पन्न; ४४०. **कर्मसाक्षी**—अदृष्ट कर्मोंके भी साक्षी; ४४१. **कर्मकर्ता**—कर्मठ पुरुषोंके अन्तःप्रेरक होनेके कारण स्वयं ही कर्म करनेवाले; ४४२. **कर्माकर्मफलप्रदः**—स्वर्ग और मोक्षरूप फल देनेवाले॥ ८३॥

कदम्बगोलकाकारः कूष्माण्डगणनायकः।
कारुण्यदेहः कपिलः कथकः कटिसूत्रभृत्॥ ८४॥

४४३. **कदम्बगोलकाकारः**—समस्त नाड़ियोंका जो उद्गम-स्थान है, वहाँ कदम्ब-पुष्पके समान गोल आकारका कोई देवता है, जो गणेशजीसे अभिन्न है; ४४४. **कूष्माण्डगणनायकः**—दुष्ट ग्रहोंके नायक अर्थात् उन्हें नियन्त्रणमें रखनेवाले; ४४५. **कारुण्यदेहः**—करुणामूर्ति; ४४६. **कपिलः**-कपिलमुनिस्वरूप; ४४७. **कथकः**—सम्प्रदायप्रवर्तक; ४४८. **कटिसूत्रभृत्**—कांची धारण करनेवाले॥ ८४॥

खर्वः खड्गप्रियः खड्गखान्तान्तस्थः खनिर्मलः।
खल्वाटशृङ्गनिलयः खट्वाङ्गी खदुरासदः॥ ८५॥

४४९. **खर्वः**—वामनरूप; ४५०. **खड्गप्रियः**—खड्ग (तलवार या गैंड़ा) जिन्हें प्रिय है; ४५१. **खड्गखान्तान्तस्थः**—खड्ग-शब्दगत खकारसे परे जो डकार है, उससे परे जो गकार है, वह गणेशजीका बीजाक्षर है, उसमें विद्यमान; ४५२. **खनिर्मलः**—आकाशकी भाँति सर्वगत होते हुए निर्लिप्त; ४५३. **खल्वाटशृङ्गनिलयः**—वृक्षविहीन पर्वतके शिखरपर निवास करनेवाले; ४५४. **खट्वाङ्गी**—खट्वांग नामसे प्रसिद्ध अस्त्र धारण करनेवाले; ४५५. **खदुरासदः**—आकाशकी भाँति पकड़में न आ सकनेवाले॥ ८५॥

गुणाढ्यो गहनो गस्थो गद्यपद्यसुधार्णवः।
गद्यगानप्रियो गर्जो गीतगीर्वाणपूर्वजः॥ ८६॥

४५६. **गुणाढ्यः**—अनन्त कल्याणमय गुणगणसे सम्पन्न; ४५७.

गहनः—जहाँ जाना या पहुँचना सम्भव न हो सके, वे; ४५८. गस्थः—अपने बीजस्वरूप गकारमें स्थित; ४५९. गद्यपद्यसुधार्णवः—गद्य-पद्यमें काव्यरसामृतके सागर; ४६०. गद्यगानप्रियः—गद्य-सामगानके प्रेमी; ४६१. गर्जः—मेघगर्जनस्वरूप; ४६२. गीतगीर्वाणपूर्वजः—नादसे गीत आदि शब्द प्रकट हुए हैं और नादके अर्थसे देवता आदि; अतः नाद और नादार्थस्वरूप होनेके कारण गीत और देवताओंके पूर्वज ॥ ८६ ॥

गुह्याचाररतो गुह्यो गुह्यागमनिरूपितः ।
गुहाशयो गुहाब्धिस्थो गुरुगम्यो गुरोर्गुरुः ॥ ८७ ॥

४६३. **गुह्याचाररतः**—हृदयगुहामें प्रविष्ट जीवात्मा और परमात्माके चिन्तनमें लगे हुए अन्तर्मुख साधकपर संतुष्ट रहनेवाले; ४६४. **गुह्यः**—एकान्तमें जाननेयोग्य; अथवा गुह—कार्तिकेयके हितकारी; ४६५. **गुह्यागमनिरूपितः**—गुह्य अर्थात् एकान्तवेद्य होनेके कारण 'गुह्यागमनिरूपित' के नामसे प्रसिद्ध; ४६६. **गुहाशयः**—हृदयगुहामें शयन करनेवाले अन्तर्यामी पुरुष; ४६७. **गुहाब्धिस्थः**—अव्याकृत आकाश गूढ़ और अगाध होनेके कारण गुहाब्धिके तुल्य है, उसमें विराजमान; ४६८. **गुरुगम्यः**—गुरुके बताये हुए योग या उपायसे प्राप्तव्य; ४६९. **गुरोर्गुरुः**—ब्रह्मा आदिको भी वेदका ज्ञान देनेवाले होनेके कारण गुरुके भी गुरु ॥ ८७ ॥

घण्टाघर्घरिकामाली घटकुम्भो घटोदरः ।
(ङकारवाच्यो ङकारो ङकाराकारशुण्डभृत् ॥*)
चण्डश्चण्डेश्वरसुहृच्चण्डीशश्चण्डविक्रमः ॥ ८८ ॥

४७०. **घण्टाघर्घरिकामाली**—घण्टाकी तरह मनोहर शब्द करनेवाली किंकिणीको 'घर्घरिका' कहते हैं। बालोचित क्रीड़ाके समय उसकी माला धारण करनेवाले; ४७१. **घटकुम्भः**—उलटे रखे हुए दो घड़ोंके समान

* १-ङकारवाच्यः—ङकारके वाच्यार्थस्वरूप; २-ङकारः—ङकार अक्षररूप; ३-ङकाराकारशुण्डभृत्—'ङ' के आकारकी सूँड़ धारण करनेवाले।

दो कुम्भस्थलवाले; ४७२. **घटोदरः**—घटके समान विशाल उदरवाले; ४७३. **चण्डः**—प्रचण्ड पराक्रमी; ४७४. **चण्डेश्वरसुहृत्**—शिव-पार्षद चण्डेश्वरके सखा; ४७५. **चण्डीशः**—चण्डीनाथ शिव; ४७६. **चण्डविक्रमः**—अत्यन्त क्रोधशील दुष्टोंपर आक्रमण करके उन्हें वशमें करनेवाले॥ ८८॥

चराचरपतिश्चिन्तामणिचर्वणलालसः ।
छन्दश्छन्दोवपुश्छन्दोदुर्लक्ष्यश्छन्दविग्रहः ॥ ८९॥

४७७. **चराचरपतिः**—स्थावर-जंगम जगत्‌के स्वामी; ४७८. **चिन्तामणिचर्वणलालसः**—अपनी अतिशय उदारताके कारण चिन्तामणि, कामधेनु और कल्पवृक्षके गर्वको चूर्ण करनेकी लालसावाले; ४७९. **छन्दः**—गायत्री आदि छन्दःस्वरूप; ४८०. **छन्दोवपुः**—छन्दोमय शरीरवाले; ४८१. **छन्दोदुर्लक्ष्यः**—वेदसे भी कठिनतापूर्वक लक्षित होनेवाले; ४८२. **छन्दविग्रहः**—अपनी इच्छाके अनुसार या भक्तोंकी भावनाके अनुकूल अवतार-शरीर धारण करनेवाले॥ ८९॥

जगद्योनिर्जगत्साक्षी जगदीशो जगन्मयः ।
जपो जपपरो जप्यो जिह्वासिंहासनप्रभुः ॥ ९०॥

४८३. **जगद्योनिः**—जगत्‌के कारण; ४८४. **जगत्साक्षी**—जगत्‌के साक्षी या द्रष्टा; ४८५. **जगदीशः**—जगत्‌के स्वामी या रक्षक; ४८६. **जगन्मयः**—जगत्स्वरूप या जगत्‌के अधिष्ठान; ४८७. **जपः**—जपकर्मरूप; ४८८. **जपपरः**—जपकर्ता; ४८९. **जप्यः**—जपनीय मन्त्ररूप; ४९०. **जिह्वासिंहासनप्रभुः**—जिनके नाम-कीर्तनके समय जो भक्तकी जिह्वारूपी सिंहासनपर विराजमान रहते हैं, वे॥ ९०॥

झलज्झलोल्लसद्दानझङ्कारिभ्रमराकुलः ।
टंकारस्फारसंरावष्टंकारिमणिनूपुरः ॥ ९१॥

४९१. **झलज्झलोल्लसद्दानझङ्कारिभ्रमराकुलः**—कानोंके हिलानेसे उड़-उड़कर मदजलके आस-पास झंकार-रव करनेवाले भ्रमरोंसे व्याप्त;

४९२. टंकारस्फारसंराव:—काँसेकी घंटी या थालीके बजनेसे होनेवाले रण-रणनात्मक रवके समान जिनके आभूषणकी झनकार होती है, वे; **४९३. टंकारिमणिनूपुर:**—बजते हुए रत्नमय पादकटककी ध्वनि फैलानेवाले ॥ ९१ ॥

ठद्वयीपल्लवान्तःस्थसर्वमन्त्रैकसिद्धिदः ।
डिण्डिमुण्डो डाकिनीशो डामरो डिण्डिमप्रियः ॥ ९२ ॥

४९४. ठद्वयीपल्लवान्तःस्थसर्वमन्त्रैकसिद्धिद:—सम्पूर्ण स्वाहान्त मन्त्रोंके एकमात्र सिद्धिदाता; **४९५. डिण्डिमुण्ड:**—उलटकर रखे हुए नगाड़ेके समान कुम्भस्थलवाले; **४९६. डाकिनीश:**—योगिनियोंके ईश्वर; **४९७. डामर:**—डामर नामक तन्त्रस्वरूप; **४९८. डिण्डिमप्रिय:**—डिण्डिम-घोष या दुन्दुभिकी ध्वनिसे प्रसन्न होनेवाले ॥ ९२ ॥

ढक्कानिनादमुदितो ढौको ढुण्ढिविनायकः ।
तत्त्वानां परमं तत्त्वं तत्त्वंपदनिरूपितः ॥ ९३ ॥

४९९. ढक्कानिनादमुदित:—पटहध्वनिसे प्रसन्न; **५००. ढौक:**—सर्वगत; अथवा सर्वज्ञ; **५०१. ढुण्ढिविनायक:**—विशिष्ट नायकके रूपमें अन्वेषणीय; **५०२. तत्त्वानां परमं तत्त्वम्**—तत्त्वोंमें परम (छब्बीसवें) तत्त्वरूप; **५०३. तत्त्वंपदनिरूपित:**—'तत्-पदार्थ' और 'त्वम्-पदार्थ' की एकताद्वारा निरूपित ॥ ९३ ॥

तारकान्तरसंस्थानस्तारकस्तारकान्तकः ।
स्थाणुः स्थाणुप्रियः स्थाता स्थावरं जङ्गमं जगत् ॥ ९४ ॥

५०४. तारकान्तरसंस्थान:—आँखकी पुतलीमें चिन्तन करनेयोग्य; **५०५. तारक:**—प्रणवकी भाँति भवसागरसे पार करनेवाले; **५०६. तारकान्तक:**—तारकासुरका संहार करनेवाले; **५०७. स्थाणु:**—सुस्थिर; सर्वथा अकम्पित; **५०८. स्थाणुप्रिय:**—शिवके प्रिय पुत्र; **५०९. स्थाता**—युद्धमें दृढ़तापूर्वक डटे रहनेवाले; **५१०. स्थावरं जङ्गमं जगत्**—चराचर जगत्स्वरूप ॥ ९४ ॥

दक्षयज्ञप्रमथनो दाता दानवमोहनः।
दयावान् दिव्यविभवो दण्डभृद्दण्डनायकः॥ ९५॥

५११. **दक्षयज्ञप्रमथनः**—दक्ष प्रजापतिके यज्ञका विध्वंस करनेवाले शिवरूप; ५१२. **दाता**—दानी अथवा शोधक*—पतितपावन; ५१३. **दानवमोहनः**—दानवोंको मोहित (तत्त्वविमुख) करनेवाले; ५१४. **दयावान्**—दयालु; ५१५. **दिव्यविभवः**—लक्ष्मीकी प्राप्ति करानेवाले; अथवा दिव्य वैभवसे सम्पन्न; ५१६. **दण्डभृत्**—दण्डनीतिके पालक; ५१७. **दण्डनायकः**—दण्डके प्रवर्तक॥ ९५॥

दन्तप्रभिन्नाभ्रमालो दैत्यवारणदारणः।
दंष्ट्रालग्नद्विपघटो देवार्थनृगजाकृतिः॥ ९६॥

५१८. **दन्तप्रभिन्नाभ्रमालः**—सिर हिलानेमात्रसे दन्ताघातके द्वारा बादलोंकी पंक्तिको छिन्न-भिन्न कर देनेवाले; ५१९. **दैत्यवारणदारणः**—दैत्योंको रोकने और विदीर्ण करनेवाले; ५२०. **दंष्ट्रालग्नद्विपघटः**—जिनके दाढ़के एक देशमें भी शत्रुओंके हाथियोंका समुदाय संलग्न है, ऐसे; ५२१. **देवार्थनृगजाकृतिः**—देवताओंका कार्य सिद्ध करनेके लिये मनुष्य और हाथीकी आकृति स्वीकार करनेवाले॥ ९६॥

धनधान्यपतिर्धन्यो धनदो धरणीधरः।
ध्यानैकप्रकटो ध्येयो ध्यानं ध्यानपरायणः॥ ९७॥

५२२. **धनधान्यपतिः**—धन और धान्यके स्वामी तथा दाता; ५२३. **धन्यः**—धनसे सम्पन्न एवं पुण्यवान्; ५२४. **धनदः**—धनके दाता; अथवा कुबेरस्वरूप; ५२५. **धरणीधरः**—शेषनाग तथा आदिवराहके रूपमें पृथ्वीको धारण करनेवाले; ५२६. **ध्यानैकप्रकटः**—एकमात्र ध्यानमें ही प्रकट होनेवाले; ५२७. **ध्येयः**—ध्यानमें द्रष्टव्य; ५२८. **ध्यानम्**—ध्यानस्वरूप; ५२९. **ध्यानपरायणः**—ध्यानमें संलग्न रहनेवाले॥ ९७॥

* शोधनार्थक 'दै' धातुसे 'दाता' बनता है।

नन्द्यो नन्दिप्रियो नादो नादमध्यप्रतिष्ठितः।
निष्कलो निर्मलो नित्यो नित्यानित्यो निरामयः॥ ९८॥

५३०. नन्द्यः—आनन्दनीय; ५३१. नन्दिप्रियः—नन्दिकेश्वरके प्रिय; ५३२. नादः—नादानुसंधानसे प्राप्त होनेवाले नादस्वरूप; ५३३. नादमध्यप्रतिष्ठितः—नादमें प्रतिष्ठित; ५३४. निष्कलः—अवयवरहित; ५३५. निर्मलः—दोषरहित; ५३६. नित्यः—नाशरहित; ५३७. नित्यानित्यः—आकाश और पृथ्वी आदि नित्य एवं अनित्य रूप धारण करनेवाले; ५३८. निरामयः—अविद्यारूपी महारोगसे शून्य॥ ९८॥

परं व्योम परं धाम परमात्मा परं पदम्।
परात्परः पशुपतिः पशुपाशविमोचकः॥ ९९॥

५३९. परं व्योम—अव्याकृत आकाश या नित्य धामस्वरूप; ५४०. परं धाम—ज्योतिके ज्योतिःस्वरूप; ५४१. परमात्मा—सम्पूर्ण जीवोंसे उत्कृष्ट आत्मा—पुरुषोत्तम; ५४२. परं पदम्—परमपदरूप; ५४३. परात्परः—परसे भी पर—ब्रह्मा, विष्णु और महेशसे भी उत्तम; ५४४. पशुपतिः—ब्रह्मासे लेकर कीटपर्यन्त समस्त जीवोंके पालक; ५४५. पशुपाशविमोचकः—पशुओं (जीवों)-को विविध पाशों (बन्धनों)-से छुटकारा दिलानेवाले॥ ९९॥

पूर्णानन्दः परानन्दः पुराणपुरुषोत्तमः।
पद्मप्रसन्ननयनः प्रणताज्ञानमोचनः॥ १००॥

५४६. पूर्णानन्दः—क्रिया, कर्ता और कर्मके भेदसे रहित परिपूर्ण सुखस्वरूप; ५४७. परानन्दः—भूलोकसे लेकर शतगुणोत्तर बढ़े हुए ब्रह्मलोकपर्यन्तके सम्पूर्ण आनन्दोंको नीचा करके सबसे उत्कृष्ट परमानन्द—महासुखस्वरूप; ५४८. पुराणपुरुषोत्तमः—क्षर-अक्षरसे भी उत्तम एवं अनादि होनेके कारण पुराणपुरुषोत्तम; ५४९. पद्मप्रसन्ननयनः—प्रफुल्ल कमलके समान उल्लासयुक्त नेत्रवाले; ५५०. प्रणताज्ञानमोचनः—शरणागत सेवकोंको तत्त्वज्ञान देकर उनके अज्ञानका निवारण करनेवाले॥ १००॥

प्रमाणप्रत्ययातीतः प्रणतार्तिनिवारणः।
फलहस्तः फणिपतिः फेत्कारः फाणितप्रियः॥ १०१॥

५५१. **प्रमाणप्रत्ययातीतः**—प्रमाणजनित प्रतीतियोंसे ऊपर उठे हुए नित्यज्ञानैकस्वरूप; ५५२. **प्रणतार्तिनिवारणः**—प्रणतजनोंकी पीड़ाको दूर कर देनेवाले; ५५३. **फलहस्तः**—भक्तजनोंको अविलम्ब फल देनेके कारण मानो समस्त फलोंको हाथमें ही लिये रहनेवाले; ५५४. **फणिपतिः**—शेष और वासुकि नागके भी स्वामी; ५५५. **फेत्कारः**—फेत्कार-तन्त्रस्वरूप; ५५६. **फाणितप्रियः**—फाणित अर्थात् खाँडके प्रेमी॥ १०१॥

बाणार्चिताङ्घ्रियुगलो बालकेलिकुतूहली।
ब्रह्म ब्रह्मार्चितपदो ब्रह्मचारी बृहस्पतिः॥ १०२॥

५५७. **बाणार्चिताङ्घ्रियुगलः**—बाणासुरसे पूजित युगल चरणवाले; ५५८. **बालकेलिकुतूहली**—बालोचित क्रीड़ाके लिये उत्सुक; ५५९. **ब्रह्म**—परब्रह्मस्वरूप; ५६०. **ब्रह्मार्चितपदः**—ब्रह्माजीसे पूजित चरणवाले; अथवा वेदपूजित पदवाले; ५६१. **ब्रह्मचारी**—ब्रह्मचर्यनिष्ठ; ५६२. **बृहस्पतिः**—देवगुरु बृहस्पतिरूप॥ १०२॥

बृहत्तमो ब्रह्मपरो ब्रह्मण्यो ब्रह्मवित्प्रियः।
बृहन्नादाग्र्यचीत्कारो ब्रह्माण्डावलिमेखलः॥ १०३॥

५६३. **बृहत्तमः**—बड़ेसे भी बड़े; ५६४. **ब्रह्मपरः**—ब्रह्माजीसे भी श्रेष्ठ; अथवा एकमात्र वेदके ही अनुशीलनमें तत्पर; ५६५. **ब्रह्मण्यः**—ब्राह्मणोंको मान देनेवाले; अथवा उनके हितकारी; ५६६. **ब्रह्मवित्प्रियः**—ब्रह्मवेत्ताओंके प्रिय; अथवा ब्रह्मवेत्ताओंको प्रिय माननेवाले; ५६७. **बृहन्नादाग्र्यचीत्कारः**—मेघोंकी गर्जना और बिजलीकी गड़गड़ाहटसे भी अधिक उच्चस्वरसे चीत्कार या गर्जना करनेवाले; ५६८. **ब्रह्माण्डावलिमेखलः**—कटिसूत्रमें किंकिणीकी भाँति समस्त ब्रह्माण्डोंको ही गूँथ लेनेवाले; अथवा विराट्रूपधारी॥ १०३॥

भ्रूक्षेपदत्तलक्ष्मीको भर्गो भद्रो भयापहः।
भगवान् भक्तिसुलभो भूतिदो भूतिभूषणः॥ १०४॥

५६९. **भ्रूक्षेपदत्तलक्ष्मीकः**—भक्तोंको भौंहोंके संकेतमात्रसे लक्ष्मी (धन-सम्पत्ति) प्रदान करनेवाले; ५७०. **भर्गः**—तेजःस्वरूप; ५७१. **भद्रः**—भद्रजातीय गजरूप; ५७२. **भयापहः**—भयके नाशक; ५७३. **भगवान्**—षड्विध ऐश्वर्यसे सम्पन्न; ५७४. **भक्तिसुलभः**—भक्तिके द्वारा ही सुगमतापूर्वक प्राप्य; ५७५. **भूतिदः**—अष्टसिद्धियोंके दाता; ५७६. **भूतिभूषणः**— भस्म धारण करनेवाले॥ १०४॥

भव्यो भूतालयो भोगदाता भ्रूमध्यगोचरः।
मन्त्रो मन्त्रपतिर्मन्त्री मदमत्तमनोरमः॥ १०५॥

५७७. **भव्यः**—कल्याणस्वरूप; ५७८. **भूतालयः**—पंचभूतों, भूत-प्रेत आदिकों तथा समस्त भूत-प्राणियोंके अधिष्ठान; ५७९. **भोगदाता**—प्राणियोंके कर्मानुसार दुःख और सुखका अनुभव करानेवाले; ५८०. **भ्रूमध्यगोचरः**—भौंहोंके मध्यभागमें ध्येय; ५८१. **मन्त्रः**—विविध मन्त्रस्वरूप; ५८२. **मन्त्रपतिः**—मन्त्रणाके अधिकारी, पालक एवं प्रवर्तक; ५८३. **मन्त्री**—राज्यसंचालनोपयोगी मन्त्रशक्तिके अधिष्ठाता; ५८४. **मदमत्तमनोरमः**—समाधिजनित आनन्दसे मत्त हृदयमें ध्येयरूपसे रमण करनेवाले॥ १०५॥

मेखलावान् मन्दगतिर्मतिमत्कमलेक्षणः।
महाबलो महावीर्यो महाप्राणो महामनाः॥ १०६॥

५८५. **मेखलावान्**—करधनीसे विभूषित कटिप्रदेशवाले; ५८६. **मन्दगतिः**—मन्द पुरुषोंके भी आश्रयदाता; ५८७. **मतिमत्कमलेक्षणः**—सद्बुद्धि देनेवाले कमलोपम नेत्रोंसे युक्त; ५८८. **महाबलः**—महाबलसे सम्पन्न; ५८९. **महावीर्यः**—महापराक्रमी; ५९०. **महाप्राणः**—महान् प्राणशक्तिसे सम्पन्न; ५९१. **महामनाः**—महामनस्वी॥ १०६॥

यज्ञो यज्ञपतिर्यज्ञगोप्ता यज्ञफलप्रदः।
यशस्करो योगगम्यो याज्ञिको याजकप्रियः॥ १०७॥

५९२. **यज्ञः**—यज्ञस्वरूप; ५९३. **यज्ञपतिः**—यज्ञोंके स्वामी; ५९४. **यज्ञगोप्ता**—यज्ञोंके संरक्षक; ५९५. **यज्ञफलप्रदः**—यज्ञफलके दाता; ५९६. **यशस्करः**—सुयशका विस्तार करनेवाले; ५९७. **योगगम्यः**—योगसे प्राप्तव्य; ५९८. **याज्ञिकः**—यज्ञकर्ता; ५९९. **याजकप्रियः**—यज्ञ करानेवालोंके प्रेमी॥ १०७॥

रसो रसप्रियो रस्यो रञ्जको रावणार्चितः।
रक्षोरक्षाकरो रत्नगर्भो राजसुखप्रदः॥ १०८॥

६००. **रसः**—परमानन्दस्वरूप; ६०१. **रसप्रियः**—मधुर आदि रसमें प्रीति रखनेवाले; ६०२. **रस्यः**—आस्वादके विषय; ६०३. **रञ्जकः**—दूसरोंके मनका अनुरंजन करनेवाले; ६०४. **रावणार्चितः**—दशमुख रावणके द्वारा भी पूजित; ६०५. **रक्षोरक्षाकरः**—राक्षसोंको जलाकर राख कर देनेवाले; अथवा अपनी आराधना करनेवाले राक्षसोंके रक्षक; ६०६. **रत्नगर्भः**—पृथ्वीके आश्रय; ६०७. **राजसुखप्रदः**—राज-सम्बन्धी सुख देनेवाले॥ १०८॥

लक्ष्यं लक्ष्यप्रदो लक्ष्यो लयस्थो लड्डुकप्रियः।
लानप्रियो लास्यपरो लाभकृल्लोकविश्रुतः॥ १०९॥

६०८. **लक्ष्यम्**—प्रणवरूपी धनुषके द्वारा चित्तरूपी बाणसे वेधनेयोग्य ब्रह्म; ६०९. **लक्ष्यप्रदः**—निर्विघ्नतापूर्वक लक्ष्यकी प्राप्ति करानेवाले; ६१०. **लक्ष्यः**—**'तत्त्वमसि'**—इत्यादि महावाक्यगत पदोंद्वारा लक्षणाशक्तिसे बोध्य; ६११. **लयस्थः**—प्रलयकालमें भी स्थित रहनेवाले; अथवा चित्तलयकी स्थितिमें विद्यमान; ६१२. **लड्डुकप्रियः**—लड्डूसे प्रसन्न रहनेवाले; ६१३. **लानप्रियः**—गजशालामें प्रीति रखनेवाले; ६१४. **लास्यपरः**—विलासयोग्य परमधामवाले; ६१५. **लाभकृल्लोकविश्रुतः**—लाभकारी (भक्तोंको शीघ्र वरदान देनेवाले) लोगोंमें श्रेष्ठताके लिये विख्यात॥ १०९॥

वरेण्यो वह्निवदनो वन्द्यो वेदान्तगोचरः।
विकर्ता विश्वतश्चक्षुर्विधाता विश्वतोमुखः॥ ११०॥

६१६. **वरेण्यः**—गणपति-भक्त राजा वरेण्यसे अभिन्न; ६१७. **वह्निवदनः**—अग्निरूप मुखवाले; ६१८. **वन्द्यः**—वन्दनीय; ६१९. **वेदान्तगोचरः**—उपनिषद्गम्य; ६२०. **विकर्ता**—छः भावविकारोंके प्रवर्तक; ६२१. **विश्वतश्चक्षुः**—सब ओर नेत्रवाले; ६२२. **विधाता**—स्रष्टा; ६२३. **विश्वतोमुखः**—सब ओर मुखवाले॥ ११०॥

वामदेवो विश्वनेता वज्रिवज्रनिवारणः।
विश्वबन्धनविष्कम्भाधारो विश्वेश्वरप्रभुः॥ १११॥

६२४. **वामदेवः**—सुन्दर देवता; अथवा शिवस्वरूप; ६२५. **विश्वनेता**—जगत्के नायक; ६२६. **वज्रिवज्रनिवारणः**—इन्द्रके वज्रको स्तम्भित कर देनेवाले; ६२७. **विश्वबन्धनविष्कम्भाधारः**—विश्वकी सृष्टिके लिये पर्याप्त देशको 'विष्कम्भ' कहते हैं। उसके भी आधार; ६२८. **विश्वेश्वरप्रभुः**—सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों और उनके अधीश्वरोंके भी ईश्वर॥ १११॥

शब्दब्रह्म शमप्राप्यः शम्भुशक्तिगणेश्वरः।
शास्ता शिखाग्रनिलयः शरण्यः शिखरीश्वरः॥ ११२॥

६२९. **शब्दब्रह्म**—परावाणीसे अतीत नादरूपधारी; ६३०. **शमप्राप्यः**—मनोनिग्रहसे प्राप्तव्य; ६३१. **शम्भुशक्तिगणेश्वरः**—शैवों और शाक्तोंके समुदायके ईश्वर; ६३२. **शास्ता**—'शास्ता' नामसे प्रसिद्ध केरलदेशीय देवतास्वरूप; अथवा बुद्धरूप; ६३३. **शिखाग्रनिलयः**—शास्ताके शिखाग्रभागमें निवास करनेवाले; ६३४. **शरण्यः**—रक्षक; ६३५. **शिखरीश्वरः**—हिमालयस्वरूप॥ ११२॥

षड्ऋतुकुसुमस्रग्वी षडाधारः षडक्षरः।
संसारवैद्यः सर्वज्ञः सर्वभेषजभेषजम्॥ ११३॥

६३६. **षड्ऋतुकुसुमस्रग्वी**—छहों ऋतुओंमें खिलनेवाले पुष्पोंकी

मालासे अलंकृत; ६३७. **षडाधारः**—छहों चक्रोंके आधारभूत मूलाधार-चक्रस्वरूप; ६३८. **षडक्षरः**—छः अक्षरोंवाले वक्रतुण्ड-मन्त्रस्वरूप; ६३९. **संसारवैद्यः**—भवरोगका नाश करनेवाले; ६४०. **सर्वज्ञः**—सब कुछ जाननेवाले; अथवा बुद्धस्वरूप; ६४१. **सर्वभेषजभेषजम्**—समस्त रोगोंकी दवा दिव्य अमृतके भी दोषनिवारक॥ ११३॥

सृष्टिस्थितिलयक्रीडः सुरकुञ्जरभेदनः।
सिन्दूरितमहाकुम्भः सदसद्व्यक्तिदायकः॥ ११४॥

६४२. **सृष्टिस्थितिलयक्रीडः**—जगत्की सृष्टि, पालन और संहार जिनकी लीलाएँ हैं, वे; ६४३. **सुरकुञ्जरभेदनः**—दानवसे पूजित होकर देवश्रेष्ठोंमें भेद उत्पन्न करनेवाले; अथवा देवराजके भेदक; ६४४. **सिन्दूरितमहाकुम्भः**—सिन्दूरसे अरुण मस्तकवाले; ६४५. **सदसद्व्यक्तिदायकः**—अपने भक्तोंको सदसद्विवेक प्रदान करनेवाले॥ ११४॥

साक्षी समुद्रमथनः स्वसंवेद्यः स्वदक्षिणः।
स्वतन्त्रः सत्यसंकल्पः सामगानरतः सुखी॥ ११५॥

६४६. **साक्षी**—विश्वको साक्षात् देखनेवाले; ६४७. **समुद्रमथनः**—समुद्रमन्थनकालमें देवताओंद्वारा सर्वप्रथम पूजित; ६४८. **स्वसंवेद्यः**—स्वयं ज्योतिस्वरूप; ६४९. **स्वदक्षिणः**—स्वयं समर्थ; ६५०. **स्वतन्त्रः**—अपराधीन; ६५१. **सत्यसंकल्पः**—कभी व्यर्थ न जानेवाले संकल्पसे युक्त; ६५२. **सामगानरतः**—साम-मन्त्रोंके गानमें संलग्न; ६५३. **सुखी**—सुखका अनुभव करनेवाले॥ ११५॥

हंसो हस्तिपिशाचीशो हवनं हव्यकव्यभुक्।
हव्यो हुतप्रियो हर्षो हृल्लेखामन्त्रमध्यगः॥ ११६॥

६५४. **हंसः**—यति-विशेषरूप; अथवा सूर्यरूप; ६५५. **हस्तिपिशाचीशः**—हस्तिपिशाचीश नामक नवाक्षरमन्त्रके देवता; ६५६. **हवनम्**—आहुतिस्वरूप; ६५७. **हव्यकव्यभुक्**—हव्य-कव्यके भोक्ता देवता-पितृस्वरूप; ६५८. **हव्यः**—हविष्यरूप; ६५९. **हुतप्रियः**—आहुतिमें

दिये गये द्रव्यके प्रेमी; ६६०. **हर्षः**—आनन्दस्वरूप; ६६१. **हल्लेखामन्त्रमध्यगः**—हल्लेखा-मन्त्रके मध्यवर्ती—ह्रींकारवाच्य ॥ ११६ ॥

क्षेत्राधिपः क्षमाभर्ता क्षमापरपरायणः।
क्षिप्रक्षेमकरः क्षेमानन्दः क्षोणीसुरद्रुमः ॥ ११७ ॥

६६२. **क्षेत्राधिपः**—प्रयाग आदि क्षेत्रों अथवा शरीर आदिके स्वामी; ६६३. **क्षमाभर्ता**—पृथ्वी अथवा क्षमाको धारण करनेवाले; ६६४. **क्षमापरपरायणः**—क्षमाशील मुनियोंके प्राप्य; ६६५. **क्षिप्रक्षेमकरः**—शीघ्र सिद्धि प्रदान करनेवाले; ६६६. **क्षेमानन्दः**-क्षेम और आनन्दस्वरूप; ६६७. **क्षोणीसुरद्रुमः**—भूतलपर कल्पवृक्षके समान समस्त मनोरथोंके दाता ॥ ११७ ॥

धर्मप्रदोऽर्थदः कामदाता सौभाग्यवर्धनः।
विद्याप्रदो विभवदो भुक्तिमुक्तिफलप्रदः ॥ ११८ ॥

६६८. **धर्मप्रदः**—धर्म प्रदान करनेवाले, ६६९. **अर्थदः**—धन देनेवाले; ६७०. **कामदाता**—कामप्रद; ६७१. **सौभाग्यवर्धनः**—स्त्रियोंको सौभाग्यवृद्धिका वर देनेवाले; ६७२. **विद्याप्रदः**—ज्ञानदाता; ६७३. **विभवदः**—सम्पत्तिदाता; ६७४. **भुक्तिमुक्तिफलप्रदः**—भोग और मोक्षरूप फल देनेवाले ॥ ११८ ॥

आभिरूप्यकरो वीरश्रीप्रदो विजयप्रदः।
सर्ववश्यकरो गर्भदोषहा पुत्रपौत्रदः ॥ ११९ ॥

६७५. **आभिरूप्यकरः**—विद्वत्ता एवं सुन्दरता प्राप्त करानेवाले; ६७६. **वीरश्रीप्रदः**—नामस्मरण करनेवाले भक्तोंको वीरोचित लक्ष्मी प्रदान करनेवाले; ६७७. **विजयप्रदः**—विजय देनेवाले; ६७८. **सर्ववश्यकरः**—सबको भक्तके वशमें कर देनेवाले; ६७९. **गर्भदोषहा**—गर्भस्राव या गर्भपात आदि बीजदोषोंको नष्ट करनेवाले; ६८०. **पुत्रपौत्रदः**—पुत्र और पौत्र प्रदान करनेवाले ॥ ११९ ॥

मेधादः कीर्तिदः शोकहारी दौर्भाग्यनाशनः।
प्रतिवादिमुखस्तम्भो रुष्टचित्तप्रसादनः॥ १२०॥

६८१. **मेधादः**—धारणावती बुद्धि प्रदान करनेवाले; ६८२. **कीर्तिदः**—लोकमें कीर्ति देनेवाले; ६८३. **शोकहारी**—ज्ञानदान करके शोक-मोहको हर लेनेवाले; ६८४. **दौर्भाग्यनाशनः**—स्त्रियोंके विधवापन आदि दुर्भाग्यसूचक दोषोंको नष्ट करनेवाले; ६८५. **प्रतिवादिमुखस्तम्भः**—प्रतिकूल बोलनेवाले दुष्टोंका मुख बन्द कर देनेवाले; ६८६. **रुष्टचित्तप्रसादनः**—कुपित हुए राजा आदिके चित्तको प्रसन्न (स्नेहयुक्त) करनेवाले॥ १२०॥

पराभिचारशमनो दुःखभञ्जनकारकः।
लवस्त्रुटिः कला काष्ठा निमेषस्तत्परः क्षणः॥ १२१॥

६८७. **पराभिचारशमनः**—दूसरोंके द्वारा किये गये मारण आदि उपायोंको शान्त करनेवाले; ६८८. **दुःखभञ्जनकारकः**—सब दुःखोंको दूर कर देनेवाले; ६८९. **लवः**—लवस्वरूप; ६९०. **त्रुटिः**—सहस्रलवजनित काल; (यहाँ यह परिभाषा समझ लेनी चाहिये—सौ त्रुटियोंका एक तत्पर होता है, तीस तत्परोंका एक निमेष होता है, अठारह निमेषोंकी एक काष्ठा होती है और तीस काष्ठाओंकी एक कला होती है।) ६९१. **कला**—तीस काष्ठाका समय; ६९२. **काष्ठा**—अठारह निमेषका समय; ६९३. **निमेषः**—तीस तत्परका काल; ६९४. **तत्परः**—सौ त्रुटियोंका काल; ६९५. **क्षणः**—तीस कलाओंका समय;॥ १२१॥

घटी मुहूर्तं प्रहरो दिवा नक्तमहर्निशम्।
पक्षो मासोऽयनं वर्षं युगं कल्पो महालयः॥ १२२॥

६९६. **घटी**—छः क्षणका समय; ६९७. **मुहूर्तम्**—दो घटीका समय; ६९८. **प्रहरः**—चार मुहूर्तका समय; ६९९. **दिवा**—दिन (चार पहरका समय); ७००. **नक्तम्**—रात्रि—चार पहरका समय; ७०१. **अहर्निशम्**—दिन-रात—आठ पहरका समय; ७०२. **पक्षः**—पंद्रह दिन-रातका समय; ७०३. **मासः**—दो पक्षोंका समय; ७०४. **अयनम्**—छः

मासका समय; ७०५. **वर्षम्**—दो अयनोंका मानव वर्ष (तीन सौ साठ मानव वर्षका एक दिव्य वर्ष होता है); ७०६. **युगम्**—बारह हजार दिव्य वर्षोंका चतुर्युग; ७०७. **कल्पः**—सहस्र चतुर्युगका एक कल्प (जो ब्रह्माका एक दिन है); ७०८. **महालयः**—बहत्तर हजार कल्पोंका एक महाप्रलय होता है (जिसमें ब्रह्माका भी लय हो जाता है।)*॥१२२॥

राशिस्तारा तिथिर्योगो वारः करणमंशकम्।
लग्नं होरा कालचक्रं मेरुः सप्तर्षयो ध्रुवः॥ १२३॥

७०९. **राशिः**—मेष आदि द्वादश राशिरूप; ७१०. **तारा**—कृत्तिका आदि नक्षत्ररूप; ७११. **तिथिः**—चन्द्रमाकी पंद्रह कलाओंमेंसे एक; ७१२. **योगः**—अमृतसिद्धि एवं आनन्द आदि योगरूप; ७१३. **वारः**—रविवार आदि सप्तदिनस्वरूप; ७१४. **करणम्**—'बव' आदि करणरूप; ७१५. **अंशकम्**—अंशस्वरूप; ७१६. **लग्नम्**—मेष आदि राशियोंका उदय; ७१७. **होरा**—अर्धलग्न; ७१८. **कालचक्रम्**—शिशुमार-चक्रस्वरूप; ७१९. **मेरुः**—सुवर्णमय पर्वतरूप; ७२०. **सप्तर्षयः**—कश्यप आदि सात ऋषिरूप; ७२१. **ध्रुवः**—उत्तानपादके पुत्ररूप॥ १२३॥

राहुर्मन्दः कविर्जीवो बुधो भौमः शशी रविः।
कालः सृष्टिः स्थितिर्विश्वं स्थावरं जङ्गमं च यत्॥ १२४॥

७२२. **राहुः**—राहु नामक ग्रह; ७२३. **मन्दः**—शनैश्चर; ७२४. **कविः**—शुक्र; ७२५. **जीवः**—बृहस्पति; ७२६. **बुधः**—बुध; ७२७. **भौमः**—मंगल; ७२८. **शशी**—सोम; ७२९. **रविः**—सूर्य; ७३०. **कालः**—जगत्का संहार करनेवाले; ७३१. **सृष्टिः**—सृष्टिक्रियारूप; ७३२. **स्थितिः**—पालनकर्मरूप; ७३३. **स्थावरं जङ्गमं विश्वम्**—चराचर जगत्-रूप॥ १२४॥

भूरापोऽग्निमरुद्व्योमाहङ्कृतिः प्रकृतिः पुमान्।
ब्रह्मा विष्णुः शिवो रुद्र ईशः शक्तिः सदाशिवः॥ १२५॥

७३४. **भूः**—पृथ्वीरूप; ७३५. **आपः**—जलरूप; ७३६. **अग्निः**—

---

* 'लव' से लेकर 'महालय' तक सभी कालभेद महाकालस्वरूप गणपतिके अवयव हैं।

तेजःस्वरूप; **७३७. मरुत्**—वायुरूप; **७३८. व्योम**—आकाशरूप; **७३९. अहङ्कृतिः**—अहंकाररूप; **७४०. प्रकृतिः**—जगत्का मूलकारण अव्यक्त प्रकृतिरूप; **७४१. पुमान्**—पुरुषरूप; **७४२. ब्रह्मा**—सृष्टिकर्ता; **७४३. विष्णुः**—पालनकर्ता; **७४४. शिवः**—शिव; **७४५. रुद्रः**—संहारकर्ता; **७४६. ईशः**—ईशान; **७४७. शक्तिः**—कामेश्वरी; **७४८. सदाशिवः**—कामेश्वर शिव ॥ १२५ ॥

त्रिदशाः पितरः सिद्धा यक्षा रक्षांसि किन्नराः।
साध्या विद्याधरा भूता मनुष्याः पशवः खगाः ॥ १२६ ॥

७४९. त्रिदशाः—देवसमुदायरूप; **७५०. पितरः**—पितृसमूह; **७५१. सिद्धाः**—सिद्धसमुदाय; **७५२. यक्षाः**—यक्षवृन्द; **७५३. रक्षांसि**—राक्षससमूह; **७५४. किन्नराः**—किंनरवर्ग; **७५५. साध्याः**—साध्यगण; **७५६. विद्याधराः**—विद्याधरगण; **७५७. भूताः**—भूतगण; **७५८. मनुष्याः**—मनुष्यगण; **७५९. पशवः**—पशुगण; **७६०. खगाः**—पक्षिगण ॥ १२६ ॥

समुद्राः सरितः शैला भूतं भव्यं भवोद्भवः।
साङ्ख्यं पातञ्जलं योगः पुराणानि श्रुतिः स्मृतिः ॥ १२७ ॥

७६१. समुद्राः—विभिन्न समुद्र; **७६२. सरितः**—नदीसमुदाय; **७६३. शैलाः**—पर्वतगण; **७६४. भूतम्**—अतीतकाल; **७६५. भव्यम्**—भविष्यकाल; **७६६. भवोद्भवः**—जगत्की उत्पत्तिके कारण; **७६७. साङ्ख्यम्**—कपिलमुनिद्वारा प्रतिपादित शास्त्र; **७६८. पातञ्जलम्**—पतञ्जलिप्रोक्त योगसूत्र; **७६९. योगः**—नागराज शेषद्वारा प्रतिपादित; **७७०. पुराणानि**—'ब्राह्म' आदि पुराणसमुदाय; **७७१. श्रुतिः**—ऋग्वेद आदि; **७७२. स्मृतिः**—मनुस्मृति आदि धर्मशास्त्र ॥ १२७ ॥

वेदाङ्गानि सदाचारो मीमांसा न्यायविस्तरः।
आयुर्वेदो धनुर्वेदो गान्धर्वं काव्यनाटकम् ॥ १२८ ॥

७७३. वेदाङ्गानि—व्याकरणादि छः वेदांगसमूह; **७७४. सदाचारः**—सदाचार-संग्रहात्मक ग्रन्थ; **७७५. मीमांसा**—सोलह अध्यायोंमें वर्णित

कर्ममीमांसा—जैमिनिसूत्र तथा चार अध्यायोंमें कथित ब्रह्ममीमांसा; ७७६. न्यायविस्तरः—कणाद और गौतम मुनियोंके द्वारा प्रतिपादित न्यायशास्त्र; ७७७. **आयुर्वेदः**—धन्वन्तरिप्रोक्त उपवेद; ७७८. **धनुर्वेदः**—अस्त्रविद्या; ७७९. **गान्धर्वम्**—संगीतशास्त्र; ७८०. **काव्यनाटकम्**—श्रव्य काव्य और दृश्य नाटक॥ १२८॥

वैखानसं भागवतं सात्वतं पाञ्चरात्रकम्।
शैवं पाशुपतं कालामुखं भैरवशासनम्॥ १२९॥

७८१. **वैखानसम्**—विष्णुप्रोक्त वैखानस-तन्त्र; ७८२. **भागवतम्**—वैष्णवशास्त्र; ७८३. **सात्वतम्**—सात्वततन्त्र; ७८४. **पाञ्चरात्रकम्**—पांचरात्र आगम (ये चारों वैष्णवतन्त्र हैं); ७८५. **शैवम्**—शैवतन्त्र; ७८६. **पाशुपतम्**—पाशुपतशास्त्र; ७८७. **कालामुखम्**—कालामुखनामसे प्रसिद्ध तन्त्र; ७८८. **भैरवशासनम्**—भैरवकथित शास्त्र (ये चारों शैवतन्त्र हैं)॥ १२९॥

शाक्तं वैनायकं सौरं जैनमार्हतसंहिता।
सदसद्व्यक्तमव्यक्तं सचेतनमचेतनम्॥ १३०॥

७८९. **शाक्तम्**—शक्तितन्त्र; ७९०. **वैनायकम्**—विनायकतन्त्र; ७९१. **सौरम्**—सूर्यप्रोक्त तन्त्र; ७९२. **जैनम्**—जैनशास्त्र; ७९३. **आर्हतसंहिता**—आर्हतशास्त्र; ७९४. **सत्**—कारणरूपमें स्थित; ७९५. **असत्**—कार्यरूपमें स्थित; ७९६. **व्यक्तम्**—सर्वकार्यरूप; ७९७. **अव्यक्तम्**—कारणरूप; ७९८. **सचेतनम्**—सचेतन प्राणिमात्र; ७९९. **अचेतनम्**—अचेतन आकाश आदि॥ १३०॥

बन्धो मोक्षः सुखं भोगोऽयोगः सत्यमणुर्महान्।
स्वस्ति हुं फट् स्वधा स्वाहा श्रौषड्वौषड्वषण्णमः॥ १३१॥

८००. **बन्धः**—आत्मामें अनात्माका और अनात्मामें आत्माका जो भ्रम है, तादृश भ्रमात्मक बन्धनरूप; ८०१. **मोक्षः**—अज्ञाननाशरूप; ८०२. **सुखम्**—विशुद्धानन्द; ८०३. **भोगः**—अनुभव; ८०४. **अयोगः**—

अनासक्त; ८०५. **सत्यम्**—त्रिकालमें अबाधित; ८०६. **अणुः**—मन-इन्द्रियोंके अगोचर; ८०७. **महान्**—जिससे बढ़कर कोई आनन्द नहीं है, तादृश भूमा; ८०८. **स्वस्ति**—सम्यक् सत्तावान्; ८०९ **हुम्**—अपनेसे इतरका बाध करनेके कारण हुम्-स्वरूप ब्रह्म; ८१०. **फट्**—इतर सत्ताके भ्रमका नाश करनेवाले; ८११. **स्वधा**—श्राद्धरूप; ८१२. **स्वाहा**—यज्ञकर्मरूप; ८१३. **श्रौषट्**—श्रौषट्कारोपलक्षित कर्मरूप; ८१४. **वौषट्**—वौषट्कारोपलक्षित कर्मरूप; ८१५. **वषट्**—वषट्कारोपलक्षित कर्मरूप; ८१६. **नमः**—नमस्कारस्वरूप ॥ १३१ ॥

ज्ञानं विज्ञानमानन्दो बोधः संविच्छमो यमः।
एक एकाक्षराधार एकाक्षरपरायणः ॥ १३२ ॥

८१७. **ज्ञानम्**—मोक्षविषयक ज्ञानस्वरूप; ८१८. **विज्ञानम्**—विज्ञानस्वरूप; ८१९. **आनन्दः**—आत्मानन्दस्वरूप; ८२०. **बोधः**—अन्तर्बोधरूप; ८२१. **संवित्**—बाह्य वृत्तियोंको निरस्त करनेवाला अन्तर्बोध; ८२२. **शमः**—मनोनिग्रह; ८२३. **यमः**—इन्द्रियसंयम; ८२४. **एकः**—एकमात्र अद्वितीय; ८२५. **एकाक्षराधारः**—एक अक्षर 'ग' बीजमात्रमें स्थित रहनेवाले; ८२६. **एकाक्षरपरायणः**—ॐ—इस एकाक्षरमात्रमें स्थित ॥ १३२ ॥

एकाग्रधीरेकवीर एकानेकस्वरूपधृक्।
द्विरूपो द्विभुजो द्व्यक्षो द्विरदो द्वीपरक्षकः ॥ १३३ ॥

८२७. **एकाग्रधीः**—अपने-आपमें एकाग्र रहनेवाले बुद्धिरूप; ८२८. **एकवीरः**—अद्वितीय वीर; ८२९. **एकानेकस्वरूपधृक्**—एक होते हुए भी अनेक रूप धारण करनेवाले; ८३०. **द्विरूपः**—'पर' और 'अपर' ब्रह्मरूपसे दो रूपवाले; ८३१. **द्विभुजः**—दो बाँहोंवाले; ८३२. **द्व्यक्षः**—दो नेत्रोंवाले; ८३३. **द्विरदः**—दो दाँतोंवाले, गजरूप; ८३४. **द्वीपरक्षकः**—सप्तद्वीपाधिपतित्व प्रदान करनेके कारण द्वीपके रक्षक ॥ १३३ ॥

द्वैमातुरो द्विवदनो द्वन्द्वातीतो द्वयातिगः।
त्रिधामा त्रिकरस्त्रेतात्रिवर्गफलदायकः॥ १३४॥

८३५. द्वैमातुरः—उमा और गंगा—दो माताओंके पुत्र; ८३६. द्विवदनः—अग्निरूप मुख तथा गजमुख दोनोंसे युक्त होनेके कारण दो मुखवाले; ८३७. द्वन्द्वातीतः—सर्दी-गर्मी आदि द्वन्द्व-दुःखोंसे ऊपर उठे हुए; ८३८. द्वयातिगः—रजोगुण और तमोगुण—दोनोंको लाँघ करके विराजमान; ८३९. त्रिधामा—सूर्य, चन्द्र और अग्नि—इन त्रिविध तेजोंसे युक्त मूर्तिवाले; ८४०. त्रिकरः—तीनों लोकोंके कर्ता; ८४१. त्रेता-त्रिवर्गफलदायकः—त्रिविध अग्निके चयनसे प्राप्त होनेवाले धर्म, काम और अर्थरूपी फलोंके दाता॥ १३४॥

त्रिगुणात्मा त्रिलोकादिस्त्रिशक्तीशस्त्रिलोचनः।
चतुर्बाहुश्चतुर्दन्तश्चतुरात्मा चतुर्मुखः॥ १३५॥

८४२. त्रिगुणात्मा—त्रिगुणमयी मूल प्रकृतिके आधार; ८४३. त्रिलोकादिः—तीनों लोकोंके आदिकारण; ८४४. त्रिशक्तीशः—'श्रीं, ह्रीं, क्लीं'—इन त्रिविध शक्ति-मन्त्रोंके अथवा प्रभुशक्ति, उत्साहशक्ति और मन्त्रशक्ति—इन तीनों शक्तियोंके ईश्वर; ८४५. त्रिलोचनः—तीन नेत्रोंवाले; ८४६. चतुर्बाहुः—चार बाँहवाले; ८४७. चतुर्दन्तः—चार दाँतवाले; ८४८. चतुरात्मा—आत्मा, अन्तरात्मा, ज्ञानात्मा और परमात्माके भेदसे चार आत्मावाले; ८४९. चतुर्मुखः—मुखमें चार प्रकारके वेद धारण करनेसे चार मुखवाले॥ १३५॥

चतुर्विधोपायमयश्चतुर्वर्णाश्रमाश्रयः।
चतुर्विधवचोवृत्तिपरिवृत्तिप्रवर्तकः॥ १३६॥

८५०. चतुर्विधोपायमयः—भेद, दण्ड, साम और दान—ये चार उपाय हैं। इन चारों उपायोंसे उत्पन्न फलके साधक; ८५१. चतुर्वर्णाश्रमाश्रयः—चारों वर्णों और चारों आश्रमोंके विहित कर्मोंद्वारा प्राप्त होनेवाले; अथवा उन वर्णों या आश्रमोंके आधार; ८५२.

चतुर्विधवचोवृत्तिपरिवृत्तिप्रवर्तकः—अन्तःप्रदेशमें पश्यन्ती, मध्यमा तथा परा—इन तीन वाणियोंके और बाह्यप्रदेशमें वैखरी नामक चतुर्थी वाणीकी वृत्तियोंके परिवर्तनके प्रवर्तक ॥ १३६ ॥

चतुर्थीपूजनप्रीतश्चतुर्थीतिथिसम्भवः ।
पञ्चाक्षरात्मा पञ्चात्मा पञ्चास्यः पञ्चकृत्यकृत् ॥ १३७ ॥

८५३. **चतुर्थीपूजनप्रीतः**—चतुर्थी तिथिको पूजन करनेसे प्रसन्न होनेवाले; ८५४. **चतुर्थीतिथिसम्भवः**—चतुर्थी नामक तिथिको प्रकट होनेवाले; ८५५. **पञ्चाक्षरात्मा**—नाद, बिन्दु, मकार, अकार और उकार—ये प्रणवमें स्थित जो पाँच अक्षर हैं, तत्स्वरूप; ८५६. **पञ्चात्मा**—ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर और सदाशिव—इन पाँच विग्रहोंसे युक्त; ८५७. **पञ्चास्यः**—विस्तृत मुखवाले; ८५८. **पञ्चकृत्यकृत्**—सृष्टि, पालन, संहार, तिरोधान और अनुग्रह—ब्रह्मा आदि रूपोंसे इन पाँच कृत्योंको करनेवाले ॥ १३७ ॥

पञ्चाधारः पञ्चवर्णः पञ्चाक्षरपरायणः ।
पञ्चतालः पञ्चकरः पञ्चप्रणवभावितः ॥ १३८ ॥

८५९. **पञ्चाधारः**—पाँचों भूतोंके आधार या धारक; ८६०. **पञ्चवर्णः**—सदा करोड़ों सूर्योंके समान प्रकाशमान वर्णवाले होते हुए भी सत्ययुगमें चन्द्रमाके समान, त्रेतामें अर्जुन वृक्षके समान, द्वापरमें इन्द्रगोप नामक कीटके समान तथा कलियुगमें धुएँके समान वर्णवाले होनेसे पाँच वर्णवाले; ८६१. **पञ्चाक्षरपरायणः**—शिवपञ्चाक्षर-मन्त्रका जप करनेवाले; ८६२. **पञ्चतालः**—हाथकी मध्यमा अँगुलीके अग्रभागसे लेकर अंगुष्ठतककी लम्बाईको 'ताल' कहते हैं। ऐसे पाँच तालके बराबर शरीरवाले, वामनरूप; ८६३. **पञ्चकरः**—पाँच हाथ ऊँचे होनेके कारण 'पंचकर' कहे जानेवाले; ८६४. **पञ्चप्रणवभावितः**—पाँच प्रणवोंसे प्रतिपादित या अनुभावित ॥ १३८ ॥

पञ्चब्रह्ममयस्फूर्तिः पञ्चावरणवारितः ।
पञ्चभक्ष्यप्रियः पञ्चबाणः पञ्चशिवात्मकः ॥ १३९ ॥

८६५. **पञ्चब्रह्ममयस्फूर्तिः**—सद्योजात, वामदेव, अघोर, तत्पुरुष

और ईश्वर—इन पाँच ब्रह्मस्वरूपोंकी स्फूर्तिसे युक्त; ८६६. **पञ्चावरण-वारितः**—पाँच आवरणों अथवा पाँच कोशोंसे आवृत; ८६७. **पञ्चभक्ष्यप्रियः**—लड्डू, मण्डक, पूरी, फेणी (सेवई) और वटक (बड़े) नामवाले पाँच प्रकारके भक्ष्य-पदार्थोंके प्रेमी; ८६८. **पञ्चबाणः**—कामेश्वरी उमा और कामेश्वर शिवके पाँच बीजोंसे युक्त होनेके कारण 'पंचबाण' नामसे प्रसिद्ध; ८६९. **पञ्चशिवात्मकः**—पंचशिव-बीजस्वरूप ॥ १३९ ॥

षट्कोणपीठः षट्चक्रधामा षड्ग्रन्थिभेदकः।
षडध्वध्वान्तविध्वंसी षडङ्गुलमहाह्रदः ॥ १४० ॥

८७०. **षट्कोणपीठः**—षट्कोण-चक्रसे युक्त पूजापीठवाले; ८७१. **षट्चक्रधामा**—मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्धि और आज्ञा—ये छः चक्र जिनके वासस्थान हैं,वे; ८७२. **षड्ग्रन्थिभेदकः**—मूलाधार, आज्ञा और मणिपूर—इन तीन चक्रोंमें दो-दो ग्रन्थियोंका भेदन करनेवाले; ८७३. **षडध्वध्वान्तविध्वंसी**—पद, भुवन, वर्ण, तत्त्व, कला और मन्त्र—इन छहों अध्वाओंको शोधन करनेके कारण उनमें व्याप्त अज्ञानान्धकारको नष्ट करनेवाले; ८७४. **षडङ्गुलमहाह्रदः**—छः अंगुल गहरे नाभिरूप महान् ह्रदवाले ॥ १४० ॥

षण्मुखः षण्मुखभ्राता षट्शक्तिपरिवारितः।
षड्वैरिवर्गविध्वंसी षडूर्मिभयभञ्जनः ॥ १४१ ॥

८७५. **षण्मुखः**—छः शास्त्र जिनके मुखमें हैं, वे; ८७६. **षण्मुख-भ्राता**—षडानन कार्तिकेयके बड़े भाई; ८७७. **षट्शक्तिपरिवारितः**—छः शक्तियोंसे घिरे हुए; ८७८. **षड्वैरिवर्गविध्वंसी**—काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर—इन छः शत्रुओंके समुदायका नाश करनेवाले; ८७९. **षडूर्मिभयभञ्जनः**—भूख, प्यास, शोक, मोह, जरा और मृत्यु—इन छः ऊर्मियोंके भयका निवारण करनेवाले ॥ १४१ ॥

षट्तर्कदूरः षट्कर्मनिरतः षड्रसाश्रयः।
सप्तपातालचरणः सप्तद्वीपोरुमण्डलः ॥ १४२ ॥

८८०. **षट्तर्कदूरः**—छः दर्शनोंमें कथित तर्कोंके अगोचर—वाणीसे

अतीत; ८८१. **षट्कर्मनिरत:**—यजन, याजन, अध्ययन, अध्यापन, दान और प्रतिग्रह—इन छ: कर्मोंमें तत्पर रहनेवाले; ८८२. **षड्रसाश्रय:**—मधुर, अम्ल, लवण, कटु, कषाय और तिक्त—इन छ: रसोंके आधार; ८८३. **सप्तपातालचरण:**—तल, अतल, वितल, सुतल, रसातल, महातल और पाताल—ये नीचेके सात लोक जिनके चरणोंके आश्रित हैं, वे; ८८४. **सप्तद्वीपोरुमण्डल:**—जम्बू आदि सात द्वीप जिनके ऊरुमण्डलके आश्रित हैं, वे॥ १४२॥

सप्तस्वर्लोकमुकुट: सप्तसप्तिवरप्रद:।
सप्ताङ्गराज्यसुखद: सप्तर्षिगणमण्डित:॥ १४३॥

८८५. **सप्तस्वर्लोकमुकुट:**—भुवर्लोकसे लेकर गोलोकपर्यन्त सात स्वर्लोक जिनके मुकुट हैं, वे; ८८६. **सप्तसप्तिवरप्रद:**—सूर्यको वर देनेवाले; ८८७. **सप्ताङ्गराज्यसुखद:**—स्वामी, अमात्य, राष्ट्र, दुर्ग, कोष, सेना और सुहृद्—इन सातों अंगोंसे युक्त राज्यका सुख देनेवाले; ८८८. **सप्तर्षिगणमण्डित:**—कश्यप आदि सात ऋषियों तथा गण-देवताओंसे सेवित एवं सुशोभित॥ १४३॥

सप्तच्छन्दोनिधि: सप्तहोता सप्तस्वराश्रय:।
सप्ताब्धिकेलिकासार: सप्तमातृनिषेवित:॥ १४४॥

८८९. **सप्तच्छन्दोनिधि:**—गायत्रीसे लेकर जगती-पर्यन्त सात छन्दोंके आश्रय; ८९०. **सप्तहोता**—होतासे लेकर उद्गाता-पर्यन्त सात होता जिनके स्वरूप हैं, वे; ८९१. **सप्तस्वराश्रय:**—षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पंचम, धैवत और निषाद—इन सात स्वरोंके आश्रय; ८९२. **सप्ताब्धिकेलिकासार:**—सातों समुद्र जिनके क्रीड़ा-सरोवर हैं, वे; ८९३. **सप्तमातृनिषेवित:**—ब्राह्मी, माहेश्वरी आदि सात मातृकाओंसे सेवित॥ १४४॥

सप्तच्छन्दोमोदमद: सप्तच्छन्दोमखप्रभु:।
अष्टमूर्तिध्येयमूर्तिरष्टप्रकृतिकारणम्॥ १४५॥

८९४. **सप्तच्छन्दोमोदमद:**—पथ्यसंज्ञक सात छन्दोंके मोदजनक

मदसे युक्त; ८९५. **सप्तच्छन्दोमखप्रभुः**—सप्त छन्दोंके यज्ञके स्वामी; ८९६. **अष्टमूर्तिध्येयमूर्तिः**—अष्टमूर्ति-शिवसे ध्येय मूर्तिवाले; अर्थात् भगवान् शिव भी अपने हृदयमें जिनके स्वरूपका चिन्तन करते हैं, वे; ८९७. **अष्टप्रकृतिकारणम्**—पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, मन, बुद्धि और अहंकार—इन आठ प्रकृतियोंकी उत्पत्तिके कारण॥ १४५॥

अष्टाङ्गयोगफलभूरष्टपत्राम्बुजासनः ।
अष्टशक्तिसमृद्धश्रीरष्टैश्वर्यप्रदायकः ॥ १४६ ॥

८९८. **अष्टाङ्गयोगफलभूः**—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा और समाधि—इन आठ अंगोंसे युक्त योगके चित्तवृत्तिनिरोधरूप फल देनेवाले; ८९९. **अष्टपत्राम्बुजासनः**—अष्टदल-कमलपर आसीन होनेके कारण उक्त नामसे प्रसिद्ध; ९००. **अष्टशक्तिसमृद्धश्रीः**—आठ दलोंमें निवास करनेवाली तीव्रा आदि आठ शक्तियोंसे सेवित होनेके कारण बढ़ी हुई श्रीसे सम्पन्न; ९०१. **अष्टैश्वर्यप्रदायकः**—अणिमा आदि आठ सिद्धियोंके दाता॥ १४६॥

अष्टपीठोपपीठश्रीरष्टमातृसमावृतः ।
अष्टभैरवसेव्योऽष्टवसुवन्द्योऽष्टमूर्तिभृत् ॥ १४७ ॥

९०२. **अष्टपीठोपपीठश्रीः**—आठ महापीठ और उपपीठोंकी श्री—सम्पत्तिसे युक्त; ९०३. **अष्टमातृसमावृतः**—ब्राह्मी आदि सात मातृकाओंके साथ जो आठवीं महालक्ष्मी हैं, वे आठों आवरणदेवताके रूपमें जिन्हें घेरे रहती हैं, वे; ९०४. **अष्टभैरवसेव्यः**—बटुक आदि आठ भैरवोंसे सेव्य; ९०५. **अष्टवसुवन्द्यः**—धरसे लेकर प्रभासतक आठ वसुओंसे वन्दनीय; ९०६. **अष्टमूर्तिभृत्**—अष्टमूर्तिधारी॥ १४७॥

अष्टचक्रस्फुरन्मूर्तिरष्टद्रव्यहविःप्रियः ।
नवनागासनाध्यासी नवनिध्यनुशासिता॥ १४८॥

९०७. **अष्टचक्रस्फुरन्मूर्तिः**—अष्टचक्रवाले यन्त्रमें प्रकाशमान मूर्तिवाले; ९०८. **अष्टद्रव्यहविःप्रियः**—ईख, सत्तू, चिउड़ा, कदली,

मोदक, तिल, नारियल और घृतपक्व आदि पदार्थ—इन आठ द्रव्योंके हविष्यसे प्रसन्न होनेवाले; १०९. **नवनागासनाध्यासी**—कर्कोटक आदि नौ नागोंके आसनपर बैठनेवाले; ११०. **नवनिध्यनुशासिता**—नौ निधियोंपर अनुशासन रखनेवाले॥ १४८॥

नवद्वारपुराधारो नवाधारनिकेतनः।
नवनारायणस्तुत्यो नवदुर्गानिषेवितः॥ १४९॥

१११.**नवद्वारपुराधारः**—नौ द्वारोंवाले पुर—शरीरको जीवात्मारूपसे धारण करनेवाले; ११२. **नवाधारनिकेतनः**—कुलाकुल, सहस्रार, मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा और लम्बिका—इन नौ आधारोंमें निवास करनेवाले; ११३. **नवनारायणस्तुत्यः**—धर्मनारायण, आदिनारायण, अनन्तनारायण, बदरीनारायण, रूपनारायण, शंकरनारायण, सुन्दरनारायण, लक्ष्मीनारायण और साध्यनारायण—इन नौ नारायणोंसे स्तुत्य; ११४. **नवदुर्गानिषेवितः**—शैलपुत्री, ब्रह्मचारिणी, चन्द्रघण्टा, कूष्माण्डा, स्कन्दमाता, कात्यायनी, कालरात्रि, महागौरी और सिद्धिदात्री—इन नौ दुर्गाओंसे सेवित॥ १४९॥

नवनाथमहानाथो नवनागविभूषणः।
नवरत्नविचित्राङ्गो नवशक्तिशिरोधृतः॥ १५०॥

११५. **नवनाथमहानाथः**—ज्ञान, प्रकाश, सत्य, आनन्द, विमर्श, स्वभाव, सुभग, प्रतिभ और पूर्ण—इन नौ नाथोंके महानाथ; ११६. **नवनागविभूषणः**—कर्कोटक आदि नौ नागोंको आभूषणके रूपमें धारण करनेवाले; ११७. **नवरत्नविचित्राङ्गः**—हीरा, मोती आदि नौ रत्नोंकी शोभासे विचित्र अंगोंवाले; ११८. **नवशक्तिशिरोधृतः**—तीव्रा आदि नौ शक्तियोंद्वारा सिरपर धारित अर्थात् वन्दित॥ १५०॥

दशात्मको दशभुजो दशदिक्पतिवन्दितः।
दशाध्यायो दशप्राणो दशेन्द्रियनियामकः॥ १५१॥

११९. **दशात्मकः**—दसों दिशाओंमें व्यापक; १२०. **दशभुजः**—

दस भुजाओंसे युक्त; ९२१. **दशदिक्पतिवन्दितः**—इन्द्र आदि दस दिक्पालोंसे स्तुत्य; ९२२. **दशाध्यायः**—चार वेद और छः अंगोंके अध्येता; ९२३. **दशप्राणः**—प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान, नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त और धनंजय—इन दस प्राणोंसे युक्त; ९२४. **दशेन्द्रियनियामकः**—पाँच ज्ञानेन्द्रियों और पाँच कर्मेन्द्रियोंको वशमें रखनेवाले ॥ १५१ ॥

दशाक्षरमहामन्त्रो दशाशाव्यापिविग्रहः ।
एकादशादिभी रुद्रैः स्तुत एकादशाक्षरः ॥ १५२ ॥

९२५. **दशाक्षरमहामन्त्रः**—दस अक्षरवाले महामन्त्रस्वरूप; ९२६. **दशाशाव्यापिविग्रहः**—दसों दिशाओंमें व्याप्त शरीरवाले; ९२७. **एकादशादिभी रुद्रैः स्तुतः**—ग्यारहसे लेकर एक सहस्रतक रुद्र होते हैं, उन सबके द्वारा स्तुत; ९२८. **एकादशाक्षरः**—एकादश अक्षरवाले मन्त्रस्वरूप ॥ १५२ ॥

द्वादशोद्दण्डदोर्दण्डो द्वादशान्तनिकेतनः ।
त्रयोदशभिदाभिन्नविश्वेदेवाधिदैवतम् ॥ १५३ ॥

९२९. **द्वादशोद्दण्डदोर्दण्डः**—बारह उद्दण्ड (ऊपर उठे हुए) बाहुदण्डोंसे युक्त; ९३०. **द्वादशान्तनिकेतनः**—ललाटसे ऊपर ब्रह्मरन्ध्रतकके स्थानको 'द्वादशान्त' कहते हैं, उसमें निवास करनेवाले; ९३१. **त्रयोदशभिदाभिन्नविश्वेदेवाधिदैवतम्**—तेरह विश्वेदेवोंके अधिदेवता ॥ १५३ ॥

चतुर्दशेन्द्रवरदश्चतुर्दशमनुप्रभुः ।
चतुर्दशादिविद्याढ्यश्चतुर्दशजगत्प्रभुः ॥ १५४ ॥

९३२. **चतुर्दशेन्द्रवरदः**—चौदह इन्द्रोंको वर देनेवाले; ९३३. **चतुर्दशमनुप्रभुः**—चौदह मनुओंके अधिपति; ९३४. **चतुर्दशादिविद्याढ्यः**—चार (आन्वीक्षिकी, त्रयी, वार्ता और दण्डनीति), दस (चार वेद और छः वेदांग) आदि विद्याओंसे सम्पन्न; ९३५. **चतुर्दशजगत्प्रभुः**—चौदह भुवनोंके स्वामी ॥ १५४ ॥

सामपञ्चदशः पञ्चदशीशीतांशुनिर्मलः।
षोडशाधारनिलयः षोडशस्वरमातृकः॥ १५५॥

१३६. **सामपञ्चदशः**—पंद्रह स्तोममन्त्रोंके साथ, जो चार आज्यस्तोत्र-सम्बन्धी मन्त्र हैं, वे सामयुक्त होकर गणपतिके स्वरूप हैं, अतः वे उक्त नामसे प्रसिद्ध हैं; १३७. **पञ्चदशीशीतांशुनिर्मलः**—पूर्णिमाके चन्द्रमाके समान स्वच्छ; १३८. **षोडशाधारनिलयः**—षड्दल, नवदल एवं षोडशदल आदि चक्रोंमें निवास करनेवाले; १३९. **षोडशस्वरमातृकः**—सोलह स्वर-अक्षररूप॥ १५५॥

षोडशान्तपदावासः षोडशेन्दुकलात्मकः।
कलासप्तदशी सप्तदशः सप्तदशाक्षरः॥ १५६॥

१४०. **षोडशान्तपदावासः**—ब्रह्मरन्ध्रके अन्तर्गत कमलकी कर्णिकासे लेकर ऊपरके भागको 'षोडशान्त' कहते हैं। उसमें निवास करनेवाले अर्थात् उन्मनीसे परे विराजमान; १४१. **षोडशेन्दुकलात्मकः**—अमृता और मानिनी आदि षोडशचन्द्रकलास्वरूप; १४२. **कलासप्तदशी**—'त्रिपुरागम' में प्रसिद्ध 'सप्तदशी' नामक कलास्वरूप; १४३. **सप्तदशः**—सामयुक्त सप्तदशस्तोमस्वरूप; १४४. **सप्तदशाक्षरः**—**वषट् (२), ओश्रावय (४), यज (२), अस्तु श्रौषट् (४), ये यजामहे (५)**—इस प्रकार सत्रह अक्षरोंवाले मन्त्रोंसे यज्ञमें आहुति ग्रहण करनेवाले॥ १५६॥

अष्टादशद्वीपपतिरष्टादशपुराणकृत्।
अष्टादशौषधीसृष्टिरष्टादशविधिः स्मृतः॥ १५७॥

१४५. **अष्टादशद्वीपपतिः**—'जम्बू' आदि सात द्वीपों और 'सिंहल' आदि ग्यारह उपद्वीपोंके अधीश्वर; १४६. **अष्टादशपुराणकृत्**—अठारह पुराणोंके कर्ता व्यासरूप; १४७. **अष्टादशौषधीसृष्टिः**—बारह मुख्य धान्य और छः उपधान्य—इन अठारह ओषधियों (अन्नों)-की सृष्टि करनेवाले; १४८. **अष्टादशविधिः**—अठारह विधिस्वरूप; (अपूर्व विधि,

नियम-विधि और परिसंख्या-विधि—ये प्रयोग और विनियोग आदिके भेदसे नौ प्रकारकी होती हैं। फिर गौणी और मुख्य भेदसे इनके अठारह प्रकार होते हैं।) ॥ १५७ ॥

अष्टादशलिपिव्यष्टिसमष्टिज्ञानकोविदः ।
एकविंशः पुमानेकविंशत्यङ्गुलिपल्लवः ॥ १५८ ॥

९४९. **अष्टादशलिपिव्यष्टिसमष्टिज्ञानकोविदः**—नागरी, द्राविड़ी और आन्ध्री आदिके भेदसे भूतलपर विभिन्न अठारह लिपियाँ हैं। उन भाषाओंको तथा उनके अवान्तर-भेदोंको भी पृथक्-पृथक् एवं समष्टिरूपसे जाननेमें कुशल; ९५०. **एकविंशः पुमान्**—पाँच ज्ञानेन्द्रिय, पाँच कर्मेन्द्रिय, पाँच विषय और पाँच भूत—इन बीस तत्त्वोंसे परे इक्कीसवाँ तत्त्व आत्मा; ९५१. **एकविंशत्यङ्गुलिपल्लवः**—दस हाथकी अंगुलियाँ, दस पैरोंकी अंगुलियाँ और एक शुण्डदण्ड—इस प्रकार इक्कीस अंगुलिपल्लवोंसे युक्त ॥ १५८ ॥

चतुर्विंशतितत्त्वात्मा पञ्चविंशाख्यपूरुषः ।
सप्तविंशतितारेशः सप्तविंशतियोगकृत् ॥ १५९ ॥

९५२. **चतुर्विंशतितत्त्वात्मा**—प्रकृति, महत्तत्त्व, अहंकार, ग्यारह इन्द्रियाँ, पाँच विषय और पाँच भूत—इस प्रकार चौबीस तत्त्व हैं; चौबीस तत्त्वस्वरूप; ९५३. **पञ्चविंशाख्यपूरुषः**—चौबीस तत्त्वोंसे परे विद्यमान, पचीसवें तत्त्वस्वरूप पुरुष; ९५४. **सप्तविंशतितारेशः**—अश्विनी आदि सत्ताईस नक्षत्रोंके स्वामी; ९५५. **सप्तविंशतियोगकृत्**—सत्ताईस योगोंके कर्ता ॥ १५९ ॥

द्वात्रिंशद्भैरवाधीशश्चतुस्त्रिंशन्महाह्रदः ।
षट्त्रिंशत्तत्त्वसम्भूतिरष्टात्रिंशत्कलातनुः ॥ १६० ॥

९५६. **द्वात्रिंशद्भैरवाधीशः**—बत्तीस भैरवोंके स्वामी (असितांग आदि चार भैरव हैं, जो आठ-आठके समुदाय हैं। इस तरह कुल बत्तीस भैरव हैं); ९५७. **चतुस्त्रिंशन्महाह्रदः**—पुष्कर आदि जो देवताओंद्वारा

खोदे गये विशाल सरोवर हैं, वे पवित्र 'महाह्रद' कहलाते हैं। उनकी संख्या चौंतीस बतलायी गयी है। ये चौंतीस महाह्रद जिनके स्वरूप हैं, वे; १५८. **षट्त्रिंशत्तत्त्वसम्भूतिः**—शैव-तन्त्रोक्त जो शिव आदि पृथ्वीपर्यन्त छत्तीस तत्त्व हैं, उनकी उत्पत्तिके कारण; **१५९. अष्टात्रिंशत्कलातनुः**—अग्निकी दस, सूर्यकी बारह और चन्द्रमाकी सोलह कलाएँ—कुल अड़तीस कलाएँ होती हैं। ये सब जिनके शरीर हैं, वे गणपति॥ १६०॥

नमदेकोनपञ्चाशन्मरुद्वर्गनिरर्गलः ।
पञ्चाशदक्षरश्रेणी पञ्चाशद्रुद्रविग्रहः ॥ १६१ ॥

१६०. **नमदेकोनपञ्चाशन्मरुद्वर्गनिरर्गलः**—उनचास मरुद्‌गणोंसे नमस्कृत एवं अप्रतिहत गतिवाले; **१६१. पञ्चाशदक्षरश्रेणी**—पचास अक्षर मालारूप; **१६२. पञ्चाशद्रुद्रविग्रहः**—श्रीकण्ठ आदि पचास शिवस्वरूप॥ १६१॥

पञ्चाशद्विष्णुशक्तीशः पञ्चाशन्मातृकालयः ।
द्विपञ्चाशद्वपुःश्रेणी त्रिषष्ट्यक्षरसंश्रयः ॥ १६२ ॥

१६३. **पञ्चाशद्विष्णुशक्तीशः**—केशव आदि विष्णुरूप और कीर्ति आदि उनकी शक्तियाँ—ये सब पचासकी संख्यामें हैं; इन सबके स्वामी; **१६४. पञ्चाशन्मातृकालयः**—पचास मातृका-वर्णोंके आलय अथवा लयस्थान नादस्वरूप; **१६५. द्विपञ्चाशद्वपुःश्रेणी**—लिंगपुराणमें वर्णित जो बावन पाश हैं, वे नूतन शरीर प्रदान करनेवाले हैं, अतः बावन शरीरपङ्क्तिस्वरूप; १६६. **त्रिषष्ट्यक्षरसंश्रयः**—तिरसठ अक्षरोंके आधार*॥ १६२॥

चतुःषष्ट्यर्णनिर्णेता चतुःषष्टिकलानिधिः ।
चतुःषष्टिमहासिद्धयोगिनीवृन्दवन्दितः ॥ १६३ ॥

१६७. **चतुःषष्ट्यर्णनिर्णेता**—चौंसठ अक्षरोंके निर्णायक;

* वर्णोंकी संख्या तिरसठ अथवा चौंसठ मानी गयी है। इनमें इक्कीस स्वर, पचीस स्पर्श, आठ यादि एवं चार यम कहे गये हैं। अनुस्वार, विसर्ग, दो पराश्रित वर्ण—जिह्वामूलीय तथा उपध्मानीय (≍क और≍प) और दुःस्पृष्ट लकार—ये तिरसठ वर्ण हैं। इनमें प्लुत लृकारको और गिन लिया जाय तो वर्णोंकी संख्या चौंसठ हो जाती है।

१६८. **चतुःषष्टिकलानिधिः**—चौंसठ कलाओंके आधार; १६९. **चतुःषष्टिमहासिद्धयोगिनीवृन्दवन्दितः**—अक्षोभ्य आदि चौंसठ महासिद्धों और उतनी ही योगिनियोंके समुदायसे वन्दित॥ १६३॥

अष्टषष्टिमहातीर्थक्षेत्रभैरवभावनः ।
चतुर्नवतिमन्त्रात्मा षण्णवत्यधिकप्रभुः॥ १६४॥

१७०. **अष्टषष्टिमहातीर्थक्षेत्रभैरवभावनः**—काशीखण्ड और पद्मपुराणमें शिव-सम्बन्धी अड़सठ महातीर्थ बताये गये हैं। उन सभी तीर्थक्षेत्रोंमें भैरव शिवकी भावना करनेवाले; १७१. **चतुर्नवतिमन्त्रात्मा**—अड़तीस कलामन्त्र और पचास मातृका कलाएँ—ये अठासी मन्त्र हुए। इनके अतिरिक्त हंस, शुचि, प्रतद्विष्णु, विष्णु, योनि और त्र्यम्बक—ये छः विष्णुकी मूलविद्याएँ हैं। इन सबका योग चौरानबे हुआ। इस प्रकार चौरानबे मन्त्रस्वरूप; १७२. **षण्णवत्यधिकप्रभुः**—तन्त्रराजमें श्रीचक्रके छियानबे देवता बताये गये हैं। विद्या और गणेशके योगसे अधिक देवता हो जाते हैं। इस प्रकार छियानबेसे अधिक देवताओंके अधिपति॥ १६४॥

शतानन्दः शतधृतिः शतपत्रायतेक्षणः ।
शतानीकः शतमखः शतधारावरायुधः॥ १६५॥

१७३. **शतानन्दः**—मानुषादि शतगुणोत्तर आनन्दस्वरूप; १७४. **शतधृतिः**—अनन्त ब्रह्माण्डोंको धारण करनेवाले; १७५. **शतपत्रायतेक्षणः**—प्रफुल्ल कमलके समान विशाल नेत्रवाले; १७६. **शतानीकः**—बहुसंख्यक सैन्यशक्तिसे सम्पन्न; १७७. **शतमखः**—सौ यज्ञोंका अनुष्ठान करनेवाले इन्द्रस्वरूप; १७८. **शतधारावरायुधः**—सौ धारों अथवा अरोंसे युक्त 'वज्र' नामक श्रेष्ठ आयुध धारण करनेवाले॥ १६५॥

सहस्त्रपत्रनिलयः सहस्त्रफणभूषणः ।
सहस्त्रशीर्षा पुरुषः सहस्त्राक्षः सहस्त्रपात्॥ १६६॥

१७९. **सहस्त्रपत्रनिलयः**—ब्रह्मरन्ध्रगत सहस्त्रदल-कमलमें विराजमान; १८०. **सहस्त्रफणभूषणः**—सहस्त्रफणधारी सर्पोंसे विभूषित; १८१.

सहस्रशीर्षा पुरुषः—असंख्य मस्तकवाले परमात्मा; १८२. **सहस्राक्षः**—सहस्रों नेत्रोंवाले १८३. **सहस्रपात्**—सहस्रों पैरोंवाले॥ १६६॥

सहस्रनामसंस्तुत्यः सहस्राक्षबलापहः।
दशसाहस्रफणभृत्फणिराजकृतासनः ॥ १६७॥

१८४. **सहस्रनामसंस्तुत्यः**—सहस्रनामोंद्वारा स्तवनीय; १८५. **सहस्राक्षबलापहः**—इन्द्रके बलको भी विध्वस्त कर देनेवाले; १८६. **दशसाहस्रफणभृत्फणिराजकृतासनः**—दस हजार फण धारण करनेवाले नागराजके ऊपर आसीन॥ १६७॥

अष्टाशीतिसहस्राद्यमहर्षिस्तोत्रयन्त्रितः।
लक्षाधीशप्रियाधारो लक्षाधारमनोमयः॥ १६८॥

१८७. **अष्टाशीतिसहस्राद्यमहर्षिस्तोत्रयन्त्रितः**—अट्ठासी हजारकी संख्यावाले आदि महर्षियोंके द्वारा किये गये स्तोत्रके द्वारा वशीभूत; १८८. **लक्षाधीशप्रियाधारः**—लक्षपतियोंके प्रिय आधार; १८९. **लक्षाधारमनोमयः**—लक्ष (लक्ष्य)-पर एकाग्र किये गये चित्तवाले; अथवा एकाग्रचित्त सत्पुरुषस्वरूप॥ १६८॥

चतुर्लक्षजपप्रीतश्चतुर्लक्षप्रकाशितः।
चतुरशीतिलक्षाणां जीवानां देहसंस्थितः॥ १६९॥

१९०. **चतुर्लक्षजपप्रीतः**—चार लाख मन्त्रके जपसे प्रसन्न होनेवाले; १९१. **चतुर्लक्षप्रकाशितः**—अठारह पुराणोंके चार लाख श्लोकोंद्वारा प्रकाशित रूपवाले; १९२. **चतुरशीतिलक्षाणां जीवानां देहसंस्थितः**—चौरासी लाख जीवोंके शरीरमें विराजमान॥ १६९॥

कोटिसूर्यप्रतीकाशः कोटिचन्द्रांशुनिर्मलः।
शिवाभवाध्युष्टकोटिविनायकधुरन्धरः ॥ १७०॥

१९३. **कोटिसूर्यप्रतीकाशः**—करोड़ों सूर्योंके समान तेजस्वी; १९४. **कोटिचन्द्रांशुनिर्मलः**—करोड़ों चन्द्रमाओंकी किरणोंके समान

निर्मल; ९९५. **शिवाभवाध्युष्टकोटिविनायकधुरन्धरः**—पार्वती और शिवके अधीनस्थ करोड़ों विनायकोंके संचालनका भार ढोनेवाले॥ १७०॥

सप्तकोटिमहामन्त्रमन्त्रितावयवद्युतिः ।
त्रयस्त्रिंशत्कोटिसुरश्रेणीप्रणतपादुकः ॥ १७१॥

९९६. **सप्तकोटिमहामन्त्रमन्त्रितावयवद्युतिः**—सात करोड़ महामन्त्रोंसे मन्त्रित अवयवोंकी कान्तिसे प्रकाशमान; ९९७. **त्रयस्त्रिंशत्कोटिसुरश्रेणीप्रणतपादुकः**—जिनकी चरण-पादुकाओंमें तैंतीस करोड़ देवताओंकी पंक्ति प्रणाम करती है, वे॥ १७१॥

(अनन्तदेवतासेव्यो ह्यनन्तमुनिसंस्तुतः * ।)
अनन्तनामानन्तश्रीरनन्तानन्तसौख्यदः ।
ॐ इति वैनायकं नाम्नां सहस्त्रमिदमीरितम् ॥ १७२॥

९९८. **अनन्तनामा**—अनन्त नामवाले; ९९९. **अनन्तश्रीः**—अनन्त विद्या, सम्पत्ति और कीर्तिवाले; १०००. **अनन्तानन्तसौख्यदः**—अनन्तानन्त सौख्य प्रदान करनेवाले। इस प्रकार गणेशजीके ये सहस्त्रनाम बताये गये॥ १७२॥

इदं ब्राह्मे मुहूर्ते वै यः पठेत् प्रत्यहं नरः ।
करस्थं तस्य सकलमैहिकामुष्मिकं सुखम्॥ १७३॥
आयुरारोग्यमैश्वर्यं धैर्यं शौर्यं बलं यशः ।
मेधा प्रज्ञा धृतिः कान्तिः सौभाग्यमतिरूपता॥ १७४॥
सत्यं दया क्षमा शान्तिर्दाक्षिण्यं धर्मशीलता ।
जगत्संयमनं विश्वसंवादो वादपाटवम्॥ १७५॥
सभापाण्डित्यमौदार्यं गाम्भीर्यं ब्रह्मवर्चसम् ।
औन्नत्यं च कुलं शीलं प्रतापो वीर्यमार्यता॥ १७६॥

* अनन्तदेवतासेव्यः—असंख्य देवताओंद्वारा सेवनीय; अनन्तमुनिसंस्तुतः—अनन्त मुनिगणोंद्वारा संस्तुत।

ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं स्थैर्यं विश्वातिशायिता।
धनधान्याभिवृद्धिश्च सकृदस्य जपाद्भवेत्॥ १७७॥

जो मनुष्य प्रतिदिन ब्राह्ममुहूर्तमें इन नामोंका पाठ करता है, उसके हाथमें लौकिक और पारलौकिक सारे सुख आ जाते हैं। इसके एक बार जप करनेसे आयु, आरोग्य, ऐश्वर्य, धैर्य, शौर्य, बल, यश, धारणावती बुद्धि, प्रज्ञा, धृति, कान्ति, सौभाग्य, अतिशय रूप-सौन्दर्य, सत्य, दया, क्षमा, शान्ति, दाक्षिण्य, धर्मशीलता, जगद्वशीकरण, सबकी अनुकूलता, शास्त्रार्थमें पटुता, सभापाण्डित्य, उदारता, गम्भीरता, ब्रह्मतेज, उन्नति, उत्तम कुल, शील, प्रताप, वीर्य, आर्यत्व, ज्ञान, विज्ञान, आस्तिक्य, स्थिरता, विश्वमें उत्कर्ष और धन-धान्यकी वृद्धि—ये सभी उत्तम फल प्राप्त होते हैं॥ १७३—१७७॥

वश्यं चतुर्विधं नृणां जपादस्य प्रजायते।
राज्ञो राजकलत्रस्य राजपुत्रस्य मन्त्रिणः॥ १७८॥
जप्यते यस्य वश्यार्थं स दासस्तस्य जायते।
धर्मार्थकाममोक्षाणामनायासेन साधनम्॥ १७९॥

इस मन्त्रके जपसे मनुष्योंके लिये चार प्रकारका वशीकरण सिद्ध होता है—राजाका, राजाके अन्तःपुरका, राजकुमारका तथा राज्यमन्त्रीका। जिसको वशमें करनेके लिये इस सहस्रनामका जप किया जाता है, वह उस प्रयोग करनेवालेका दास हो जाता है। इस सहस्रनामके द्वारा बिना किसी आयासके धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी सिद्धि होती है॥ १७८-१७९॥

शाकिनीडाकिनीरक्षोयक्षोरगभयापहम्।
साम्राज्यसुखदं चैव समस्तरिपुमर्दनम्॥ १८०॥

यह स्तोत्र शाकिनी, डाकिनी, राक्षस, यक्ष और सर्पके भयका नाश करनेवाला है। यह साम्राज्यका सुख देनेवाला तथा समस्त शत्रुओंका मर्दन करनेवाला है॥ १८०॥

समस्तकलहध्वंसि दग्धबीजप्ररोहणम्।
दुःस्वप्नशमनं क्रुद्धस्वामिचित्तप्रसादनम्॥ १८१॥

इस सहस्रनामसे सब प्रकारके कलह-क्लेशका नाश होता है, इससे जले हुए बीजमें भी अंकुर निकल आते हैं। यह बुरे स्वप्नोंके कुफलको मिटाता है और रोषमें भरे हुए स्वामीके चित्तको प्रसन्न करनेवाला है॥ १८१॥

षट्कर्माष्टमहासिद्धित्रिकालज्ञानसाधनम्।
परकृत्याप्रशमनं परचक्रविमर्दनम्॥ १८२॥
संग्रामरङ्गे सर्वेषामिदमेकं जयावहम्।
सर्ववन्ध्यात्वदोषघ्नं गर्भरक्षैककारणम्॥ १८३॥

यह सहस्रनाम मोहन-आकर्षण आदि छः कर्म, आठ महासिद्धि तथा त्रिकालज्ञानका साधन करनेवाला है। शत्रुओंद्वारा अपने ऊपर प्रेरित कृत्याको शान्त करनेवाला तथा शत्रु-मण्डलका मर्दन करनेवाला है। संग्रामकी रंगभूमिमें यह अकेला ही सबको विजय दिलानेवाला, वन्ध्यापन-सम्बन्धी सम्पूर्ण दोषोंका नाशक और गर्भकी रक्षाका मुख्य साधन है॥ १८२-१८३॥

पठ्यते प्रत्यहं यत्र स्तोत्रं गणपतेरिदम्।
देशे तत्र न दुर्भिक्षमीतयो दुरितानि च॥ १८४॥

जहाँ प्रतिदिन गणपतिके इस स्तोत्रका पाठ किया जाता है, उस देशमें दुर्भिक्ष, ईतिभय और दुराचार नहीं होते॥ १८४॥

न तद्गृहं जहाति श्रीर्यत्रायं जप्यते स्तवः।
क्षयकुष्ठप्रमेहार्शोभगंदरविषूचिकाः॥ १८५॥
गुल्मं प्लीहानमश्मानमतिसारं महोदरम्।
कासं श्वासमुदावर्तं शूलं शोफादिसम्भवम्॥ १८६॥
शिरोरोगं वमिं हिक्कां गण्डमालामरोचकम्।
वातपित्तकफद्वन्द्वत्रिदोषजनितज्वरम्॥ १८७॥

आगन्तुं विषमं शीतमुष्णं चैकाहिकादिकम्।
इत्याद्युक्तमनुक्तं वा रोगं दोषादिसम्भवम्॥ १८८॥
सर्वं प्रशमयत्याशु स्तोत्रस्यास्य सकृज्जपः।
सकृत्पाठेन संसिद्धः स्त्रीशूद्रपतितैरपि॥ १८९॥
सहस्रनाममन्त्रोऽयं जपितव्यः शुभाप्तये।

जहाँ इस स्तोत्रका पाठ होता है, उस घरको लक्ष्मी कभी नहीं छोड़ती है। क्षय, कोढ़, प्रमेह, बवासीर, भगंदर, विषूचिका (हैजा), गुल्म, प्लीहा, पथरी, अतिसार, उदर-वृद्धि, खाँसी, दमा, ऊपरकी डकार उठना, शूल, शोथ आदि, शिरोरोग, वमन, हिचकी, गण्डमाला (गलसूआ), अरुचि, वात-पित्त-कफजनित द्वन्द्व, त्रिदोषजनित ज्वर, आगन्तुक ज्वर, विषमज्वर, शीतज्वर, उष्णज्वर, एकाहिक आदि ज्वर, यहाँ कथित या अकथित दोषादि-सम्भवरोग—इन सबका इस स्तोत्रके एक बार पाठसे शीघ्र शमन हो जाता है। यह सहस्रनाम एक बारके पाठसे ही सिद्ध हो जाता है। स्त्री, शूद्र और पतितोंको भी शुभकी प्राप्तिके लिये इस सहस्रनाम-स्तोत्रका जप (पाठ) करना चाहिये॥ १८५—१८९½॥

महागणपतेः स्तोत्रं सकामः प्रजपन्निदम्॥ १९०॥
इच्छितान् सकलान् भोगानुपभुज्येह पार्थिवान्।
मनोरथफलैर्दिव्यैर्व्योमयानैर्मनोरमैः॥ १९१॥
चन्द्रेन्द्रभास्करोपेन्द्रब्रह्मशर्वादिसद्मसु।
कामरूपः कामगतिः कामतो विचरन्निह॥ १९२॥
भुक्त्वा यथेप्सितान् भोगानभीष्टान् सह बन्धुभिः।
गणेशानुचरो भूत्वा महागणपतेः प्रियः॥ १९३॥
नन्दीश्वरादिसानन्दी नन्दितः सकलैर्गणैः।
शिवाभ्यां कृपया पुत्रनिर्विशेषं च लालितः॥ १९४॥

शिवभक्तः पूर्णकामो गणेश्वरवरात् पुनः।
जातिस्मरो धर्मपरः सार्वभौमोऽभिजायते॥ १९५॥

महागणपतिके इस स्तोत्रका सकामभावसे जप करनेवाला पुरुष इहलोकमें पृथ्वीपर सुलभ समस्त मनोवांछित भोगोंको भोगकर मनोरथ-फलोंकी प्राप्तिपूर्वक दिव्य एवं मनोरम व्योम-विमानोंपर बैठकर चन्द्र, इन्द्र, सूर्य, विष्णु, ब्रह्मा और शिव आदिके लोकोंमें इच्छानुसार रूप धारण करके विचरता है; जहाँ-जहाँ इच्छा होती है, वहाँ-वहाँ पहुँचता है; अपने बन्धुजनोंके साथ अभीष्ट भोगोंको भोगता है; महागणपतिका प्रिय अनुचर होता है और नन्दीश्वर आदिके साथ आनन्दित हो सकल शिवगणोंद्वारा अभिनन्दित होता है। पार्वती और शिव—ये दोनों पुत्रकी भाँति उसका लाड-प्यार करते हैं। वह शिवभक्त तथा पूर्णकाम होता है। फिर गणेशजीके वरदानसे इहलोकमें धर्मपरायण सार्वभौम सम्राट् होता है और उसे पूर्वजन्मकी बातें स्मरण रहती हैं॥ १९०—१९५॥

निष्कामस्तु जपन्नित्यं भक्त्या विघ्नेशतत्परः।
योगसिद्धिं परां प्राप्य ज्ञानवैराग्यसंस्थितः॥ १९६॥
निरन्तरोदितानन्दे परमानन्दसंविदि।
विश्वोत्तीर्णे परे पारे पुनरावृत्तिवर्जिते॥ १९७॥
लीनो वैनायके धाम्नि रमते नित्यनिर्वृतः।

जो भक्तिभावसे गणेशके भजनमें तत्पर हो निष्काम भावसे इस स्तोत्रका नित्य पाठ करता है, वह योगजनित परम सिद्धिको पा लेता है और ज्ञान-वैराग्यनिष्ठ हो जहाँ निरन्तर आनन्दका उदय होता है, जो परमानन्द संवित्स्वरूप, लोकातीत, पुनरावृत्तिरहित तथा परम पाररूप है, उस गणपतिधाममें नित्यलीन एवं परमानन्दनिमग्न हो रमता रहता है॥ १९६-१९७½॥

यो नामभिर्हुनेदेतैरर्चयेत् पूजयेन्नरः॥ १९८॥

राजानो वश्यतां यान्ति रिपवो यान्ति दासताम्।
मन्त्राः सिध्यन्ति सर्वेऽपि सुलभास्तस्य सिद्धयः ॥ १९९ ॥

जो मनुष्य इन सहस्रनामोंद्वारा हवन, अर्चन और पूजन करता है, राजालोग उसके वशमें होते हैं और शत्रु दासवत् हो जाते हैं। उसके सारे मन्त्र सिद्ध होते हैं और उसे सम्पूर्ण सिद्धियाँ सुलभ होती हैं ॥ १९८-१९९ ॥

मूलमन्त्रादपि स्तोत्रमिदं प्रियतरं मम।
नभस्ये मासि शुक्लायां चतुर्थ्यां मम जन्मनि ॥ २०० ॥
दूर्वाभिर्नामभिः पूजां तर्पणं विधिवच्चरेत्।
अष्टद्रव्यैर्विशेषेण जुहुयाद्भक्तिसंयुतः ॥ २०१ ॥
तस्येप्सितानि सर्वाणि सिद्ध्यन्त्यत्र न संशयः।
इदं प्रजप्तं पठितं पाठितं श्रावितं श्रुतम् ॥ २०२ ॥
व्याकृतं चर्चितं ध्यातं विमृष्टमभिनन्दितम्।
इहामुत्र च सर्वेषां विश्वैश्वर्यप्रदायकम् ॥ २०३ ॥

[गणेशजी कहते हैं—] मूलमन्त्रकी अपेक्षा भी यह स्तोत्र मुझे अधिक प्रिय है। भाद्रपदमासके शुक्लपक्षकी चतुर्थी तिथिको मेरे जन्म-दिवसपर इन सहस्रनामोंद्वारा दूर्वार्पण करते हुए विधिवत् मेरा पूजन एवं तर्पण करे। विशेषतः अष्टगन्ध-द्रव्योंद्वारा भक्तिपूर्वक हवन करे। जो ऐसा करता है, उसके सम्पूर्ण अभीष्ट मनोरथ सिद्ध होते हैं; इसमें संशय नहीं है। इसके जप, पठन-पाठन, सुनना-सुनाना, व्याख्यान, चर्चा, ध्यान, विचार और अभिनन्दन—ये इहलोक और परलोकमें सबके लिये सम्पूर्ण ऐश्वर्यको देनेवाले हैं ॥ २००—२०३ ॥

स्वच्छन्दचारिणाप्येष येनायं धार्यते स्तवः।
स रक्ष्यते शिवोद्भूतैर्गणैरध्युष्टकोटिभिः ॥ २०४ ॥

जो इस स्तोत्रको धारण करता है, वह स्वच्छन्दतापूर्वक कहीं भी

क्यों न विचरता रहे, भगवान् शिवके करोड़ों गण उसकी रक्षा करते रहते हैं॥ २०४॥

पुस्तके लिखितं यत्र गृहे स्तोत्रं प्रपूजयेत्।
तत्र सर्वोत्तमा लक्ष्मीः संनिधत्ते निरन्तरम्॥ २०५॥

जिस घरमें इस स्तोत्रको पुस्तकरूपमें लिखकर कोई इसका पूजन करता है, वहाँ सर्वोत्कृष्ट लक्ष्मी निरन्तर निवास करती हैं॥ २०५॥

दानैरशेषैरखिलैर्व्रतैश्च
तीर्थैरशेषैः सकलैर्मखैश्च।
न तत्फलं विन्दति यद्गणेश-
सहस्त्रनाम्नां स्मरणेन सद्यः॥ २०६॥

एतन्नाम्नां सहस्त्रं पठति दिनमणौ प्रत्यहं प्रोज्जिहाने
सायं मध्यंदिने वा त्रिषवणमथवा संततं वा जनो यः।
स स्यादैश्वर्यधुर्यः प्रभवति च सतां कीर्तिमुच्चैस्तनोति
प्रत्यूहं हन्ति विश्वं वशयति सुचिरं वर्धते पुत्रपौत्रैः॥ २०७॥

श्रीगणेशसहस्त्रनामका स्मरण (जप) करके मनुष्य जिस फलको तत्काल प्राप्त कर लेता है, उसे सब प्रकारके दान, व्रत, तीर्थसेवन और यज्ञोंके अनुष्ठानद्वारा भी नहीं पा सकता। जो मनुष्य प्रतिदिन प्रातःकाल सूर्योदयके समय, मध्याह्नकालमें या सायंकालमें अथवा तीनों समय या सदा ही इन सहस्त्रनामोंका पाठ करता है, वह सत्पुरुषोंमें ऐश्वर्यशाली होता है, अपनी कीर्तिका अतिशय विस्तार करता है, विघ्नोंको नष्ट कर देता है, संसारको वशमें कर लेता है तथा वह पुत्र-पौत्रोंके साथ सुदीर्घकालतक निरन्तर वृद्धिशील होता है॥ २०६-२०७॥

अकिञ्चनोऽपि मत्प्राप्तिचिन्तको नियताशनः।
जपेत्तु चतुरो मासान् गणेशार्चनतत्परः॥ २०८॥

दरिद्रतां समुन्मूल्य सप्तजन्मानुगामपि।
लभते महतीं लक्ष्मीमित्याज्ञा पारमेश्वरी॥ २०९॥
आयुष्यं वीतरोगं कुलमतिविमलं सम्पदश्चार्तदानाः
कीर्तिर्नित्यावदाता भणितिरभिनवा कान्तिरव्याधिभव्या।
पुत्राः सन्तः कलत्रं गुणवदभिमतं यद्यदेतच्च सत्यं
नित्यं यः स्तोत्रमेतत् पठति गणपतेस्तस्य हस्ते समस्तम्॥ २१०॥

॥ इति श्रीगणेशपुराणे उपासनाखण्डे महागणपतिप्रोक्तं गणेशसहस्रनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

जिसके पास कुछ नहीं है, जो दरिद्र है, वह मेरी प्राप्तिके उद्देश्यसे नियमित आहार करके मुझ गणेशके पूजनमें तत्पर रहकर चार मासतक इस स्तोत्रका जप करे। ऐसा करनेसे वह सात जन्मोंसे चली आनेवाली दरिद्रताका भी उन्मूलन करके महती लक्ष्मीको प्राप्त कर लेता है, यह मुझ परमेश्वरकी आज्ञा है। आयु, आरोग्य, निर्मल कुल, पीड़ितोंको दी जा सकनेवाली सम्पत्ति, नित्य उज्ज्वल कीर्ति, नयी-नयी सूक्ति, रोगहीनताके साथ भव्य कान्ति, सत्पुत्र, मनोनुकूल गुणवती स्त्री और सत्यसंकल्पता—ये सारी वस्तुएँ, जो गणपतिके इस स्तोत्रका नित्य पाठ करता है, उसके हाथमें आ जाती हैं॥ २०८—२१०॥

॥ इस प्रकार श्रीगणेशपुराणके अन्तर्गत उपासनाखण्डमें महागणपतिप्रोक्त श्रीगणेशसहस्रनामस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

नमस्तस्मै गणेशाय ब्रह्मविद्याप्रदायिने।
यस्यागस्त्यायते नाम विघ्नसागरशोषणे॥

(गणेशपुराण, उपासना० १।१)

जो ब्रह्मविद्या प्रदान करनेवाले हैं तथा जिनका नाम विघ्नसागरको सुखानेके लिये अगस्त्यके समान है, उन श्रीगणेशजीको नमस्कार है।

गणेशस्यैकविंशतिनामपाठः

ॐ गणञ्जयो गणपतिर्हेरम्बो धरणीधरः।
महागणपतिर्लक्षप्रदः क्षिप्रप्रसादनः॥ १॥
अमोघसिद्धिरमितो मन्त्रश्चिन्तामणिर्निधिः।
सुमङ्गलो बीजमाशापूरको वरदः शिवः॥ २॥
काश्यपो नन्दनो वाचासिद्धो ढुण्ढिविनायकः।
मोदकैरेभिरत्रैकविंशत्या नामभिः पुमान्॥ ३॥
(उपायनं ददेद्भक्त्या मत्प्रसादं चिकीर्षति।
वत्सरं विघ्नराजस्य तथ्यमिष्टार्थसिद्धये॥)
यः स्तौति मद्‌गतमना मदाराधनतत्परः।
स्तुतो नाम्नां सहस्रेण तेनाहं नात्र संशयः॥ ४॥

१. गणंजय, २. गणपति, ३. हेरम्व, ४. धरणीधर, ५. महागणपति, ६. लक्षप्रद, ७. क्षिप्रप्रसादन, ८. अमोघसिद्धि, ९. अमित, १०. मन्त्र, ११. चिन्तामणि, १२. निधि, १३. सुमंगल, १४. बीज, १५. आशापूरक, १६. वरद, १७. शिव, १८. काश्यप, १९. नन्दन, २०.वाचासिद्ध तथा २१. ढुण्ढिविनायक—ये इक्कीस नाम-मोदक हैं। जो पुरुष इन मोदकस्वरूप इक्कीस नामोंद्वारा (मुझे भक्ति-पूर्वक उपहार अर्पित करता है; मेरा प्रसाद चाहता है और अभीष्ट-सिद्धिके लिये एक वर्षतक मुझ विघ्नराजके इस यथार्थ स्तोत्रका पाठ करता है;) मुझमें मन लगाकर, मेरी आराधनामें तत्पर रहकर मेरा स्तवन करता है, उसके द्वारा सहस्रनामस्तोत्रसे मेरी स्तुति हो जाती है, इसमें संशय नहीं है॥ १—४॥

नमो नमः सुरवरपूजिताङ्घ्रये
नमो नमो निरुपममङ्गलात्मने।

नमो नमो विपुलपदैकसिद्धये
नमो नमः करिकलभाननाय ते॥ ५॥

॥ इति श्रीगणेशपुराणे उपासनाखण्डे महागणपतिप्रोक्त गणेशस्यैकविंशतिनामपाठः सम्पूर्णः ॥

श्रेष्ठ देवताओंद्वारा पूजित चरणवाले गणेशको नमस्कार है, नमस्कार है। अनुपम मंगलस्वरूप गणपतिको बारम्बार नमस्कार है। एकमात्र जिनसे विपुलपद—परमधामकी सिद्धि होती है, उन गणाधीशको बारम्बार नमस्कार है। हे प्रभो! गजशावकके समान मुखवाले आपको बारम्बार नमस्कार है॥ ५॥

॥ इस प्रकार श्रीगणेशपुराणके अन्तर्गत उपासनाखण्डमें महागणपतिप्रोक्त गणेशजीके इक्कीस नामोंका पाठ सम्पूर्ण हुआ॥

विभिन्न गणेशगायत्री

- **ॐ तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात्॥**
(तैत्तिरीयारण्यक एवं महानारायणोपनिषद्)

- **ॐ तत्कराटाय विद्महे हस्तिमुखाय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात्॥**
(कृ०यजु० मैत्रायणी० २।९।१।६)

- **ॐ एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात्॥**
(गणपत्यथर्वशीर्ष ८)

- **ॐ लम्बोदराय विद्महे महोदराय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात्॥**
(अग्निपुराण ७१।६)

- **ॐ महोत्कटाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात्॥**
(अग्निपुराण १७९।४)

आरती एवं भजन

आरती (१)

जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा।
माता जाकी पार्वती पिता महादेवा॥
एकदन्त दयावन्त चार भुजा धारी।
मस्तक सिन्दूर सोहे मूसे की सवारी॥
अन्धन को आँख देत कोढ़िन को काया।
बाँझन को पुत्र देत निर्धन को माया॥
लड्डुवन का भोग लगे सन्त करे सेवा।
हार चढ़े फूल चढ़े और चढ़े मेवा॥
दीनन की लाज राख शम्भु-सुत वारी।
कामना को पूरा करो जग बलिहारी॥

आरती (२)

आरति गजवदन विनायक की।
सुर-मुनि-पूजित गणनायक की॥ टेक॥
एकदंत शशिभाल गजानन,
विघ्नविनाशक शुभगुण-कानन,
शिवसुत वन्द्यमान-चतुरानन,
दुःख-विनाशक सुखदायक की॥ सुर०॥
ऋद्धि-सिद्धि-स्वामी समर्थ अति,
विमल बुद्धि दाता सुविमल-मति,
अघ-वन-दहन, अमल अबिगत-गति,
विद्या-विनय-विभव-दायक की॥ सुर०॥
पिङ्गल नयन, विशाल शुण्डधर,
धूम्रवर्ण शुचि वज्राङ्कुश-कर,
लम्बोदर बाधा-विपत्ति-हर,
सुर-वन्दित सब बिधि लायक की॥ सुर०॥

आरती (३)

गणपति की सेवा मंगल मेवा सेवा से सब विघ्न टरैं।
तीन लोक तैंतीस देवता द्वार खड़े सब अर्ज करैं॥ टेर॥
ऋधिसिधि दक्षिण बाम विराजैं अरु आनंदसों चमर करैं।
धूप दीप औलिया आरती भक्त खड्या जयकार करैं॥ गणप० ॥ १ ॥
गुड़ के मोदक भोग लगत हैं मूषक वाहन चढ़ा सरैं।
सौम्य रूप से ये गणपति को विघ्न भाजज्या दूर परैं॥ गणप० ॥ २ ॥
भादौं मास और शुक्ल चतुर्थी दिन दोपारा पूर परैं।
लियो जन्म गणपति प्रभुजी सुनि दुर्गा मन आनंद भरैं॥ गणप० ॥ ३ ॥
अद्भुत बाजा बज्या इंद्र का देव वधू जहँ गान करैं।
श्रीशंकर के आनँद उपज्यो नाम सुन्या सब विघ्न टरैं॥ गणप० ॥ ४ ॥
आनि विधाता बैठे आसन इंद्र अप्सरा निरत करैं।
देख वेद ब्रह्माजी जाको विघ्नविनाशक नाम धरैं॥ गणप० ॥ ५ ॥
एकदंत गजवदन विनायक त्रिनयन रूप अनूप धरैं।
पग थंभा सा उदर पुष्ट है देख चंद्रमा हास्य करैं॥ गणप० ॥ ६ ॥
दै शराप श्रीचंद्र देव को कला हीन तत काल करैं।
चौदा लोक में फिरैं गणपती तीन भुवन में राज्य करैं॥ गणप० ॥ ७ ॥
उठ प्रभात जब करे ध्यान कोइ ताके कारज सर्व सरैं।
पूजा काले गाव आरती ताके शिर यश छत्र फिरैं॥ गणप० ॥ ८ ॥
गणपति की पूजा पेला करणी काम सबी निर्विघ्न सरैं।
'श्रीपरताप' गणपतीजी की हाथ जोड़कर स्तुति करैं॥
गणपति की सेवा मंगल मेवा सेवा से सब विघ्न टरैं॥ ९ ॥

आरती (४)

श्रीगनपति भज प्रगट पार्वती अंक बिराजत अविनासी।
ब्रह्मा-बिष्णु-सिवादि सकल सुर करत आरती उल्लासी॥
त्रिसूलधरको भाग्य मानिकैं सब जुरि आये कैलासी।
करत ध्यान, गंधर्व गान-रत, पुष्पनकी हो वर्षा-सी॥
धनि भवानि व्रत साधि लह्यो जिन पुत्र परम गोलोकासी।
अचल अनादि अखंड परात्पर भक्तहेतु भव-परकासी॥
विद्या-बुद्धि-निधान गुनाकर बिघ्नबिनासन दुखनासी।
तुष्टि पुष्टि सुभ लाभ लक्ष्मि सँग रिद्धि सिद्धि-सी हैं दासी॥
सब कारज जग होत सिद्ध सुभ द्वादस नाम कहे छासी।
कामधेनु चिंतामनि सुरतरु चार पदारथ देतासी॥
गजआनन सुभ सदन रदन इक सुंडि ढुंढि पुर पूजा-सी।
चार भुजा मोदक-करतल सजि अंकुस धारत फरसा-सी॥
ब्याल सूत्र त्रयनेत्र भाल ससि उन्दुरवाहन सुखरासी।
जिनके सुमिरन सेवन करते टूट जात जमकी फाँसी॥
'कृष्णपाल' धरि ध्यान निरन्तर मन लगाय जो कोइ गासी।
दूर करैं भवकी बाधा प्रभु मुक्ति जन्म निजपद पासी॥

आरती (५)

[मराठीमें]

जय देव जय देव जय मंगलमूर्ती।
दर्शनमात्रें मन कामना पुरती॥ ध्रु०॥
सुखकर्ता दुःखहर्ता वार्ता विघ्नाची।
नुरवी पुरवी प्रेम कृपा जयाची॥
सर्वांगीं सुन्दर उटि शेंदुराची।
कण्ठीं झलके माल मुक्ताफलांची॥ जय० १॥
रत्नखचित फरा तुज गौरीकुमरा।
चन्दनाची उटी कुंकमकेशरा॥
हिरेजडित मुकुट शोभतो बरा।
रुणझुणती नूपुरें चरणीं घागरिया॥ जय० २॥
लम्बोदर पीताम्बर फणिवरबन्धना।
सरल सोंड वक्रतुण्ड त्रिनयना॥
दास रामाचा वाट पाहे सदना।
संकटीं पावावें निर्वाणीं रक्षावें, सुरवरवन्दना॥ जय० ३॥

(समर्थ स्वामी श्रीरामदासजी)

आरती (६)

[मराठीमें]

जय जय जी गणराज विद्या-सुखदाता।
धन्य तुमरा दर्शन मेरा मन रमता॥ ध्रु०॥
शेंदुर लाल चढ़ायो अच्छा गजमुख को।
दोंदिल लाल बिराजे सुत गौरी-हर को॥
हाथ लिये गुड-लड्डू साँईं सुरवर को।
महिमा कहे न जाय लागत हूँ पद को॥ जय० १॥
अष्टौ सिद्धी दासी संकट को बैरी।
विघ्न विनाशक मंगल मूरत अधिकारी॥
कोटी सूरज प्रकाश ऐसी छबि तेरी।
गण्डस्थल मदमस्तक झूले शशि-बहारी॥ जय० २॥
भाव-भगति से कोई शरणागत आवे।
संतत सम्पत सबही भरपूर पावे॥
ऐसे तुम महाराज मोको अति भावे।
'गोसावीनन्दन' निशि-दिन गुण गावे॥ जय० ३॥

(श्रीगोसावीनन्दन)

श्रीगणेशसे तुलसीदासजीकी याचना

गाइये गनपति जगबंदन।
संकर-सुवन भवानी-नंदन॥
सिद्धि-सदन, गज-बदन, बिनायक।
कृपा-सिंधु, सुंदर, सब-लायक॥
मोदक-प्रिय, मुद-मंगल-दाता।
बिद्या-बारिधि, बुद्धि-बिधाता॥
माँगत तुलसिदास कर जोरे।
बसहिं रामसिय मानस मोरे॥

(विनय-पत्रिका)

देव-देव! भक्तन के मानस में आइये!

मंत्रमय गनेस बिघन-हरन सदा गाइये।
प्रथम जाहि गाय-गाय सकल सिधि पाइये॥
मंत्रको सरूप सोई गजमुख ठहराइये।
मंत्र-भाग चारि भुजा भालचंद्र ध्याइये॥
अंकुश-सी दूब ज्ञान रूप सो बढ़ाइये।
मदहर सिंदूर शीश, मोदक-फल भाइये॥
भक्तमाल एकदंत केवल सुखदाइये।
देव-देव! भक्तन के मानस में आइये॥

(श्रीकाष्ठजिह्वास्वामी)

श्रीगणेश-प्रणति

सुंदर लसत बिसाल भाल सिंदूर पूरबर।
मनहुँ मुदित गिरि उदित अरुन प्रतिबिंब सूर-कर॥
सुंडादंड सुरेस बेष इक रदन बिराजत।
लंबोदर भुज चारि चारु उत्तम बपु छाजत॥
अघहर गिरीस-गिरिजातनय भयो जासु जस धवल जग।
कर जोरि 'वीर' अति मुदित मन करत प्रनति प्रति तासु पग॥

(श्रीवीर 'कवि')

जय गणेश गणनाथ दयानिधि

जय गणेश गणनाथ दयानिधि।
सकल विघन कर दूर हमारे॥ जय०॥
प्रथम धरे जो ध्यान तुमारो।
तिसके पूरण कारज सारे॥ १॥ जय०
लंबोदर गजबदन मनोहर।
कर त्रिशूल परशूवर धारे॥ २॥ जय०
ऋद्धि सिद्धि दोउ चमर डुलावे।
मूषक वाहन परम सुखारे॥ ३॥ जय०
ब्रह्मादिक सुर ध्यावत मन में।
ऋषिमुनिगण सब दास तुमारे॥ ४॥ जय०
'ब्रह्मानंद' सहाय करो नित।
भक्तजनों के तुम रखवारे॥ ५॥ जय०

प्रभु जय गौरीनन्दा

प्रभु जय गौरीनन्दा,
गणपति आनन्द कन्दा, मैं चरणन वन्दा॥ प्रभु०॥
सुण्ड सुडोला नेत्र विशाला, कुण्डल झलकन्ता।
बहियाँ तो वाजूवन्दा, पहुँची निरखन्दा॥ प्रभु०॥
सुकट मुकुट सोहन्ता, मस्तक सोहन्ता।
कुंकुम केशर चन्दन, सिंदूर वदन वन्दा॥ प्रभु०॥
मूषक वाहन राजत, शिवसुत आनन्दा।
कहें तो 'माधव दासा', काटत यम फन्दा॥ प्रभु०॥

श्रीसिद्धि-गणराज

रक्तवर्ण शुभ, एकदन्त, शुचिध्वज, मूषक, शोभित शशि भाल।
कम्बु कमल, भुज अष्ट, पाश-पुस्तक-त्रिशूल, करचक्र, सुमाल॥
गज-मुख धान्य-मञ्जरी राजत, विपद-विघ्नवारण शुभधाम।
अखिल अमङ्गलहर, हर-सुत, श्रीसिद्धिसहित गणराज प्रणाम॥
(पदरत्नाकर)

जय जय जय गणपति गणनायक!

जय जय जय गणपति गणनायक!
करुणासिन्धु, बन्धु जन-जनके, सिद्धि-सदन, सेवक-सुखदायक॥
कृष्णस्वरूप, अनूप-रूप अति, विघ्न-बिदारण, बोध-विधायक।
सिद्धि-बुद्धि-सेवित, सुषमानिधि, नीति-प्रीति-पालक, वरदायक॥
शंकर-सुवन, भुवन-भय-वारण, वारन-वदन, विनायक-नायक।
मोदकप्रिय, निज-जन-मन-मोदक, गिरि-तनया-मन-मोद-प्रदायक॥
अमल, अकल अरु सकल-कलानिधि, रिद्धि-सिद्धिदायक, सुरनायक।
ज्ञान-ध्यान-विज्ञान दान करि, निज-जन-मनवाञ्छित फल-दायक॥
प्रथम-पूज्य, सुरसेव्य एक-रद, सदा एकरस, खल-दल-शायक।
बिद्या-बल-विवेक-वर-वारिधि, विश्ववन्द्य, विबुधाधिप-नायक॥
चरण-शरण-जन जानि दयानिधि! देहु एक यह वर वरदायक।
जन-जनमें हो नीति-प्रीति नित, रहे न कोउ विषय-विष-पायक॥

(स्वामी सनातनदेव)

गीताप्रेस, गोरखपुरकी निजी दूकानें/शाखाएँ

इन्दौर-452001	जी० 5, श्रीवर्धन, 4 आर. एन. टी. मार्ग **Mob. 9630111144**	✆ (0731) 2526516, 2511977
ऋषिकेश-249304	गीताभवन, पो० स्वर्गाश्रम **Mob. 7002652212**	
कटक-753009	भरतिया टावर्स, बादाम बाड़ी **Mob. 8093091800, 9338091800, 8847856627**	✆ (0671) 2335481
कानपुर-208001	24/55, बिरहाना रोड **Mob. 8299309991, 9839922098**	✆ (0512) 2352351
कोयम्बटूर-641018	गीताप्रेस मैंशन, 8/1 एम, रेसकोर्स **Mob. 9943112202, 9363007365**	
कोलकाता-700007	गोबिन्दभवन; 151, महात्मा गाँधी रोड **Mob. 9831004222, 9804801447**	✆ (033) 40605293
गोरखपुर-273005	गीताप्रेस—पो० गीताप्रेस **Mob. 8188054402, 8188054403** **email:booksales@gitapress.org**	
चेन्नई-600010	इलेक्ट्रो हाउस No. 23 रामनाथन स्ट्रीट किलपौक **Mob. 7200050708**	✆ (044) 26615959, 26615909
जलगाँव-425001	7, भीमसिंह मार्केट, रेलवे स्टेशनके पास **Mob. 9422281291, 7020118397**	✆ (0257) 2226393
दिल्ली-110006	2609, नयी सड़क **Mob. 7289802606, 9999732072**	✆ (011) 23269678, 23259140
नागपुर-440002	श्रीजी कृपा कॉम्प्लेक्स, 851, न्यू इतवारी रोड **Mob. 8830154589**	✆ (0712) 2734354
पटना-800004	अशोकराजपथ, महिला अस्पतालके सामने **Mob. 8002826662, 8210494381**	✆ (0612) 2300325
बेंगलुरु-560027	7/3, सेकेण्ड क्रास, लालबाग रोड **Mob. 8310731545, 9341891495**	
भीलवाड़ा-311001	जी 7, आकार टावर, सी ब्लाक, गान्धीनगर **Mob. 9928527747**	✆ (01482) 248330
मुम्बई-400002	282, सामलदास गाँधी मार्ग (प्रिन्सेस स्ट्रीट) **Mob. 9768954885, 8369536765**	✆ (022) 22030717, 42667046
राँची-834001	कार्ट सराय रोड, अपर बाजार, बिड़ला गद्दीके प्रथम तलपर **Mob. 7004458358**	XXXXXXXXXX
रायपुर-492009	मित्तल कॉम्प्लेक्स, गंजपारा, तेलघानी नाका चौक (छत्तीसगढ़) **Mob. 9329326200, 7879845886**	✆ (0771) 4034430, 4035310
वाराणसी-221001	59/9, नीचीबाग **Mob. 9839900745, 9140256821**	✆ (0542) 2413551
सूरत-395001	2016, वैभव एपार्टमेन्ट, भटार रोड **Mob. 9374047258, 9723397258**	✆ (0261) 2237362, 2238065
हरिद्वार-249401	सब्जीमण्डी, मोतीबाजार **Mob. 9760275146, 9675721305**	✆ (01334) 222657
हैदराबाद-500095	41, 4-4-1, दिलशाद प्लाजा, सुल्तान बाजार **Mob. 9291205498, 9573650611**	✆ (040) 24758311
काठमाडौं-44600 (नेपाल)	पसल नं० 6,7,8 माधवराज सुमार्गी स्मृति भवन, वनकाली, पशुपति क्षेत्र। **e-mail : gitapress.nepal@gmail.com** **WhatsApp & Mob. +977- 9861493826, 9823490038**	

डाकद्वारा एवं विदेशोंमें पुस्तकें भेजनेकी व्यवस्था केवल गोरखपुरमें है।

गीताप्रेसद्वारा प्रकाशित सभी पुस्तकें Internet के माध्यमसे Online खरीदनेके लिये website : www.gitapress.org एवं gitapressbookshop.in पर login करें। ई-मेलके माध्यमसे भी आर्डर बुक कर सकते हैं
e-mail : **booksales@gitapress.org & online@gitapress.org**

Code 2024